वर्ष-19 अंक (1) जनवरी - जून, 2025

सब्जी किरण

(राजभाषा पत्रिका)

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान
वाराणसी - 221 305 (उत्तर प्रदेश)

सब्जी किरण

(राजभाषा पत्रिका)

वर्ष-19 अंक (1) जनवरी - जून, 2025

सर्वाधिकार
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उ.प्र.)

संरक्षक एवं प्रकाशक
राजेश कुमार, निदेशक

सम्पादक मण्डल

- डी. आर. भारद्वाज
- नीरज सिंह
- सुदर्शन मौर्य
- हरे कृष्ण
- जगेश कुमार तिवारी
- आत्मानंद त्रिपाठी
- इन्दीवर प्रसाद
- रामेश्वर सिंह

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान
पो.बैग नं. 01, पो.आ. जक्खिनी (शाहंशाहपुर)
वाराणसी-221 305 (उ.प्र.)
दूरभाष : 91-542-2635247 / 2635236 / 2635237
फैक्स : 91-5443-229007
ई-मेल : director.iivr@icar.gov.in वेबसाइट : https://iivr.icar.gov.in/

उद्घोषणा

© भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उ.प्र.)

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं।
संस्थान अथवा राजभाषा प्रकोष्ठ का इनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

शुद्ध उद्धरण : डी.आर. भारद्वाज, नीरज सिंह, हरे कृष्ण, जगेश कुमार तिवारी, सुदर्शन मौर्य, इन्दीवर प्रसाद, आत्मानंद त्रिपाठी एवं रामेश्वर सिंह (2025) सब्जी किरण (राजभाषा पत्रिका) 19 (I), भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी, 100 पृष्ठ

अपने लेख एवं सुझाव (यूनीकोड के 14 शब्दाकार में) भेजें
संपादक, सब्जी किरण
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान
पो.आ. जक्खिनी (शाहंशाहपुर)
वाराणसी– 221 305 (उ.प्र.)
ई–मेल : director.iivr@icar.gov.in, वेबसाइटः www.iivr.org.in
मो. : 9415301823, 9935490563

संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्य (वर्ष 2025)

डॉ. राजेश कुमार	अध्यक्ष
डॉ. नागेन्द्र राय	सदस्य
डॉ. अनंत बहादुर	सदस्य
डॉ. अरविन्द नाथ सिंह	सदस्य
डॉ. डी.आर. भारद्वाज	सदस्य
डॉ. जगेश कुमार तिवारी	सदस्य
डॉ. इन्दीवर प्रसाद	सदस्य
डॉ. स्वाति शर्मा	सदस्य
डॉ. सुजन मजूमदार	सदस्य
डॉ. रामेश्वर सिंह	सदस्य
श्री राजेश कुमार राय	सदस्य सचिव

प्रकाशक

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान

पो.बैग नं. 01, पो.आ. जक्खिनी (शाहंशाहपुर)
वाराणसी-221 305 (उ.प्र.)
दूरभाष : 91-542-2635247 / 2635236 / 2635237
फैक्स : 91-5443-229007
ई-मेल : director.iivr@icar.gov.in वेबसाइट : https://iivr.icar.gov.in/

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान
पो.बैग नं. 01, पो.आ. जक्खिनी (शाहंशाहपुर)
वाराणसी-221 305 (उ.प्र.)
ICAR-Indian Institute of Vegetable Sciences
Post Bag No. - 01, Post Office-Jakhini
(Shahanshahpur), Varanasi-221 305 (U.P.)

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
Agrisearch with a human touch

निदेशक की कलम से .....

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी द्वारा सब्जी की उन्नतशील किस्में, फसल उत्पादन, फसल सुरक्षा एवं कटाई उपरान्त प्रबंधन तकनीकी के विकास का लाभ किसानों की आय एवं पोषण सुरक्षा बढ़ाने में हो रहा है। इस दिशा में संस्थान द्वारा विगत छःमाही में 16 किस्मों की संस्तुति की गयी साथ ही साथ अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना (सब्जी फसल) द्वारा तीन संकर किस्में गाजर (वी.आर.सी.ए.आर.एच.-2), फूलगोभी (वी.आर.सी.एफ.एच.-51), लौकी (वी.आर.बी.जी.एच-5) एवं एक मुक्त परागित किस्म लाही (वी.आर.एल.बी.-33) चिन्हित की गयी हैं। फसल उत्पादन एवं फसल सुरक्षा की पाँच तकनीकें नैनो सामग्री का उपयोग करके भारी धातुओं का विषाक्तता कम करना, काशी सूक्ष्म शक्ति प्लस, चेरी टोमैटो रेजिन, काशी सी.आर.बी.-7 एवं बैंगन में कीट नियंत्रण की आइ.पी.डी.एम. की संस्तुति भी संस्थान द्वारा की गयी है। इसी अवधि में बैंगन की संकर किस्म काशी संदेश तथा मुक्त परागित किस्म टमाटर की काशी अमन व मटर की काशी पूर्वी किसानों तक शीघ्र पहुँचाने के लिए निजी कम्पनियों को लाइसेन्स देकर इनके बीज उत्पादन एवं विक्रय का अधिकार दिया गया है। बैंगन के मूलवृन्त पर टमाटर की शाख का कलम लगाकर विकसित किया गया है जो जलभराव की प्रतिरोधी है।

रसायन अवशेष मुक्त सब्जियों के उत्पादन हेतु जैविक खेती की विधियों पर शोध कार्य किया जा रहा है, जिसके अन्तर्गत सब्जी बीजों का उपचार जीवामृत से एवं कीट एवं रोग नियंत्रण के लिये ट्राइकोडर्मा, नीमास्त्र, आग्नेस्त्र, ब्रहमास्त्र पीड़कनाशी आदि का प्रयोग किया जाता है। किसानों को रसायन मुक्त सब्जी उत्पादन करने के लिये समय-समय पर प्रशिक्षण भी दिया जाता है। भारत सरकार रसायन मुक्त सब्जियों को बढ़ावा देने के लिये इनके मूल्य निर्धारण की दिशा में कार्य कर रही है।

भारत सरकार द्वारा चलाये गये 'विकसित कृषि संकल्प अभियान' के अन्तर्गत संस्थान के वैज्ञानिकों ने पूर्वांचल के छः जिलों में लगातार 15 दिनों (29 मई से 12 जून 2025) तक गाँव-गाँव गोष्ठियाँ करके 61 हजार से अधिक किसानों से सीधा संवाद कर संस्थान द्वारा विकसित किस्मों, उत्पादन तकनीकों एवं फसल सुरक्षा तकनीकों के बारे में बताया व उनके प्रक्षेत्र की फसलों का निरीक्षण कर आवश्यक सुझाव दिये।

संस्थान द्वारा सब्जियों की नयी किस्मों का बीज देश के 27 राज्यों के किसानों को उपलब्ध कराया गया जिससे लगभग 1 हजार हेक्टेयर क्षेत्रफल में खेती की गयी। सब्जियों की खेती में अधिकांश किसान सीमित कृषि संसाधन वाले होते हैं इसलिये अपनी आजीविका व पोषण सुरक्षा के लिये संस्थान द्वारा प्रदर्शित तकनीकी आसानी से अपनाते हैं, क्योंकि इन अपनायी गयी तकनीकों से लागत 25 से 30 प्रतिशत कम हो जाती है एवं आय में 35 से 40 प्रतिशत वृद्धि होती है। इस दौरान संस्थान ने विभिन्न विस्तार परियोजनाओं/कार्यक्रमों जैसे फार्मर्स फर्स्ट परियोजना (उत्तर प्रदेश के वाराणसी एवं मिर्जापुर जिलों में संचालित), अनुसूचित जनजाति उपयोजना (उत्तर प्रदेश एवं झारखण्ड में संचालित), अनुसूचित जाति उपयोजना (उत्तर प्रदेश, बिहार एवं पश्चिम बंगाल में संचालित), पूर्वोत्तर पर्वतीय क्षेत्रों हेतु कार्यक्रम (सिक्किम सहित सभी 8 पूर्वोत्तर राज्यों में संचालित), निक्रा परियोजना (उत्तर प्रदेश के वाराणसी मिर्जापुर एवं सोनभद्र जिले में संचालित) आदि के तहत पाँच हजार से अधिक किसानों के मध्य संस्थान के नयी किस्मों एवं तकनीकों के बारे में जागरूकता पैदा की गयी।

सब्जी किरण पत्रिका के इस अंक में सब्जी की नई किस्मों, उत्पादन तकनीकों, फसल सुरक्षा तकनीकों, डिजिटल कृषि, कटाई उपरान्त प्रबंधन, समेकित मत्स्य-वानस्पति पालन प्रणाली में सब्जियों की खेती आदि के बारे में लिखा गया है। पत्रिका का यह अंक किसानों, प्रसार कार्यकर्त्ताओं, छात्रों, प्राध्यापकों, शोध कर्ताओं के लिए उपयोगी साबित होगा।

राजेश कुमार
निदेशक

सब्जी किरण

(राजभाषा पत्रिका)

वर्ष-19 अंक (1) जनवरी - जून, 2025

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय	लेखक	पृष्ठ संख्या
1.	सब्जियों के संकर बीज उत्पादन की तकनीकी	राजेश कुमार एवं रामेश्वर सिंह	1
2.	वाराणसी के किसानों की समस्याएं एवं समाधान का विश्लेषण	रामेश्वर सिंह, नीरज सिंह एवं राजेश कुमार	5
3.	कायिक प्रवर्धित सब्जी फसलों की किस्में	डी.आर. भारद्वाज, केशव कान्त गौतम एवं संदीप कुमार	7
4.	कम समय में अधिक आय के लिए पालक की खेती	अभिषेक एवं प्रदीप कुमार सिंह	12
5.	टमाटर में कीटनाशकों का संतुलित प्रयोग	नीतीश सिंह, दुर्गेश्वर सिंह, शशि शेखर, हिमांशु सिंह एवं अखिलेश मौर्या	14
6.	जैविक कृषिः दशा एवं दिशा	संदीप कुमार, डी. आर.भारद्वाज, केशव कान्त गौतम, अभिनय एवं सुधीर कुमार	16
7.	डीजिटल कृषि	सर्वेश कुमार मिश्रा, शैलेश कुमार तिवारी, आकांक्षा सिंह, सुभाष चन्द्र एवं अनन्त बहादुर	18
8.	मानव पोषण में टमाटर का महत्व	शशि शेखर, शुभम कुमार तिवारी एवं नीतीश सिंह	20
9.	उभरते कीट से सब्जियों की सुरक्षा	सूरज सोनी, उमेश चन्द्रा, हर्षित गुप्ता, राहुल कुमार, शुभम तिवारी एवं प्रजन्या दुबे	22
10.	मिर्च का तुड़ाई उपरान्त प्रबंधन	चंद्रोदय प्रकाश तिवारी, इन्दीवर प्रसाद, सी. एन. राम, आस्तिक झा एवं इन्द्रेश कुमार तिवारी	27
11.	हाइड्रोपोनिक्स से सब्जी उत्पादन	नीतीश सिंह, शुभम कुमार तिवारी, अनूप कुमार सिंह एवं सुनील कुमार सिंह	30
12.	निर्यात योग्य भिण्डी की उत्पादन तकनीक	सौरभ सिंह, प्रदीप कर्मकार, विद्या सागर, हिमांशु सिंह, बृजेश कुमार मौर्य, प्रवीण सिंह, सुनील कुमार सिंह एवं राघवेन्द्र प्रताप सिंह	31
13.	सब्जी फसलों में ग्राउंडनट बड नेक्रोसिस वायरस का प्रकोप एवं प्रबंधन	श्वेता कुमारी, राज किरण, मंजुनाथ गौड़ा टी, प्रताप ए. दिवेकर, के.के. पाण्डेय, ए.एन. सिंह एवं राजेश कुमार	33
14.	टमाटर के रोग व कीट का समेकित प्रबंधन	गौरी जी. लाल, देवराज, ऋतु कुमारी, अनुराग, अखिला मैथ्यू, अभिनय एवं शरद शर्मा	35
15.	अंतरिक्ष में आलू उत्पादनः शोध एवं संभावनाएं	चन्द्रोदय प्रकाश तिवारी, सी.एन. राम एवं आस्तिक झा	37

16.	कद्दूवर्गीय सब्जियों के बीज गिरी का महत्व	डी.आर.भारद्वाज	40
17.	भिण्डी की उपयोगिता	सुनील कुमार सिंह, प्रदीप कर्मकार, विजय बहादुर सिंह चौहान, सौरभ सिंह, परगट सिंह, राघवेन्द्र प्रताप सिंह, अनूप प्रताप सिंह, नीतीश सिंह एवं शुभम तिवारी	41
18.	मेथी का मानव आहार में पोषण एवं औषधीय महत्व	श्रेयांशी सिंह, शशिबाला एवं शिवराज वर्मा	43
19.	पौधशाला मृदा सौर्यीकरण का महत्व	इन्द्रेश कुमार तिवारी, इन्दीवर प्रसाद, राजेश कुमार एवं चंद्रोदय प्रकाश तिवारी	46
20.	कीटनाशकों का पर्यावरण एवं मानव स्वास्थ पर बढ़ते दुष्प्रभाव	रविन्द्र कुमार वर्मा, वी. के. सिंह, भुवनेश्वरी, विपिन कुमार एवं चन्द्रशेखर	47
21.	किसानों के आर्थिक विकास में मधुमक्खी पालन	अजीत प्रताप सिंह, कुलदीप श्रीवास्तव एवं अरविन्द नाथ सिंह	50
22.	समेकित मत्स्य-वनस्पति पालन प्रणाली (एक्वापोनिक्स) में पत्तेदार सब्जियों की खेती	हरे कृष्ण, मुर्तजा हसन, अजित कुमार वर्मा, प्रतिभा साहु, वेनिजा कैथी जॉन, स्वाति शर्मा, राजीव कुमार, श्रेया पंवार, शुभम कुमार तिवारी, अनंत बहादुर एवं राजेश कुमार	55
23.	काशी अनमोल : मिर्च की किस्म का आर्थिक मूल्यांकन	गोविन्द पाल, अभिषेक कुमार पाल एवं कुलदीप श्रीवास्तव	61
24.	कृषि में रोबोटिक्स	शुभम कुमार तिवारी, शशि शेखर, नीतीश सिंह, अभिषेक सिंह, शरद शर्मा, डी. आर. भारद्वाज एवं हरे कृष्ण	64
25.	बदलती जलवायु में सब्जी कीट प्रबंधन	सूरज सोनी, हर्षित गुप्ता एवं उमेश चंद्रा	66
26.	सब्जियों का न्यूनतम प्रसंस्करण	श्रेया पंवार, स्वाति शर्मा, हरे कृष्ण एवं अनंत बहादुर	69
27.	अधिक आय के लिए स्वीट कॉर्न एवं बेबी कॉर्न की व्यवसायिक खेती	अभिनय, सुरेन्द्र नारायण सिंह, संदीप कुमार, नीरज सिंह एवं के.के. गौतम	71
28.	रामनगर जाइण्ट बैंगन की वैज्ञानिक खेती	मिस्बाह फिरदौस, शिवराज कुमार वर्मा एवं आनंद कुमार सिंह	73
29.	मानव आहार में करेला का महत्व	स्वाति शर्मा, श्रेया पंवार एवं अनंत बहादुर	74
30.	भिण्डी की बीज उत्पादन तकनीकी	सौरभ सिंह, प्रदीप कर्मकार, विद्या सागर, बृजेश कुमार मौर्या, हिमांशु सिंह, राजन सिंह, सुनील कुमार सिंह एवं राघवेन्द्र प्रताप सिंह	77
31.	कलमबंध (ग्राफ़्टेड) टमाटर की खेती	भानु प्रकाश सिंह , मनीष कुमार सिंह, श्वेता सोनी, हरिओम सिंह एवं अजीत सिंह	80
32.	हिन्दी : विज्ञान और तकनीक की संचारक भाषा	आत्मानंद त्रिपाठी	83
33.	उपयोगी शब्द कोष		89
34.	संस्थान की गतिविधियाँ		91
35.	समाचार पत्रों से.....		93

सब्जियों के संकर बीज उत्पादन की तकनीकी

राजेश कुमार एवं रामेश्वर सिंह

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

यह सदी इन्द्रधनुषी क्रांति की है। भारत में प्रति व्यक्ति खेती की जमीन आबादी बढ़ने के साथ घटती जा रही है जिसको फसल की उत्पादन एवं उत्पादकता बढ़ाकर पूरा किया जा सकता है। सब्जियाँ अन्य कृषि फसलों से प्रति इकाई क्षेत्रफल अधिक उत्पादन देती हैं जिसके कारण सब्जी बीज उद्योग में बीज गुणवत्ता एवं मात्रा में बहुत परिवर्तन हुआ है। सब्जी उत्पादन का क्षेत्रफल, उत्पादन. पैकिंग, परिवहन, विपणन एवं निर्यात बढ़ने के साथ वैश्विक स्तर पर व्यापार में ध्यानाकर्षण किया है। देश में वर्ष 2023-24 में कुल औद्यानिक उत्पादन का लगभग 60 प्रतिशत सब्जियों का उत्पादन 207.21 मिलियन टन है जो कुल 11.23 मिलियन हेक्टेयर से प्राप्त हो रहा है (कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार)। देश की सब्जी उत्पादकता 18.45 टन/हे. है एवं प्रति व्यक्ति उपलब्धता 250 ग्राम/प्रतिदिन से अधिक हो गयी है। प्रति इकाई क्षेत्रफल से सब्जियों की उत्पादकता बढ़ाने में संकर किस्मों का महत्वपूर्ण योगदान है। संकर किस्में अधिक उत्पादन, रोग प्रतिरोधी, एवं उत्कृष्ट औद्यानिक गुणों वाली होती हैं। इनकी तेजी से वृद्धि के लिये इनब्रेड का गुणवत्तायुक्त बीज, संकर ओज का उपयोग आधुनिक सस्य तकनीकी तथा सरकार की नीतियों को अपनाना आवश्यक है। सब्जियों की उत्पादकता कम होने का सबसे बड़ा कारण संकर किस्मों के गुणवत्तायुक्त बीजों की उपलब्धता में कमी है एवं दूसरा कारण संकर बीजों का मूल्य अधिक होना है। संकर बीज उत्पादन की नवीन तकनीकों का प्रयोग कर लागत घटायी जा सकती है जिससे बीज उद्योग तेजी से बढ़ेगा।

संकर किस्मों से लाभ

1. मुक्त परागित किस्मों की तुलना में संकर किस्मों का उत्पादन प्रति इकाई क्षेत्रफल अधिक होता है।
2. उत्पाद के आकार एवं बनावट में एकरूपता होती है।
3. जैविक एवं अजैविक तनावों के प्रति प्रतिरोधी होती है।
4. बीज उत्पादन से रोजगार में वृद्धि होती है।
5. उत्पाद का स्व-जीवन अधिक होता है।
6. गुणवत्ता अधिक होने के कारण ग्राह्यता बाजार में अधिक होती है।

भारत में संकर किस्मों का विकास

भारत में भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा प्रथम संकर किस्म पूसा मेघदूत (लौकी) का विकास वर्ष 1971 में किया गया। टमाटर एवं शिमला मिर्च की प्रथम संकर किस्म खेती के लिये वर्ष 1973 में उपलब्ध हुयी। इसके बाद भारतीय किसानों में संकर किस्मों के प्रति रूचि बढ़ी जिसके परिणामस्वरूप सरकारी एवं निजी संस्थानों द्वारा बहुत-सी संकर किस्में विकसित की गयी। अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना (सब्जी फसल) द्वारा अभी तक 150 से अधिक संकर किस्मों को देश के विभिन्न सस्य तकनीकी क्षेत्रों में उगाने के लिये चिन्हित किया गया है। सरकारी संस्थानों द्वारा विकसित संकर किस्मों का बीज उत्पादन एम.टी.ए. तथा लाईसेसिंग द्वारा निजी कम्पनियों से किया जा रहा है।

सारिणी-1: सब्जी फसलों की उन्नतशील संकर किस्में

क्र.सं.	फसल	संकर किस्में	संस्थान
1.	टमाटर	काशी अभिमान, काशी तपस, काशी अद्भुत, काशी दक्ष, काशी श्रेष्ठ	आई.सी.ए.आर.-आई.आई.वी.आर., वाराणसी
		पूसा संकर-1, पूसा संकर-2, पूसा संकर-4, पूसा संकर-8, पूसा दिव्या	आई.सी.ए.आर.-आई.ए.आर.आई., नई दिल्ली
		अर्का रक्षक, अर्का अनन्या, अर्का सम्राट, अर्का श्रेष्ठ, अर्का विशाल, अर्का वरदान, अर्का अभिजीत	आई.सी.ए.आर.-आई.आई.एच.आर., बंगलूरू
		पंत संकर-1, पंत संकर-2, पंत संकर-10, पंत संकर-11	जी.बी.पी.यू.ए.टी.,पंतगनर
		राजश्री, फूले संकर-1	एम.पी.के.वी., राहुरी
		टी.एच.12-14	पी.ए.यू., लुधियाना

2.	बैंगन	काशी मनोहर, काशी उत्सव, काशी सन्देश	आई.सी.ए.आर.-आई.आई.वी.आर., वाराणसी
		डी.बी.एच.एल.-20, पूसा संकर-5, पूसा संकर-6, पूसा संकर-9	आई.सी.ए.आर.-आई.ए.आर.आई., नई दिल्ली
		एच.ए.बी.एच.-8	आई.सी.ई.आर.-आर.सी., रांची
		पी.एच.वी.एल.-51, पी.वी.एच.एस.आर.-3, पी.वी.एच.एल.-52, पंजाब रौनक, पी.वी.एच.एल.-56	पी.ए.यू., लुधियाना
3.	मिर्च	काशी रत्ना, काशी तेज, काशी सुर्ख, काशी गरिमा	आई.सी.ए.आर.-आई.आई.वी.आर., वाराणसी
		सी.एच.-1, सी.एच.-3, सी.एच.-27	पी.ए.यू., लुधियाना
		अर्का मेघना, अर्का हरित, अर्का स्वेता, अर्का ख्याति	आई.सी.ए.आर.-आई.आई.एच.आर., बंगलूरू
4.	शिमला मिर्च	पूसा दीप्ती, के.टी.सी.पी.एच.-3	आई.सी.ए.आर.-आई.ए.आर.आई., नई दिल्ली
		पी.आर.सी.एच.-101	यू.यू.एच.एफ., रानीचौरी
5.	खीरा	काशी नूतन	आई.सी.ए.आर.-आई.आई.वी.आर., वाराणसी
		पूसा संयोग	आई.सी.ए.आर.-आई.ए.आर.आई., नई दिल्ली
6.	करेला	पूसा संकर-1, पूसा संकर-2, पूसा संकर-6	आई.सी.ए.आर.-आई.ए.आर.आई., नई दिल्ली
7.	लौकी	काशी बहार	आई.सी.ए.आर.-आई.आई.वी.आर., वाराणसी
		पूसा संकर-3	आई.सी.ए.आर.-आई.ए.आर.आई., नई दिल्ली
		बी.आर.बी.जी.एच.-1	बी.ए.यू., सबौर
		पंत संकर लौकी-1	जी.बी.पी.यू.ए.टी.,पंतगनर
		नरेन्द्र संकर-1	ए.एन.डी.यू.ए.टी., अयोध्या
8.	खरबूजा	पूसा रसराज, डी.एन.एच.-5	आई.सी.ए.आर.-आई.ए.आर.आई., नई दिल्ली
		पंजाब संकर-1	पी.ए.यू., लुधियाना
9.	कुम्हड़ा	काशी शिशिर	आई.सी.ए.आर.-आई.आई.वी.आर., वाराणसी
		पूसा संकर-1	आई.सी.ए.आर.-आई.ए.आर.आई., नई दिल्ली
10.	छप्पन कद्दू	पूसा अलंकार	आई.सी.ए.आर.-आई.ए.आर.आई., नई दिल्ली
11.	तरबूज	अर्का ज्योति	आई.सी.ए.आर.-आई.आई.एच.आर., बंगलूरू
12.	फूलगोभी	पूसा कार्तिक, पूसा संकर-2, पूसा स्नोबाल संकर-1, के.टी.एच.-301, पूसा फूलगोभी संकर-101	आई.सी.ए.आर.-आई.ए.आर.आई., नई दिल्ली
13.	पत्तागोभी	पूसा पत्तागोभी संकर-1, के.टी.सी.बी.एच.-81, के.टी.सी.बी.एच.-822	आई.सी.ए.आर.-आई.ए.आर.आई., नई दिल्ली
14.	गाजर	पूसा वसुधा, पूसा नयन ज्योति	आई.सी.ए.आर.-आई.ए.आर.आई., नई दिल्ली
15.	पेठा	पूसा श्रेयाली, पूसा उर्मी	आई.सी.ए.आर.-आई.ए.आर.आई., नई दिल्ली
16.	चिकनी तोरई	काशी रक्षिता, काशी सौम्या	आई.सी.ए.आर.-आई.ए.आर.आई., नई दिल्ली
17.	भिण्डी	काशी सृष्टि, काशी भैरव	आई.सी.ए.आर.-आई.आई.वी.आर., वाराणसी
18.	नसदार तोरई	अर्का विक्रम	आई.सी.ए.आर.-आई.आई.एच.आर., बंगलूरू
19.	मूली	काशी ऋतुराज	आई.सी.ए.आर.-आई.ए.आर.आई., नई दिल्ली

संकर बीज उत्पादन की विधियाँ

नई तकनीकों से बड़े मात्रा में संकर बीज का उत्पादन विगत कुछ दशकों से बढ़ा है जिससे व्यवसायिक स्तर पर संकर किस्मों की उपलब्धता भी बढ़ी है। संकर बीज उत्पादन की तकनीकों का वर्णन नीचे दिया जा रहा है:

1. हाथ द्वारा विपुंसीकरण एवं परागण

यह विधि उन सब्जियों में अधिक प्रयोग की जाती है जिसमें प्रति परागण अधिक बीज प्राप्त होता है जैसे- बैंगन, टमाटर, भिण्डी, कद्दूवर्गीय सब्जियाँ आदि। इस तकनीकी का प्रयोग छोटे स्तर पर बीज उत्पादन के लिए किया जाता है। इस विधि में पिंचिंग, पराग संग्रहण एवं हस्त परागण के लिए प्रशिक्षित श्रमिकों की आवश्यकता होती है। इस विधि से संस्थान द्वारा टमाटर की काशी तपस, काशी अद्भुत, काशी दक्ष एवं काशी श्रेष्ठ एवं बैंगन की काशी उत्सव, काशी मनोहर एवं काशी सन्देश तथा भिण्डी की काशी सृष्टि एवं काशी भैरव विकसित की गयी है।

- **मादा फूल कली का संरक्षण एवं हस्त परागण**

मादा लाइन की नर फूल की कली को तोड़कर (पिंच करना) निकाल दिया जाता है एवं दूसरे दिन हस्त परागण तकनीकी का प्रयोग करके संस्थान द्वारा खीरा की संकर किस्म काशी नूतन, लौकी की काशी बहार, नेनुआ की काशी रक्षिता एवं काशी सौम्या तथा कुम्हड़ा की काशी शिशिर विकसित की गयी।

संकर बीज उत्पादन के आनुवांशिक विधियाँ

- **जायांगी (गाइनोसियस) लाइनों का प्रयोग:** इस विधि का प्रयोग करके भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा खीरा की 'पूसा संयोग' एवं पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना द्वारा खरबूजा की 'एम.एच.-10' का संकर बीज उत्पादन किया जा रहा है। इस विधि में मादा एवं नर लाइन को 4:1 के अनुपात में बुवाई करते हैं। मादा लाइन में केवल मादा फूल आते हैं। परागण कीट द्वारा होता है। मादा लाइन के संरक्षण के लिए सिल्वर नाइट्रेट की 200 पी.पी.एम. का छिड़काव दो पत्ती अवस्था में करके नर फूल को प्रेरित करते हैं एवं स्व-निषेचन द्वारा पितृ का अनुरक्षण करते हैं। भा.कृ.अनु.प.-भा.स.अनु.संस्थान, वाराणसी व भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा करेला एवं तोरई में जायांगी (गाइनोसियस) लाइनें विकसित की गयी हैं जिसका प्रयोग संकर बीज उत्पादन में किया जा सकता है।
- **नर बंध्यता का उपयोग:** एकलिंगी एवं उभय लिंगी पौधों में जब नर फूल के पराग जीवित नही या बनते नही हैं तो ऐसी लाइन को नर बंध्य लाइन कहते हैं। ऐसी सब्जियाँ जिनमें फूल छोटे होते हैं उनमें विपुंसीकरण कठिन होता है ऐसी सब्जियों जैसे- प्याज, गाजर नर बंध्य लाइन संकर बीज उत्पादन के लिए महत्वपूर्ण है। भा.कृ.अनु.प.-भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बेंगलूरू द्वारा कोशिका द्रव्यी आनुवांशिक लाइन का प्रयोग करके मिर्च की एम.एस.एच.-172, एम.एस.एच.-149 एवं एम.एस.एच.-96 संकर किस्में विकसित की गयी हैं।

गाजर: भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के क्षेत्रीय केन्द्र, कटराइन द्वारा पेटाल्वायड कोशिका द्रव्यी आनुवांशिक नर बंध्यता नान्टस टाइप गाजर में परिवर्तित की गयी है एवं देशी किस्म पूसा यमदाग्नि के संकरण से संकर किस्म पूसा नयन ज्योति विकसित की गयी है।

कद्दू वर्गीय सब्जियाँ: खरबूजा में व्यवसायिक रूप से नर बंध्य का प्रयोग करके संकर किस्में विकसित की गयी हैं।

गोभी वर्गीय सब्जियाँ: भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा कोशिका द्रव्यी नर बंध्यता का प्रयोग करके पत्तागोभी की दो किस्में एच.-64 एवं के.सी.एच.-4 विकसित की गयी हैं।

टमाटर: टमाटर में 55 से अधिक बंध्य एलील्स के कारण स्पोरोजीनस, स्ट्रक्चरल एवं फंक्शनल नर बंध्यता रिपोर्ट की गयी है, जो चार तरह की होती हैं (पराग बंध्य, परागकण रहित, पोजीशनल बंध्यता एवं फंक्शनल बंध्यता) प्रत्येक एक अप्रभावी जीन से नियंत्रित होती है। भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा फंक्शनल बंध्यता लाइन का प्रयोग करके संकर किस्म पूसा दिव्या विकसित की गयी है। नर बंध्यता तीन तरह की होती है:

1. आनुवांशिक नर बंध्यता: सामान्यतः आनुवांशिक नर बंध्यता अप्रभावी न्यूक्लीयर जीन से होती है। इस तरह की बंध्यता पत्तागोभी, फूलगोभी एवं अन्य गोभी वर्गीय सब्जियों में पायी जाती है। इस तरह की बंध्यता एकल अप्रभावी न्यूक्लीयर एलील से नियंत्रित होती है। संकर बीज उत्पादन मेल पैरेण्ट मेल फर्टाइल होता है एवं फीमेल पैरेण्ट नर बंध्य होते है। संकर बीज हेटरोजाइगस होता है। आनुवांशिक नर बंध्यता की रिपोर्ट फूलगोभी, पत्तागोभी एवं अन्य गोभीवर्गीय सब्जियों में की गयी है।

2. कोशिकाद्रव्यी नर बंध्यता: इस तरह की बंध्यता कोशिका में पाये जाने वाले कोशिकाद्रव्य के कारण होती है। चूँकि भ्रूण का कोशिकाद्रव्य अण्ड कोशिका से आता है जिससे संतति नर बंध्य होती है। इस तरह की नर

बंध्यता का प्रयोग ऐसी सब्जियों में करते हैं जिससे बीज प्रबर्धन के लिए वानस्पतिक भाग का प्रयोग किया जाता है भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान में इस विधि का प्रयोग कर के गाजर की संकर किस्म वी.आर.सी.ए.आर.एच.-2, फूल गोभी (मध्य) वी.आर.सी.एफ.एच.-51 एवं मूली की काशी ऋतुराज विकसित की गयी।

3. कोशिकाद्रव्यी आनुवांशिक नर बंध्यता: एक बार प्रभावी अनुरक्षक (रिस्टोरर) जीन जो न्यूक्लीयर जीनोम में उपस्थित रहता है एवं जो कोशिकाद्रव्यी नर बंध्यता लाइन की परागकण उर्वरता के लिये प्रभावी है ऐसी लाइन कोशिकाद्रव्यी आनुवांशिक नर बंध्य होती है। भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी द्वारा नरबन्ध्य लाईन ए-1, ए-2, ए-3, ए-4, ए-6, ए-7, ए-8 एवं ए-9 विकसित की गयी है जो अप्रभावी जीन द्वारा नियंत्रित होती है। इस नर बंध्य लाइनों का प्रयोग करके संकर किस्में काशी रत्ना, काशी गरिमा, काशी तेज एवं काशी सुर्ख का विकास किया गया है।

'तितली महीने नहीं क्षण गिनती है और उसके पास पर्याप्त समय होता है।'

-रबिन्द्रनाथ टैगोर

वाराणसी के किसानों की समस्याएं एवं समाधान का विश्लेषण

रामेश्वर सिंह, नीरज सिंह एवं राजेश कुमार

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान द्वारा उत्तर प्रदेश के वाराणसी जिले में 29.05.2025 से 12.06.2025 तक 'विकसित कृषि संकल्प अभियान' चलाया गया। अभियान को सफल बनाने के लिये जिले के प्रत्येक विकास खण्ड में तीन टीमों का गठन किया गया जिसमें दो संस्थान के वैज्ञानिक एवं दो कृषि विज्ञान केन्द्र के वैज्ञानिक सम्मिलित किये गये जो प्रत्येक दिन तीन गोष्ठियाँ अलग-अलग गाँवों में की। गोष्ठियों का स्थान चयन, बैठने की व्यवस्था एवं किसानों के जलपान की व्यवस्था, उपनिदेशक, कृषि, वाराणसी द्वारा अधीनस्थ कृषि अधिकारियों के सहयोग से किया गया। गोष्ठी के दौरान क्षेत्रीय प्रतिनिधि, जिला मण्डल एवं प्रदेश के अधिकारियों द्वारा गोष्ठी में प्रतिभाग कर केन्द्र एवं प्रदेश सरकार द्वारा चलायी जा रही कृषि योजनाओं से किसानों को जागरूक किया। पखवाड़े भर गोष्ठी के दौरान किसानों द्वारा कृषि में सबसे बड़ी बांधा नील गाय को बताया गया जो कृषि फसलों को खाकर नुकसान पहुंचाते हैं। कुछ गाँवों में सिंचाई के पानी की कमी बतायी गयी। किसानों द्वारा कृषि फसलों की कीट एवं रोग जिसका वे नियंत्रण नही कर पा रहे हैं उसके बारे में बताया जैसे- धान में कण्डुवा, धान की पौधशाला में पौधों का पीला होना, बैंगन में लीटिल लीफ, मूली में फ्ली वीटिल संक्रमण एवं सब्जी की विषाणु जनित बीमारियाँ। संस्थान के वैज्ञानिकों द्वारा धान के कण्डुवा रोग नियंत्रण के लिए फसल चक्र अपनाना, रोग मुक्त बीज का प्रयोग एवं बीज शोधन के उपरांत बुवाई करने की सलाह दी गयी। धान की पौधशाला में पीलापन का कारण संक्रमित बीज एवं मृदा बताया एवं इसके लिये पौधशाला सौर्यीकरण एवं रोग मुक्त बीज के प्रयोग के लिये प्रोत्साहित किया गया। बैंगन में लीटिल लीफ बीमारी के नियंत्रण के लिए शुरूआत में पौधों को उखाड़कर मिट्टी में दबाना एवं रोग प्रसारण कीट लीफ हापर को नियंत्रित करने के लिए नीम गिरी सत् 0.4 प्रतिशत या डाइमेथोएयट 0.2 प्रतिशत का छिड़काव करने के लिए कहा गया। मूली उगाने वाले सभी किसानों ने फ्ली वीटिल की समस्या के निदान के बारे में चर्चा की। संस्थान के वैज्ञानिक द्वारा बताया गया कि फ्ली वीटिल दिन में मिट्टी में छिपा रहता है एवं रात्रि में पत्तों एवं जड़ों को खाकर नुकसान पहुँचाता है। इसलिए जैविक/अजैविक कीट नाशी का छिड़काव सूर्यास्त के

बाद या सूर्योदय के पहले करें। फसल चक्र अपनायें। बुवाई के पूर्व खेत में नीम की खली का प्रयोग करें। किसान विषाणु जनित बीमारियों जैसे-मिर्च एवं टमाटर में लीफ कर्ल, कद्दूवर्गीय सब्जियों में लीफ कर्ल एवं पीला पड़कर सूखना आदि बतायी गयी। गोष्ठी के दौरान वैज्ञानिकों ने बताया कि मिर्च में लीफ कर्ल के तीन कारण होते हैं जैसे-थ्रिप्स, माइट एवं विषाणु संक्रमण। थ्रिप्स संक्रमण को नियंत्रित करने के लिए नीम गिरी सत् 0.4 प्रतिशत या थायोमेथाक्जाम 0.05 प्रतिशत का छिड़काव करें। माइट के नियंत्रण के लिए पत्तियों पर पानी का छिड़काव करें, उसके बाद घुलनशील गंधक 0.2 प्रतिशत का छिड़काव करें। विषाणु जनित बीमारी के लिए रोग प्रतिरोधी किस्मों का प्रयोग करें या शुरूआती अवस्था में संक्रमित पौधों को उखाड़कर मिट्टी में दबा दें। विषाणु फैलाने वाले कीट सफेद मक्खी के नियंत्रण के लिए नीम गिरी सत् 0.4 प्रतिशत या इमिडाक्लोप्रिड 0.05 प्रतिशत का छिड़काव करें। संस्थान के वैज्ञानिकों द्वारा विकसित जैविक विधि से सब्जी उत्पादन करने के लिए की जाने वाली कृषि क्रियाओं के बारे में बताया गया। खेत की मेड़बंदी करें, फसल अवशेष को खेत में मिलाये, नेड्प कम्पोस्ट एवं वर्मीकम्पोस्ट तैयार कर खेत में प्रयोग, पलवार का प्रयोग करें, फसल चक्र में हरी खाद वाली फसल जैसे-ढ़ैचा, सनई, मूंग, उर्द, लोबिया आदि फसल उगाकर जुताई करके मृदा में मिलाने से इसमें कार्बन तथा आवश्यक पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ती एवं पी.एच. मान भी संतुलित रहता है एवं खर-पतवार एवं कीट रोग व्याधियों से होने वाली क्षति में कमी आती है। किसानों को रोग एवं कीटों से सुरक्षा के लिए जैविक कीट एवं रोग नाशियों जैसे-

ट्राइकोडर्मा, ट्राइकोकार्ड, एस.एन.पी.वी., एच.एन.बी.वी., बवेरिया बेसियाना का प्रयोग एवं उनसे होने वाले लाभ के बारे में बताया गया। संस्थान के निदेशक समय-समय पर गोष्ठियों में प्रतिभाग कर संस्थान से विकसित तकनीकों एवं किस्मों की विशेषताओं के बारे में बताया एवं संस्थान से जुड़कर खेती से आय को बढ़ाने के लिये प्रेरित किया। गोष्ठियों के दौरान किसानों के प्रक्षेत्र भ्रमण कर फसलों के रोग एवं कीट संक्रमण को पहचान कर उपचार भी बताया गया। प्रक्षेत्र भ्रमण के दौरान कुछ किसानों से सम्पर्क किया गया जो जैविक विधि से सब्जी उत्पादन करते हैं एवं कीट व रोग नियंत्रण के लिए गौ-मूत्र तथा नीम की पत्ती एवं नीम बीज का सत् का प्रयोग करते हैं एवं उनकी फसलें अच्छा उत्पादन देती हैं। विद्यापीठ ब्लाक के कोरौता गाँव के किसानों द्वारा गाजर की व्यवसायिक खेती की बुवाई अक्टूबर-फरवरी तक प्रत्येक महीने करते हैं जिसकी उपलब्धता जनवरी-जून तक बनी रहती है। ऐसे किसानों का उदाहरण देकर गोष्ठी में जैविक विधि एवं सब्जी की व्यवसायिक खेती के लिए प्रेरित किया गया। कृषि विज्ञान केन्द्र के वैज्ञानिकों ने धान की सीधी बुवाई एवं खर-पतवार नियंत्रण के लिए खर-पतवारनाशी के छिड़काव करने से लागत घटती एवं आय में वृद्धि होती है के बारे में बताया इसके अलावा सब्जियों एवं फलों में कटाई उपरान्त प्रबंधन तकनीकी के बारे में भी बताया एवं बाजार में मूल्य कम होने पर समूह के माध्यम से सब्जियों एवं फलों का संसाधन कर आय में वृद्धि करने के लिए प्रेरित किया गया।

घर में यदि दीपक न जले तो वह दरिद्रता का चिन्ह है। हृदय में ज्ञान का दीपक जलाना चाहिए। हृदय में ज्ञान दीपक जला कर उस को देखो।

– श्री रामकृष्ण परमहंस

कायिक प्रवर्धित सब्जी फसलों की किस्में

डी.आर. भारद्वाज, केशव कान्त गौतम एवं संदीप कुमार

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

सब्जियों की अनेक फसल आलू, शकरकन्द, सूरन, अरवी, कुन्दरू, परवल आदि का वानस्पतिक या कायिक प्रवर्धन किया जाता है। कायिक वरण उन फसलों में किया जाता है जिनका वानस्पतिक प्रवर्धन होता है। समान अनुवांशिक संरचना वाले पादप समूह जो एक पौधे के वर्धीय भाग द्वारा अलैंगिक प्रवर्धन विधि से चयन होता है, कायिक या कृन्तन वरण कहलाता है। एक क्लोन प्रभेद के पौधे से जितने भी कृन्तन प्राप्त होते हैं, सभी के अनुवांशिक गुण समान होते हैं। रतालू/याम एवं सतावरी/एस्परागस स्वभावतः डायोसियस प्रकृति के होते हैं। इसी प्रकार कद्दूवर्गीय सब्जियों में परवल, कुन्दरू, करतोली व ककरोल डायोसियस प्रकृति के होते हैं।

क्लोन के गुण

- एक क्लोन प्रभेद के सभी पौधे जो अलैंगिक जनन से प्राप्त होते हैं, उनमें सूत्री कोशिका विभाजन होता है।
- एक प्रभेद के क्लोन के बीच बाह्य स्वरूप विविधता पूर्णरूप से वातावरणीय प्रभाव के कारण होता है।
- कभी-कभी क्लोन विषाणु या जीवाणु के संक्रमण से विकृत हो जाता है। कभी-कभी क्लोन रोग या कीट के संक्रमण से समाप्त हो सकता है।
- सामान्यतः क्लोन विषमांगी होता है जिससे अन्तः प्रजनन के कारण ओज में बहुत ज्यादा नुकसान होता है।

सारिणी-1 : कायिक प्रवर्धित सब्जी फसलें

सब्जी फसल	वानस्पतिक नाम	खाने वाला भाग	गुणसूत्र (2 एन)
लहसुन	*एलियम सटाइम*	शल्क कन्द	16
पोटैटो ओनियन या मल्टीप्लार ओनियन	*एलियम सेपा वार. एग्रीगैटम*	शल्क कन्द	1
शलाट	*एलियम सेपा वार. स्कैलिनीकम*	पत्तियाँ, शल्क कन्द	16
ट्री ओनियन	*एलियम सेपा वार. विविपैरम*	गूदेदार जड़, शल्क कन्द	16
ग्रेट हेडेड गार्लिक	*एलियम एम्पलोप्रासम वार.एम्पलोप्रासम*	पत्तियाँ, जवा	32, 48
लीक	*एलियम पोरम*	तना, पत्तियाँ	32, 48
चीव	*एलियम पोरम वार. स्कैनोप्रासम*	तना, पत्तियाँ	16, 24, 32
चाईनीज चीव	*एलियम ट्यूबरोसम*	हरी पत्तियाँ, पुष्पक्रम	32
वेल्स ओनियन	*एलियम फिस्चुलोसम*	तना, पत्तियाँ	16
आलू	*सोलेनम ट्यूबरोसम*	कन्द	48
शकर कन्द	*आइपोमीआ बटाटास्*	कन्द	90
कसावा	*मैनीहाट स्कुलांटा*	गूदेदार जड़	36(72)
ग्लोब अर्टीचोक	*साइनारा स्कोलिमस*	कलिका, शल्क, पुष्प, शीर्ष	34
जेरू सलेम अर्टीचोक	*हेलिएन्थस ट्यूबरोसस*	कन्द	102
अरवी	*कोलोकेसिया स्कुलेंटा*	घनकन्द	
ईडोइ टाइप	*कोलोकेसिया स्कुलेंटा वार. एन्टीकोरम*	घनकन्द	28, 42
डसिन टाइप	*कोलोकेसिया स्कुलेंटा वार. ग्लोबुलीफर*	घनकन्द	42
जाइण्ट तारो	*एलोकेसिया मैक्रोरिजा, एलोकेसिया इण्डिका, एलोकेसिया कुकुलाता*	घनकन्द	26, 28

स्वाम्प तारो	*सिरटोस्पर्मा चस्मीसोनिस*	घनकन्द	26
ग्रेटर याम	*डायसकोरिया एलाटा*	कन्द	40
लेसर याम	*डायसकोरिया स्कुलेंटा*	कन्द	40
व्हाइट याम	*डायसकोरिया रोटन्डाटा*	कन्द	40
जिमी कन्द	*एमार्फोफैलस कम्पानुलाटा*	घनकन्द	26, 28
वाटर क्रेस	*नास्ट्रीयम आफिसनैलिस*	कन्द का उपरी भाग, पत्तियाँ	32
वाटर क्रेस	*नास्ट्रीयम मैक्रोफिला*	कन्द का उपरी भाग, पत्तियाँ	64
सहजन	*मोरिंगा ओलिफेरा*	पत्तियाँ, कलिका, पुष्प	28
एस्परागस	*एस्परागस आफिसनैलिस*	स्पीअर	20
रूहर्ब	*रिह्यूम सैपोन्टीकम*	लिफ स्टाक	44
वाटरलीफ	*टैलिनम ट्राइएन्गुलरी*	पत्तियाँ, कोमल शीर्ष	48, 72
थाइमे	*थाइमस वुल्गारिस*	पूरा पौध	30
इण्डिन स्पीनाच	*बसेला एल्बा*	पत्तियाँ	24
चानीज पोटैटो	*सोलेनस्टेमान रोटन्डीफोलियस उपनाम पार्वीफ्लोरस*	कन्द	-
परपल आरा रूट	*कैना इण्डिका*	राईजोम	-
चयोटे	*सिचियम ईडुले*	फल	24
याम बीन	*पैकीराईजस ट्यूबरोस*	कन्दिल जड़	22
परवल	*ट्राइकोसैन्थस डाईयोका*	फल	22
कुन्दरू	*काक्सीनिया कोडिफोलिया*	फल	24
करतोली	*मोमोर्डिका डाइयोका*	फल, जड़	28
ककरोल	*मोमोर्डिका*	फल, जड़	56

संकरण से प्राप्त एफ-1 को वानस्पतिक प्रवर्धन द्वारा उगाया जाता है। प्रथम वर्ष 100-150 पौधों का चयन किया जाता है। द्वितीय वर्ष में छाँटे गये पौधें से कृन्तकों का निर्माण करके व्यक्तिगत संतति उगाई जाती है। तृतीय वर्ष में चयनित संतुतियों को विभेद या 'स्टोन' कहा जाता है तथा देश के विभिन्न भागों में आदर्श चेक के साथ उगाया जाता है तथा जिन स्थानों पर अच्छा प्रदर्शन करते हैं, उन्हें उस स्थान के लिए उन्नतशील किस्म के रूप में संस्तुति प्रदान करते हैं।

सारिणी-2 : कायिक प्रवर्धित सब्जी फसलों की किस्में का विवरण

सब्जियाँ	किस्म	विवरण
शकरकन्द	पूसा सफेद	कन्द सफेद, मध्यम आकार और अच्छे गुणों वाले होते हैं। औसत उपज 24-28 टन/हे. है।
	पूसा लाल	कन्द मध्यम आकार के तथा बीच में मोटे होते हैं। इसके छिलके लाल व गूदा सफेद रंग का होता है। इसकी औसत उपज 23-26 टन/हे. है।
	पूसा सुन्धरी	कन्दों का गूदा नारंगी होता है। इसमें कैरोटिन की मात्रा सबसे ज्यादा पायी जाती है। इसकी औसत उपज 22-25 टन /हे. है।
	श्री अरूण	कन्द शीघ्र पकने वाले, पाक गुणयुक्त, कन्द का छिलका हल्का गुलाबी व गूदे का रंग क्रीमी होता है। फसल की अवधि 90-100 दिनों की और उपज 20-28 टन/हे. है।
	श्री वरूण	कन्द की आकृति गोल छिलका व गूदा का रंग दूधिया सफेद होता है। यह किस्म 90-100 दिनों में तैयार हो जाती है और औसत उपज 20-28 टन/हे. है। यह केरल व बिहार के लिए उपयुक्त किस्म है।
	श्री रेथना	यह किस्म 90-105 दिनों में पक कर खुदाई के लिए तैयार हो जाती है। कन्द का छिलका बैगनी तथा गूदा नारंगी रंग का होता है। कन्द में 3200-3500 आई.यू. कैरोटिन प्रति 100 ग्राम होता है। औसत उपज 20-22 टन/हे. है।

	श्री भद्रा	यह किस्म मात्र 90 दिनों में खुदाई के लिए तैयार हो जाती है। कन्दों का छिलका गुलाबी रंग का तथा गूदा दूधिया सफेद रंग का होता है। कन्दों में कैरोटीन की मात्रा 800-1000 आई.यू./100 ग्राम होती है। औसत उपज 20-22 टन/हे. है।
	श्री कनका	कन्द का आकार बेलनाकार, छिलका लालिमायुक्त तथा पीली सफेद होती है जबकि गूदा नारंगी होता है। कन्द में कैरोटिन की मात्रा 8.8-10.0 मिग्रा. प्रति 100 ग्राम ताजे भार में पायी जाती है। औसत उपज 10.0-15.0 टन/हेक्टेयर है।
	श्री वर्धिनी	यह 110-115 दिनों में पक कर तैयार होने वाली किस्म है जिसे केरल में खेती के लिए उपयुक्त पाया गया है। कैरोटीन की मात्रा 1200 आई.यू. प्रति 100 ग्राम ताजे भार में पाया जाता है उपज 20-25 टन/हे. है।
	श्री नन्दिनी	यह किस्म 100-105 दिनों में पक कर तैयार होती है। यह बहुत ही मीठी किस्म है। औसत उपज 20-25 टन/हे.होती है।
	जवाहर शकरकन्द-145	यह किस्म 135-140 दिनों में पक कर तैयार हो जाती है। कन्द 5-6 के गुच्छों में बनते हैं। कन्द का आकार मध्यम तथा छिलका लाल रंग का होता है। औसत उपज क्षमता 23.5-26.0 टन/हे. होती है।
अरवी/ घुईयाँ/ तारो	श्री रश्मि	कंद रोपण के 205-210 दिनों उपरान्त तैयार होती है। इस किस्म का कन्द बैगनी रंग का होता है। इस किस्म की औसत पैदावार 11-15 टन/हे. है।
	श्री पल्लवी	कंद रोपण के लगभग 205-210 दिनों उपरान्त तैयार हो जाती है। छोटे-छोटे घन कन्द काफी मात्रा में बनते हैं। औसत उपज 16 टन/हे. होती है।
	श्री किरण	यह किस्म 190-210 दिनों उपरान्त पक कर तैयार हो जाती है। इस किस्म की औसत उपज 17.5 टन/हे. होती है।
	पंजाब अरवी-1	घनकन्द मध्यम आकार व भूरे रंग के होते हैं लेकिन गूदा सफेद रंग का होता है। यह किस्म 175 दिनों उपरान्त पक कर तैयार हो जाती है। इस किस्म की औसत उपज 22.5 टन/हे. होती है।
	नरेन्द्र अरवी-1	यह किस्म कन्द रोपण के 140-170 दिनों उपरान्त तैयार हो जाती है। औसत उपज 12-15 टन/हे. है।
	नरेन्द्र अरवी-2	यह किस्म कन्द रोपण के 180-190 दिनों उपरान्त तैयार हो जाती है। इसकी औसत उपज 15-20 टन/हे. है।
सूरन या जिमीकन्द	श्री पद्मा	फसल 8-9 महीनें में पक कर तैयार हो जाती है। कन्द का छिलका भूरे रंग तथा गूदा दूधिया सफेद होता है। इसमें 'कालर राट' नामक बीमारी का प्रकोप कम होता है व औसत उपज क्षमता 80 टन/हे. है।
	श्री अथीरा	फसल 9-10 महीने में पक कर खुदाई के योग्य हो जाती है। कन्द का छिलका भूरा तथा गूदे का रंग गुलाबी होता है। इसमें 'कालर राट' तथा मोजैक बीमारी का प्रकोप बहुत कम होता है। औसत उपज क्षमता 40.5 टन/हे. होती है।
	गजेन्द	कन्द काले-भूरे रंग का सुडौल तथा आकार में बड़ा होता है और गूदा हल्का नारंगी रंग का होता है। कन्द पकाने पर आसानी से गल जाते हैं। इस किस्म की उत्पादन क्षमता 80-100 टन है।
कसावा	श्री सुवर्णा	यह किस्म 7-10 महीने में पक कर तैयार हो जाती है। इसमें कसावा मोजैक वायरस ज्यादा आता है लेकिन सर्कोस्पोरा लीफ स्पाट बहुत कम लगता है। औसत उपज क्षमता 38-40 टन/ हे. तक हो जाती है।
	श्री शक्ति	इस किस्म में कसावा मोजैक वायरस ज्यादा आता है लेकिन सर्कोस्पोरा लीफ स्पाट बहुत कम लगता है। औसत उपज क्षमता 36-39 टन/हे. तक हो जाती है।
	श्री विशाखम	यह किस्म 8-9 महीने में पक कर तैयार हो जाती है व औसत उपज क्षमता 36 -39 टन /हे. तक हो जाती है।
	श्री सह्या	यह किस्म 10 महीने में पक कर तैयार हो जाती है। कन्द उत्तम गुणों वाले व अधिक शुष्क पदार्थ युक्त होते हैं। यह किस्म औद्योगिक दृष्टि से अच्छी है क्योंकि इसमें माड़ की मात्रा अधिक (29-31 प्रतिशत) पायी जाती है। उपज क्षमता 35-40 टन/हे. है।
	श्री प्रकाश	यह 6-7 महीने में पक कर तैयार हो जाती है। कन्द के छिलके का रंग दूधिया तथा गूदा सफेद होता है। औसत उपज 30-35 टन/हे. तक होती है।
	श्री हर्षा	फसल 10 महीने में पक कर तैयार हो जाती है। कन्द के छिलके का रंग दूधिया तथा गूदा सफेद रंग का होता है। इसमें माड़ 38-41 प्रतिशत व साइनोजैन 40-55 पी.पी.एम. होता है। इस किस्म की उपज क्षमता 35-40 टन/हे. है।

	श्री जया	फसल मात्र 6-7 माह में पक कर तैयार हो जाती है। कन्द के छिलके का रंग बैगनी तथा गूदा सफेद होता है। उपज क्षमता 26-30 टन/हे. होता है।
	श्री विजया	फसल 6-7 माह में ही पक कर तैयार हो जाती है। कन्द का छिलका दूधिया सफेद तथा गूदा हल्का पीला होता है।
	श्री रेखा	यह किस्म 8-10 महीनें में पक कर तैयार हो जाती है। इसकी औसत उपज क्षमता 45-48 टन/हे. है।
	श्री प्रभा	मध्यम समय (8-10 माह) में तैयार होने वाली किस्म है। इस किस्म के कन्द का छिलका तथा गूदा हल्का पीला होता है। औसत उपज क्षमता 40-45 टन/हे.है।
	श्री अथुल्या	यह किस्म 10 माह में पक कर तैयार हो जाती है। छिलके का रंग दूधिया तथा गूदे का रंग सफेद होता है। औसत उपज क्षमता 38.7 टन/हे. है।
	श्री अपूर्वा	फसल 10 माह में पककर तैयार हो जाती है। कन्द के छिलके दूधिया तथा गूदे सफेद रंग के होते हैं। औसत उपज क्षमता 38 टन/हे. है।
	श्री पद्मानाभा	इस किस्म को तैयार होने में 270-300 दिन लगते हैं। छिलका एवं गूदा दोनों सफेद रंग का होता है। उपज क्षमता 38 टन/हे. है।
सूथनी/ चायनीज याम	श्री कला	कन्द चिकने, अण्डाकार, छिलका भूरा तथा गूदा सफेद होता है। उपज क्षमता लगभग 20 टन/हे. होती है।
	श्री लता	कन्द चिकने, अण्डाकार, छिलका भूरा तथा गूदा सफेद रंग का होता है। औसत उपज क्षमता 25 टन/हे. तक होती है।
रतालू/ ग्रेटर याम	श्री कीर्थी	छिलके भूरे तथा हल्के पीले कतार वाले व गूदा सफेद होता है। औसत उपज क्षमता 25-30 टन/हे. होती है।
	श्री रूपा	किस्म तैयार होने में 9-10 माह लेती है। औसत उपज क्षमता 25-28 टन/हे. है।
	श्री शिल्पा	फसल मात्र 8 महीनें में पककर तैयार हो जाती हैं। कन्द पूर्ण रूप से फूले हुए, अण्डाकार, चिकने, छिलका काला, पीली कार्टेक्स तथा गूदा सफेद होता है। औसत उपज क्षमता 28 टन/हे. है।
	श्री कार्थिका	फसल 9 महीने में पक कर तैयार हो जाती है। कन्द मध्यम लम्बे, अण्डाकार, जिनमें भूरे-काले, नारंगी कार्टेक्स होता है तथा गूदा सफेद होता है। औसत उपज क्षमता 30 टन/हे. होती है।
व्हाइट याम	श्री प्रिय	फसल लगभग 9-10 माह मे पककर तैयार हो जाती है। कन्द बेलनाकार, चिकना, कन्द का छिलका भूरा तथा गूदा सफेद होता है। औसत उपज 35 टन/हे. होती है।
	श्री शुभ्रा	कन्द बेलनाकार तथा आंशिक रूप से रोयेंदार होती हैं। कन्द का छिलका भूरा तथा गूदा सफेद रंग का होता है। औसत उपज 35-40 टन/हे. है।
	श्री धन्या	फसल सामान्यतः 9 महीनें में पककर तैयार हो जाती है। यह एक अत्यन्त बौनी (30-35 सेमी. लम्बी) किस्म है। कन्द का छिलका भूरा तथा गूदा सफेद रंग का होता है।
	श्री धारा	फसल 5 महीने में तैयार हो जाती है। इस किस्म का औसत उत्पादन 25 टन/हे. है। कन्द स्वादयुक्त व पकाने पर जल्द खाने योग्य हो जाता है।
परवल	काशी अलंकार	इस किस्म के फल हल्के हरे रंग के होते हैं। खाने योग्य फलों में बीज काफी मुलायम रहता है। इस किस्म की पैदावार 18-19 टन/हे. है।
	काशी सुफल	अधिक उपज देने वाली किस्म है। इसके फल सफेद धारीदार के साथ हल्के हरे रंग के होते हैं । इस किस्म के फल मिठाई बनाने के लिए उपयुक्त है एवं पैदावार 19-20 टन/हे. है ।
	काशी अमूल्य	इस किस्म के फल हल्के हरे, लम्बाई में सफेद धारियाँ, बीज बहुत कम (4-8 बीज/फल), फल भार (40-45 ग्राम), लम्बाई (8.5-9.0 सेमी.) एवं व्यास (3.5-3.75 सेमी.) होती है। यह किस्म मिठाई बनाने के लिए उपयुक्त है । उपज 20-21 टन/हे. है।
	काशी परवल.141	इस किस्म के फल धारीदार, 30-40 ग्राम वजन, 8-10 सेमी. लंबा तथा 2.75-3.00 सेमी. व्यास एवं हल्के हरे रंग के होते हैं । प्रति पौध औसत उपज11-12 किग्रा. एवं सकल उपज 22.5-23.0 टन/हे. होती है ।
कलमी साग	काशी मनु	पौध पर गहरे हरे रंग की चौड़ी अण्डाकार (ओवेट) पत्तियाँ विकसित होती है जिनकी कटाई पौध रोपण के 25-30 दिनों उपरान्त की जाती है। सामान्यतः कटाई 10-15 दिनों के अंतराल पर वर्ष भर की जाती है। यह किस्म पत्ती धब्बा (लीफ स्पाट) बीमारी के प्रति प्रतिरोधी है। उपज 69 टन/ हे. है।

लहसुन	यमुना सफेद (जी-1)	इसकी गांठे सख्त और सफेद होती हैं और कलियाँ द्राती के आकार की होती हैं और प्रत्येक गांठ में 25-30 कलियाँ होती हैं। यह किस्म 155-160 दिन में तैयार हो जाती है। इसकी उपज 15-18 टन/ हे. है। यह किस्म परपल ब्लाच रोग से अवरोधी है।
	पंजाब लहसुन	इसकी गांठ तथा कली उजले रंग की होती है। इसकी उपज क्षमता 9-10 टन/ हे. है।
	लहसुन 56-4	इसके गांठ लाल रंग का होता है। इसके प्रत्येक गांठ में 25-35 कलियाँ होती हैं। यह 150-160 दिन में तैयार हो जाती है जबकि इसकी औसत उपज 8-10 टन/हे. है।
	यमुना सफेद-2 (जी-50)	इस किस्म की गांठें सख्त और सफेद होती हैं और प्रति गांठ 35-40 कलियाँ होती हैं। इस किस्म को तैयार होने में 160-170 दिनों का समय लगता है। उपज 13-15 टन/हे. है।
	यमुना सफेद-3 (जी-282)	गांठें सफेद, कलियाँ क्रीम रंग की और आकार में बड़ी होती हैं और प्रति गांठ 15-16 कलियाँ विकसित होती हैं। प्रत्येक गांठ की मोटाई 1.04-1.05 सेमी. होती है। यह किस्म 140-150 दिनों में तैयार हो जाती है। उपज 17.5-20.0 टन/हे. होती है।
	एग्रीफाउण्ड पार्वती	यह किस्म पहाड़ी क्षेत्र के लिए ज्यादा उपयुक्त है। गांठ (बल्व) बड़े आकार तथा क्रिमी सफेद रंग के होते हैं। प्रति गांठ में 10-16 कलियाँ विकसित होती हैं। फसल तैयार होने में 160-165 दिनों का समय लगता है और उपज क्षमता 17.5-22.5 टन/हे. होती है।
कुंदरू	काशी भरपूर (वी.आर.एस.आई.जी.)	इस किस्म के फल आकर्षक हल्के हरे, अण्डाकार एवं हल्की सफेद धारीयुक्त होते हैं। रोपण के 45-50 दिनों उपरान्त पौधों पर फल विकसित होने लगते हैं। इस किस्म से प्रति पौध 20-25 किग्रा. फल प्राप्त किया जा सकता है। इस किस्म की उत्पादन क्षमता 30-40 टन/हे. है।
	इंदिरा कुंदरू-5	इस किस्म के फल हल्के हरे, अण्डाकार; फल की लम्बाई 4.30 सेमी. एवं व्यास 2.60 सेमी. होता है। यह एक अधिक उपज देने वाली किस्म है। इस किस्म से 21 किग्रा. फल प्रति पौधा प्राप्त किया जा सकता है। इसकी उत्पादन क्षमता 40.0-42.5 टन/हे. है।
	इंदिरा कुंदरू-35	इस किस्म के फल लम्बे 6 सेमी., हल्के हरे तथा फल व्यास 2.43 सेमी. होता है। इस किस्म से 22 किग्रा. फल प्रति पौध प्राप्त किया जा सकता है। उपज 40-45 टन/हे. होता है।

किसी चीज का दुरूपयोग करना उसके खोने से भी ज्यादा बुरा है। वह वक्त आ ही रहा है जब हर वह इन्सान जो योग्य होने का दावा करता है, अपने सामने दुरूपयोग के सवाल को निरंतर रखेगा। बचत का क्षेत्र असीम है।

-थॉमस अल्वा एडिसन

कम समय में अधिक आय के लिए पालक की खेती

अभिषेक एवं प्रदीप कुमार सिंह
महाराणा प्रताप बागवानी विश्वविद्यालय, करनाल, हरियाणा

यह फसल कम समय और कम लागत पर अच्छा लाभ देती है। फसल की एक बार बुआई में 4-5 बार कटाई की जा सकती है। परन्तु बीज उत्पादन के लिए 2 ही बार कटाई की जाती है। पालक के पत्तों के अन्दर प्रोटीन, खनिज तत्व, कैल्शियम, लौह तत्व, फास्फोरस, पोटाश व विटामिन 'ए' और 'सी' पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होता है। पालक को ठंडी जलवायु की आवश्यकता होती है। ठंड में पत्तियों की बढ़वार अधिक होती है। परन्तु माध्यम जलवायु में इसको साल भर भी उगाया जा सकता है। पालक के लिए बलुई दोमट भूमि उपयुक्त है जिसका पी.एच. मान 6-7 की बीच का अच्छा होता है परन्तु इसको सभी प्रकार की भूमि में भी उगाया जा सकता है। भूमि को 3-4 बार जुताई करके तैयार किया जाता है। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा लगाया जाता है जिससे मिट्टी भुरभरी व समतल हो जाती है।

उन्नतशील किस्में

- **काशी बारहमासी:** काशी बारहमासी पालक की एक महत्वपूर्ण, साल-भर खेती योग्य और उच्च-उपज देने वाली उन्नत किस्म है। यह किस्म अधिकतम तापमान 40-45 डिग्री सेन्टीग्रेड और उच्च आर्द्रता को सहन करती है। इसकी पत्तियाँ आकर्षक, चिकनी, हरी, चमकदार तथा एक समान किनारे वाला होती हैं। काशी बारहमासी उच्च-गर्मी और आर्द्र स्थितियों को सहन करने, व्यापक अनुकूलन क्षमता और विलंबित बोल्टिंग के कारण पूरे वर्ष (ठंड, वसंत, ग्रीष्म, बरसात और शरद ऋतु) खेती के लिए उपयुक्त है। फसल बीज बुवाई के 25-30 दिनों बाद प्रथम कटाई के लिए तैयार हो जाती है तत्पश्चात् 15-15 दिनों के अन्तराल पर 6-8 कटाई की जाती है। फसल चक्र के लिए सर्वोत्तम है। यह एस्कॉर्बिक एसिड (65-75 मिग्रा./100) का अच्छा स्रोत है और इसमें 15-16 प्रतिशत शुष्क पदार्थ होता है। औसत उपज 250-750 कुन्तल प्रति हेक्टेयर होता है।
- **ऑल ग्रीन:** इस किस्म के पौधे एक समान हरे, पत्तियाँ मुलायम और 15-20 दिनों के अन्तराल पर कटाई के लिए तैयार हो जाती हैं। इसकी 6-7 कटाई आसानी से की जा सकती है। यह एक अधिक उपज देने वाली किस्म है। इसमें सर्दी के दिनों में करीब ढाई महीने बाद बीज और

डंठल आते हैं। इसकी औसत उपज 19.25 टन/ हे. है।

- **पूसा पालक:** इस पालक की किस्म को 'स्विसचार्ड' से संकरण कर विकसित किया गया है। इसमें एक समान हरे पत्ते आते हैं। इसमें जल्दी से फूल वाले डंठल बनने की समस्या नहीं आती है।
- **पूसा हरित:** इस किस्म को पहाड़ी क्षेत्रों में पूरे वर्ष उगाया जा सकता है। इसके पौधे ऊपर की तरफ बढ़ने वाले, ओजस्वी, गहरे हरे रंग और बड़े आकार वाले होते हैं। इसकी कई बार कटाईयाँ की जा सकती हैं। इसमें बीज बनाने वाले डंठल देर से निकलते हैं। इस किस्म को विभिन्न प्रकार की जलवायु और क्षारीय भूमि में भी आसानी से उगाया जा सकता है।
- **पूसा ज्योति:** यह एक प्रभावी किस्म है। जिसमें काफी संख्या में मुलायम, रसीली तथा बिना रेशे की हरी पत्तियाँ आती हैं। पौधे काफी बढ़ने वाले होते हैं जिससे कटाई बहुत कम अन्तराल पर की जा सकती है। इस किस्म में ऑल ग्रीन की अपेक्षा पोटैशियम, कैल्शियम, सोडियम तथा एस्कार्बिक अम्ल की मात्रा अधिक पाई जाती है। इस किस्म की कुल 6-7 कटाईयाँ आसानी से की जा सकती हैं।
- **जोबनेर ग्रीन:** इस पालक किस्म में एक समान हरे, बड़े, मोटे, रसीले तथा मुलायम पत्ते आते हैं। पत्ती पकाने पर आसानी से गल जाती है। इस किस्म को क्षारीय भूमि में भी उगाया जा सकता है। इसकी औसत उपज 19.76 टन/हे. होती है यह किस्म 7.0-10.5 पी.एच. वाली मिट्टी में भी अच्छी चलती है।

- **हिसार सेलेक्शन-23:** इसकी पत्तियाँ बड़ी, गहरे हरे रंग की मोटी, रसीली और मुलायम होती हैं। यह एक कम समय में तैयार होने वाली किस्म है। इसकी पहली कटाई बुआई के 30 दिनों बाद शुरू की जा सकती है और 6-8 कटाईयाँ 15 दिनों के अंतर पर आसानी से की जा सकती हैं।
- **बनर्जी जाइंट:** इस पालक किस्म के पत्ते काफी बड़े, मोटे तथा मुलायम होते हैं। इसके तने और जड़ें भी काफी मुलायम होती है।
- **पंजाब ग्रीन:** इसकी पत्तियाँ चमकीली व गहरे हरे रंग की मिट्ठी होती है व कड़वापन भी नहीं होता है। टहनियाँ मोटी व लंबी जिन पर गुलाबी धारियाँ होती हैं।

बीज की मात्रा व बुआई की विधि: इसके लिए बीज की मात्रा 8-10 किग्रा./एकड़ पर्याप्त होती है। इसकी बुआई पंक्तियों/कतार में करें। कतार से कतार की दूरी 20 सेमी. और पौधे से पौधे की दूरी 5 सेमी. रखते हैं। बीज को 2-3 सेमी. की गहराई पर बोना चाहिए। बीज उत्पादन के लिए कतार से कतार की दूरी 40 सेमी. और पौधे से पौधे की दूरी 10 सेमी. रखें। बुआई के बाद एक हल्की सिंचाई करें। इसके बाद सिंचाई 8-10 दिनों के अंतराल पर आवश्यकतानुसार करें।

खाद व उर्वरक: इसके लिए 20 टन गोबर की सड़ी खाद, 32 किग्रा. नत्रजन तथा 16 किग्रा. फास्फोरस प्रति एकड़ की आवश्यकता है। गोबर की खाद व फास्फोरस और आधी नत्रजन को अन्तिम जुताई के समय खेत में देनी चाहिए और नत्रजन की बाकी मात्रा को कटाई के बाद डाल दें।

सिंचाई प्रबंधन: यदि बुआई के समय क्यारी में नमी की कमी हो तो बुआई के तुरंत बाद एक हल्की सिंचाई कर दें। इसमें अधिक पानी की आवश्यकता होती है। अतः समय-समय पर सिंचाई करते रहें। जाड़ों की फसल के लिए 8-10 दिनों के बाद तथा जायद की फसल की सिंचाई हल्की-हल्की 2-3 दिनों में करते रहना अति आवश्यक है। खेत में नमी के अनुसार 2-3 दिनों के बाद तथा जायद की फसल के लिए रोज शाम को ध्यान से पानी देते रहना चाहिए। पानी देते समय ध्यान रहे कि खेत में लगे पौधे टूटे नही और फव्वारे से ऊपर की तरफ से पानी नही देना चाहिए।

अन्य कृषि क्रियायें: फसल की प्रारम्भिक अवस्था में 2- 3 बार निराई-गुडाई करने से खर-पतवार नष्ट हो जाते हैं।

खेत का निरीक्षण: पालक के खेत को फसल के दौरान फूल तथा बीज बनने की अवस्था में निरीक्षण करना चाहिए। इसमें दूसरी किस्म के पौधे तथा रोग ग्रस्त पौधों को उखाड़कर खेत से बाहर फेंक देने चाहिए।

फसल की कटाई: फसल की पहली कटाई 30-35 दिनों के बाद की जाती है। इसके बाद 15-20 दिनों के अन्तर पर कटाई की जाती है।

उपज: पालक की पत्तियों की औसत पैदावार 32-40 कुन्तल प्रति एकड़ होती है और बीज की 4-5 कुन्तल प्रति एकड़ होती है।

कीट प्रबंधन

चेपा: इसका संक्रमण दिखाई दें तो मैलाथियॉन 50 ई.सी. 350 मिली. को 80-100 लीटर पानी में मिलाकर स्प्रे करें। मैलाथियॉन की छिड़काव के बाद तुरंत कटाई न करें। स्प्रे के 7 दिनों के बाद कटाई करें।

रोग प्रबंधन

पत्तों पर गोल धब्बे: पत्तों पर छोटे गोलाकार धब्बे दिखाई देते हैं, बीच से सलेटी और लाल रंग के धब्बे पत्तों के किनारों पर दिखाई देते हैं। बीज फसल में यदि इसका प्रकोप दिखाई दें तो कार्बेन्डाजिम 400 ग्राम या इंडोफिल एम-45, 400 ग्राम को 150 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ में छिड़काव करें। यदि आवश्यकता हो तो दूसरी छिड़काव 15 दिनों के अंतराल पर करें।

टमाटर में कीटनाशकों का संतुलित प्रयोग

नीतीश सिंह, *दुर्गेश्वर सिंह, शशि शेखर, **हिमांशु सिंह एवं अखिलेश मौर्या

भा.कृ.अनु.प.-भा.स.अनु.सं., वाराणसी, *दी.द.उ. गो. वि.वि., गोरखपुर (उत्तर प्रदेश) **कृ.वि. कें., नरकटियागंज, पश्चिम चंपारण

टमाटर में अत्यधिक कीटनाशक के उपयोग से कई प्रतिकूल प्रभाव हो सकते हैं, जिनमें फाइटोटॉक्सिसिटी, अवशेष संचय, कीट प्रतिरोध और पारिस्थितिक असंतुलन शामिल हैं। इन प्रभावों को कम करने के लिए, एक व्यापक दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है जो निवारक उपायों, वैकल्पिक रोग कीट नियंत्रण रणनीतियों और सावधानीपूर्वक कीटनाशक प्रबंधन पर जोर देता है। टमाटर के पौधों में उच्च कीटनाशक खुराक के परिणामों को प्रभावी ढंग से प्रबंधित करने का तरीका यहाँ बताया गया है।

1. कीटनाशक के अधिक प्रयोग से होने वाले दुष्प्रभाव

फाइटोटॉक्सिसिटी: कीटनाशकों की उच्च खुराक फाइटोटॉक्सिसिटी का कारण बन सकती है, जहाँ रसायन टमाटर के पौधों को नुकसान पहुंचाता है जिससे पत्तियों का झुलसना, हरिमाहीनता, विकास में रुकावट और फलों की विकृति जैसे लक्षण दिखाई देते हैं। फाइटोटॉक्सिक प्रभाव उपज और गुणवत्ता को काफी कम कर देते हैं।

अवशेष संचय: अत्यधिक कीटनाशक के उपयोग से टमाटर में हानिकारक अवशेषों का संचय होता है जिससे उपभोक्ताओं के लिए स्वास्थ्य जोखिम पैदा हो सकता है। ये अवशेष मिट्टी में भी बने रह सकते हैं जिससे बाद की फसलें प्रभावित हो सकती हैं।

कीट प्रतिरोधता: कीटनाशकों के अत्यधिक उपयोग से प्रतिरोधी कीटों की आबादी ज्यादा हो सकती है जिससे भविष्य में नियंत्रण के प्रयास अधिक चुनौतीपूर्ण हो सकते हैं और रसायनों की अधिक खुराक की आवश्यकता हो सकती है।

पर्यावरणीय प्रभाव: कीटनाशक अप्रवाह के माध्यम से जल स्रोतों को दूषित कर देते हैं जिससे जलीय जीवन को नुकसान पहुँचाता है और पारिस्थितिकी तंत्र को बाधित कर सकते हैं। परागणकर्ता और प्राकृतिक शिकारी जैसे लाभकारी जीव भी प्रतिकूल रूप से प्रभावित हो सकते हैं।

2. एकीकृत कीट प्रबंधन: रसायनिक कीटनाशकों पर निर्भरता को कम करने और उच्च खुराक के प्रभाव को प्रबंधित करने के लिए एकीकृत कीट प्रबंधन को अपनाना चाहिए। एकीकृत कीट प्रबंधन में रसायनिक उपयोग को कम करते हुए कीट आबादी को हानिकारक स्तरों से नीचे रखने के लिए कई नियंत्रण विधियों को संयोजित करना शामिल है।

3. सस्यगत निवारक उपाय: फसल चक्र को अपनाने, कीट प्रतिरोधी टमाटर की किस्मों का चयन करना और उचित क्षेत्र स्वच्छता बनाये रखने से कीटों के प्रकोप को रोका जा सकता है। जैसे- गैर-सोलेनेसियस फसलों को फसल चक्र में शामिल करें।

4. जैविक नियंत्रण: प्राकृतिक शिकारियों, परजीवियों और लाभकारी सूक्ष्मजीवों का उपयोग करके उच्च कीटनाशक खुराक की आवश्यकता के बिना कीटों की आबादी को नियंत्रित करने में मदद मिल सकती है। एफीड के नियंत्रण हेतु लेडी बग जैसे-शिकारियों को पेश करना व कैटरपिलर प्रबंधन के लिए *बैसिलस थुरिंजिएंसिस* (बीटी) का उपयोग करना प्रभावी है।

5. यांत्रिक और भौतिक नियंत्रण: कीटों को हाथ से चुनना, चिपचिपे जाल (स्ट्रिकी ट्रैप) का उपयोग करना और भौतिक अवरोध जैसी तकनीकें कीटों के दबाव को कम कर सकती हैं।

6. कीटनाशकों का विवेकपूर्ण उपयोग: कीटनाशक का उपयोग आवश्यक हो तो इसे कीटों की निगरानी और आर्थिक सीमाओं के आधार पर किया जाना चाहिए। रसायनों के बजाय, विशिष्ट क्रिया विधियों वाले लक्षित कीटनाशकों का उपयोग करने से गैर-लक्षित जीवों को नुकसान पहुँचाने का जोखिम कम हो जाता है और अवशेषों का स्तर कम हो जाता है।

अधिक मात्रा में कीटनाशी प्रयोग का दुष्प्रभाव एवं दूर करने के उपाय

उच्च कीटनाशक खुराक के प्रभाव को रोकने और प्रबंधित करने के लिए टमाटर के पौधों और मृदा स्वास्थ्य की नियमित निगरानी महत्वपूर्ण है।

मृदा परीक्षण: समय-समय पर मृदा परीक्षण करने से कीटनाशक अवशेषों का पता लगाने और मृदा स्वास्थ्य का आंकलन करने में मदद मिल सकती है। परिणामों के आधार पर, मृदा संरचना में सुधार और अवशेषों के प्रभाव को कम करने के लिए कार्बनिक पदार्थ या जिप्सम जैसे मृदा संशोधन जोड़े जा सकते हैं।

पौधों के स्वास्थ्य की निगरानी: फाइटोटॉक्सिसिटी या

तनाव के शुरुआती लक्षणों के लिए टमाटर के पौधों का निरीक्षण करने से समय पर हस्तक्षेप करने की अनुमति मिलती है। पौधों का मुरझाना, पत्ती का रंग बदलना या असामान्य वृद्धि पैटर्न।

अवशेष परीक्षण: काटे गए टमाटरों पर अवशेष विश्लेषण करने से यह सुनिश्चित होता है कि कीटनाशक का स्तर सुरक्षित सीमा के भीतर है। यह विशेष रूप से ताजा खपत या निर्यात के लिए टमाटर के लिए महत्वपूर्ण है, जहाँ सख्त अवशेष मानक लागू होते हैं।

शिक्षण कार्यक्रम: कीटनाशक के दुरुपयोग को कम करने के लिए उच्च कीटनाशक खुराक और उचित आवेदन तकनीकों से जुड़े जोखिमों पर किसानों और कृषि श्रमिकों को शिक्षित करना आवश्यक है।

प्रशिक्षण कार्यक्रम: विस्तार सेवाओं और कृषि संगठनों को एकीकृत कीट प्रबंधन, कीटनाशक सुरक्षा और अवशेष प्रबंधन पर प्रशिक्षण प्रदान करना चाहिए। सही मात्रा, प्रयोग का समय और सुरक्षात्मक उपायों को समझना कीटनाशक के अत्यधिक उपयोग के जोखिम को काफी कम करता है।

विकल्पों के बारे में जागरूकता: वैकल्पिक रोग कीट नियंत्रण विधियों जैसे-जैव कीटनाशकों, जैविक खेती प्रथाओं और यांत्रिक नियंत्रणों के बारे में जागरूकता को बढ़ावा देना, रासायनिक कीटनाशकों पर निर्भरता को कम करने में मदद करता है।

रिकॉर्ड-कीपिंग: उत्पाद प्रकार, खुराक और समय सहित कीटनाशक अनुप्रयोगों के विस्तृत रिकॉर्ड बनाए रखना, कीटनाशक के उपयोग को बेहतर ढंग से ट्रैक करने में सक्षम बनाता है और कीट प्रबंधन प्रथाओं में सुधार के क्षेत्रों की पहचान करने में मदद करता है।

हम केवल अपने लिए ही उपलब्धियों की चाह नहीं कर सकते और उपने समाज की उन्नति और समृद्धि के बारे में भूल सकते। हमारी अभिलाषा इतनी बड़ी अवश्य होनी चाहिए ताकि दूसरों की आकांक्षा और जरूरत भी शामिल हो सके, उनके लिए भी और हमारे लिए भी

-केसर चावेज

जैविक कृषि: दशा एवं दिशा

संदीप कुमार, डी. आर.भारद्वाज, केशव कान्त गौतम, अभिनय एवं सुधीर कुमार

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

जैविक कृषि के विकास की दिशा में नवीनतम प्रवृत्तियाँ और संभावनाएँ अत्यधिक हैं। इस प्रकार की कृषि जिसमें रसायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का उपयोग नहीं किया जाता है, पर्यावरण के लिए बेहद फायदेमंद है। किसानों के लिए जैविक खेती न केवल आर्थिक रूप से लाभकारी हो रही है, बल्कि यह उपभोक्ताओं द्वारा भी धीरे-धीरे अधिक पसंद की जा रही है। हाल के वर्षों में, जैविक उत्पादों की माँग में वृद्धि हुई है जिससे किसानों के उत्पादों को बाजार में बेहतर मूल्य पर बेचने का अवसर मिल रहा है। इसके अलावा, नई तकनीकों का उपयोग जैसे-रिवर्स ऑस्मोसिस, बायोफर्टिलाइजर्स एवं समेकित कीट प्रबंधन ने जैविक कृषि को और अधिक प्रभावशाली बनाया है। पर्यावरणीय सुरक्षा और स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए, सरकारें भी जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न योजनाएँ और सब्सिडी प्रदान कर रही हैं।

विकसित खेती के सिद्धांत: उच्च गुणवत्ता वाले खाद्य पदार्थों का पर्याप्त मात्रा में उत्पादन करना। कृषि प्रणाली में जैविक चक्रों को प्रोत्साहित और सुधारने के लिए सूक्ष्म जीवों, मिट्टी की वनस्पति और जीव-जंतु, पौधों एवं जानवरों को शामिल करना। मिट्टी की दीर्घकालिक उर्वरता को बनाये रखना और बढ़ाना। उत्पादन प्रणाली और इसके आस-पास की जैव विविधता को बनाये रखने के लिए वन्यजीवों के आवासों की सुरक्षा आवश्यक है। स्थानीय रूप से संगठित उत्पादन प्रणालियों में नवीनकरण संसाधनों का उपयोग अधिकतम संभव सीमा तक करना। सभी प्रकार के प्रदूषण को कम करना।

प्रमाणन एजेंसिया: भारतीय जैविक खेती संघ (ओ.एफ.ए.आई.), राष्ट्रीय जैविक उत्पादन कार्यक्रम (एन.पी.ओ.पी.), जैविक उत्पादों के प्रमाणीकरण के लिए भारतीय सोसायटी (आई.एस.सी.ओ.पी.), श्रेष्ठा नेचुरल बायोप्रोडक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड (एस.एन.बी.पी.एल), स्केल निरीक्षण और प्रमाणन एजेंसी (एस.आई.सी.के.), आई.एम.ओ. कंट्रोल प्रा. लिमिटेड, इकोसर्ट इंटरनेशनल, बायो-इंस्पेक्ट्रा, एस.जी.एस. इंडिया प्रा. लिमिटेड, लैकोन, निष्पक्ष व्यापार के लिए अंतर्राष्ट्रीय संसाधन (आई.आर.एफ.डी.), वन सर्टिफिकेट एशिया एवं राष्ट्रीय जैविक प्रमाणन संघ (एनओसीए) से सम्पर्क स्थापित करना चाहिए।

जैविक खेती का प्रचलन: जैविक खेती प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करते हुए फसलों की उत्पादकता की बढ़ोत्तरी में सहायक है। जैविक खेती में रसायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का उपयोग नहीं किया जाता है जिससे मिट्टी की सेहत हमेशा अच्छी रहती है। मिट्टी में जीवाणु सक्रियता को बढ़ाती है और पारिस्थितिकी तंत्र को संतुलित रखने में मदद करती है। साथ ही, जैविक उत्पादों के प्रति उपभोक्ताओं की रुचि बढ़ रही है। लोग अब खान-पान में स्वास्थ्य के प्रति सजग हो रहे हैं। इसलिए किसान अब जैविक तरीकों को अपनाकर कम लागत के द्वारा खेती करने में रुचि ले रहे हैं।

जैविक उत्पादों के लिए उपभोक्ता की बढ़ती मांग

- **स्वास्थ्य:** स्वास्थ्य को प्राथमिकता देने वाले लोगों की संख्या बढ़ने के साथ, जैविक उत्पादों की मांग में वृद्धि हो रही है, जिन्हें सिंथेटिक रसायनों और कीटनाशकों की अनुपस्थिति के कारण अधिक स्वास्थ्यवर्धक माना जाता है। यह विशेष रूप से युवा उपभोक्ताओं के बीच अधिक प्रचलित है जो भोजन की गुणवत्ता और सुरक्षा को लेकर चिंतित हैं।
- **पर्यावरण:** उपभोक्ता अब पारंपरिक कृषि के पर्यावरणीय प्रभावों जैसे- कीटनाशकों का पानी के साथ बहाव, मिट्टी के क्षय और जैव विविधता के ह्रास के प्रति अधिक सजग हो रहे हैं। बढ़ती जागरूकता के कारण जैविक उत्पादों की मांग में वृद्धि हो रही है, जिन्हें पर्यावरण के लिए अधिक अनुकूल माना जाता है।
- **विविधीकरण:** जैविक उत्पादों का विविधीकरण करने से आहार में पोषण की मात्रा बढ़ती है और पर्यावरण सुधार में सकारात्मक गति देखने को मिलती है। विविधीकरण के अन्तर्गत एक फसल के स्थान पर विभिन्न प्रकार की फसलों को उगाना चाहिए जिससे मिट्टी की गुणवत्ता में सुधार होता है और कीटों का नियंत्रण अधिक प्रभावी ढंग से किया जा सकता है। जैविक उत्पादों के विविधीकरण से फसल चक्र में सुधार होता है जिससे कृषि प्रणाली को दीर्घकालिक स्थिरता प्राप्त होती है जब स्थानीय बाजार में इन उत्पादों की माँग में वृद्धि होती है, तो किसानों की आय में भी वृद्धि होने की संभावना बढ़ जाती है।

- **प्रमाणन और मानकः** सख्त दिशा-निर्देश और मानक यह सुनिश्चित करते हैं कि सामान्य उत्पादों के उत्पादन की विधियाँ, आगत और लेबलिंग जैसे विशिष्ट मानदंडों का पालन हो रहा है। ये नियामक उपाय वैश्विक सामंजस्य के प्रयासों के साथ मिलकर काम करते हैं जिसका उद्देश्य मानक दिशा-निर्देशों को समन्वित करना, व्यापार को सरल बनाना और विश्वभर में जैविक उत्पादों में उपभोक्ता विश्वास को बढ़ावा देना है।

जैविक खेती की चुनौतियाँः सबसे बड़ी चुनौती लागत के अनुपात में गुणवत्तायुक्त उत्पादन का कम होना है। पारंपरिक खेती की तुलना में जैविक खेती में फसलें अधिक समय लेती है और उनकी वृद्धि दर भी कम होती है। इसके अलावा, किसानों को जैविक कीटनाशकों और उर्वरकों का इस्तेमाल करना होता है, जो अक्सर महंगे होते हैं और उपलब्धता में सीमित होते हैं। जलवायु परिवर्तन भी एक समस्या है, क्योंकि मौसम में उतार-चढ़ाव जैविक फसल उत्पादन को प्रभावित कर सकते हैं। फिर, किसानों के लिए जैविक मानकों का पालन और प्रमाणन प्राप्त करना भी कठिन होता है। बहुत से किसान इस प्रक्रिया में समय और साधनों का निवेश करने से हिचकिचाते हैं। बाजार में जैविक उत्पादों की माँग बढ़ रही है, लेकिन उनकी कीमतें भी अधिक होती हैं जिससे कई उपभोक्ताओं के लिए इन्हें खरीदना कठिन हो जाता है। इसके अलावा, आज के समय में ज्ञान की कमी और सुविधा की खोज में कई किसान पारंपरिक खेती के तरीकों पर वापस लौटने का विकल्प चुनते हैं। इस प्रकार, जैविक खेती को स्थापित करने और उसे सफल बनाने के लिए संघर्षशीलता और सही दिशा की आवश्यकता होती है।

हमें उन लोगों से हमेशा दूर रहना चाहिए जो लोग हमारी महत्वाकांक्षाओं को कम करने की कोशिश करते हैं छोटी सोच वाले लोग हमेशा ऐसा ही करते हैं जबकि महान लोगो को लगता है की आप भी महान बन सकते हैं।

– मार्क ट्वेन

डीजिटल कृषि

सर्वेश कुमार मिश्रा, शैलेश कुमार तिवारी, आकांक्षा सिंह, सुभाष चन्द्र एवं अनन्त बहादुर

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

आर्थिक दृष्टि से कृषि का सकल घरेलू उत्पाद में योगदान मात्र 17-18 प्रतिशत है। कृषि को बेगारों, बेकारों और निरक्षरों का पेशा मानने की मानसिकता पर पूर्ण-विराम लगाने की आवश्कता है। एक बार आत्म-सम्मान और आर्थिक सुरक्षा की भावनाएँ युवा किसानों में आ जाये तो भारत फिर से आसमान की बुलंदी पर चढ़ सकता है। इसलिये प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी ने कहा 'जय जवान, जय किसान, जय विज्ञान, जय अनुसंधान।' वर्तमान में देशभर में 74 कृषि विश्वविद्यालय हैं। भारत का इजरायल के साथ कृषि शोध को लेकर करार हुआ है जिससे अंतरिक्ष विज्ञान, नैनो टेक्नोलॉजी, जेनेटिक्स, आर्टिफिसियल इंटेलिजेंस, इनफॉर्मेशन टेक्नोलॉजी और अन्य क्षेत्रों से जुड़े वैज्ञानिकों को यदि एक प्लेटफॉर्म पर लाया जाए तो कृषि क्षेत्र के लिये बेहतरीन शोध हो सकता है। यूथ इन इण्डिया वर्ष 2024 रिपोर्ट के अनुसार भारत के कुल जनसंख्या का 29 प्रतिशत युवा आबादी है। आजादी के 78 साल बाद भी भारतीय कृषि उस मुकाम को हासिल नहीं कर पाई जिनकी वह हकदार है। भारत के विभिन्न कृषि विश्वविद्यालयों में फसलों के बीज, फलों के बीज और जैविक उर्वरकों पर शोध कार्य हो रहे हैं। कई खाद्य पदार्थों को जीआई टैग दिया जा रहा है। विदेश में भारत के कई कृषि उत्पादों की मांग रहती हैं जैसे-बासमती चावल, जर्दालू आम, शाही लीची, दार्जिलिंग चाय और दरभंगा मखाना इत्यादि। इसलिए युवा धीरे-धीरे ही सही, कृषि को रोजगार के रूप में अपना रहे हैं। किसानों को अब पूरे खेत में पानी, खाद और कीटनाशकों का एक समान इस्तेमाल नहीं करना पड़ता। इसके बजाय, वे न्यूनतम मात्रा का इस्तेमाल कर सकते हैं। इसके लाभों में शामिल हैः फसल उत्पादकता में वृद्धि, पानी, उर्वरक और कीटनाशकों का कम उपयोग जिसके परिणामस्वरूप खाद्य कीमतें कम रहती हैं, प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र पर कम प्रभाव, नदियों और भू-जल में रसायनों का कम बहाव। इसके अलावा, रोबोटिक तकनीक प्राकृतिक संसाधनों जैसे- वायु और जल गुणवत्ता की अधिक विश्वसनीय निगरानी और प्रबंधन को सक्षम बनाती है।

कृषि तकनीक का सब्जी उत्पादन में उपयोगः ड्रिप सिंचाई विभिन्न सब्जी फसलों के लिए उपयुक्त है, जिनमें टमाटर, सलाद पत्ता, मिर्च, खीरे आदि शामिल हैं। वर्टिकल फार्मिंग में विभिन्न प्रकार की सब्जियाँ उगाई जा सकती हैं जैसे- पालक, लेट्यूस, चाइनीज कैबेज, टमाटर, मिर्च, खीरा, बैंगन, पुदीना, धनिया, तुलसी, सलाद, चाड्र्स, माइक्रोग्रीन्स आदि उगाई जा सकती हैं। ड्रोन तकनीक का उपयोग सब्जी की खेती में फसल की निगरानी, कीटनाशक और उर्वरक छिड़काव और बीज बोने के लिए किया जा सकता है। इससे किसानों को समय और मेहनत दोनों की बचत होती है और पैदावार में सुधार होता है।

कृषि क्षेत्र में प्रयुक्त प्रौद्योगिकियाँः कृषि क्षेत्र में प्रयुक्त कुछ प्रौद्योगिकियाँ इस प्रकार हैं जैसे-सैटेलाइट इमेजनरी, स्मार्ट सिंचाई, मौसम की निगरानी, जीपीएस तकनीक, मृदा सेंसर, इनडोर वर्टिकल खेती (हाइड्रोपोनिक्स, एइरोपोनिक्स, एक्वापोनिक्स), स्वचालन एवं ड्रोन आदि।

सैटेलाइट इमेजनरीः इस तकनीक का प्रयोग मौसम के पूर्वानुमान, फसल निगरानी एवं फसल उपज के विश्लेषण के लिये किया जाता है।

स्मार्ट सिंचाई (कुशल सिंचाई)ः खेत में पानी का सही

सारिणी-1ः कृषि में उपयोग होने वाली तकनीकें

तकनीक	विवरण
सैटेलाइट इमेजनरी	फसल निगरानी, मौसम पूर्वानुमान
स्मार्ट सिंचाई	सेंसर आधारित जल प्रबंधन (ड्रिप, स्प्रिंकलर)
मौसम निगरानी स्टेशन	मौसम की सटीक जानकारी
जीपीएस तकनीक	खेत विश्लेषण, उर्वरक-कीटनाशक प्रबंधन
मृदा सेंसर	मिट्टी की नमी, तापमान, पोषण स्तर
वर्टिकल फार्मिंग	सीमित जगह में अधिक उत्पादन (हाइड्रोपोनिक्स, एयरोपोनिक्स, एक्वापोनिक्स)
ड्रोन और ऑटोमेशन	फसल छिड़काव, सर्वेक्षण, श्रम बचत

चित्र-1: कृषि की नवीनतम तकनीकी का चित्रण

सारिणी-2: युवाओं के लिए रोजगार के अवसर

पद	कार्य
ड्रोन ऑपरेटर	प्रशिक्षण लेकर कृषि क्षेत्र में ड्रोन संचालन
स्मार्ट फार्मिंग सलाहकार	किसानों को तकनीकी सलाह देना
वर्टिकल फार्म इंस्टॉलर	इंडोर फार्म लगाने की सेवाएँ
मृदा विश्लेषक	मिट्टी जाँच एवं रिपोर्टिंग
एग्री-एआई टेक्नोलॉजी स्पेशलिस्ट	कृषि डेटा विश्लेषण एवं सलाह
इनोवेटिव एग्रीस्टार्टअप	जैसे- मोबाइल ऐप्स, मार्केटिंग प्लेटफॉर्म आदि

मात्रा में कुशलतापूर्वक उपयोग करना ही स्मार्ट या कुशल सिंचाई कहलाता है। यह सेंसर आधारित प्रणाली पर कार्य करता है। यह मोबाईल एवं एप्प के माध्यम से नियंत्रित किया जा सकता है। ड्रिप, रेन एवं फौव्वारा सिंचाई स्मार्ट सिंचाई के भाग है।

मौसम की निगरानी: मौसम की जानकारी एवं निगरानी मौसम स्टेशनों के माध्यम से प्राप्त की जा सकती है। यह कृषि की वास्तविक लक्षित पहलू है जिससे फसल सुरक्षा की जानकारी मौसम की निगरानी के माध्यम से प्राप्त हो सकती है।

जीपीएस तकनीकः इस तकनीक से किसान मिट्टी के नमूने, फसल की निगरानी, उर्वरक एवं कीटनाशकों के प्रयोग को विस्तृत रूप से जान सकता है।

मृदा सेंसर: इसका प्रयोग मृदा में नमी स्तर की जाँच, तापमान एवं फसल वृद्धि को प्रभावित करने वाले कारकों को मापने के लिये किया जाता है। मृदा सेंसर से एकत्र किये गये आंकड़े वायरलेंस तरीके से किसानों तक पहुँचाया जा सकता है जिससे किसान इन आंकड़ों का उपयोग करके खेती में उत्पादन को बढ़ा सकते हैं।

स्व-चालन एवं ड्रोन: कुछ वर्षों में कृषि कार्य में स्व-चालन का व्यापक उपयोग हुआ है जिससे शारीरिक श्रम पर निर्भरता कम हो गयी है और दूसरी ओर ड्रोन तकनीक की बात की जाये तो आज के समय ड्रोन पर निर्भरता बढ़ती जा रही है। मानचित्र सर्वेक्षण, फसल निगरानी, खाद एवं कीटनाशकों के उचित मात्रा में छिड़काव ड्रोन तकनीक से किया जा रहा है।

कृषि प्रौद्योगिकी से नये रोजगार: आज तकनीक कृषि क्षेत्र में नये रोजगार सृजित करने में सहायक हो रही है। आधुनिक तकनीकी के प्रयोग से कृषि उत्पादकता में कई गुना वृद्धि हुई है जिससे श्रम, लागत एवं समय की बचत हुई है। विभिन्न कृषि क्षेत्रों में प्रौद्योगिकी के विकास से रोजगार के अवसर प्राप्त हुए हैं जैसे- ड्रोन चलाने के लिये एक कुशल व्यक्ति की आवश्यकता होगी जिससे व्यक्तियों को रोजगार मिलेगा। इसी प्रकार कृषि प्रौद्योगिकी में लगने वाले संसाधनों को चलाने के लिये व्यक्ति की आवश्यकता होगी जिससे सिद्ध होता है कि कृषि प्रौद्योगिकी के विकास से नये रोजगार का सृजन होगा।

'बीस साल की उम्र में इंसान अपनी इच्छा से चलता है,
तीस में बुद्धि से और चालीस में अपने अनुमान से.'

- बेंजामिन फ्रैंकलिन

मानव पोषण में टमाटर का महत्व

शशि शेखर, शुभम कुमार तिवारी एवं नीतीश सिंह
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

टमाटर घरेलू रसोई का अभिन्न हिस्सा ही नही है बल्कि किसानों के लिए आय का प्रमुख स्रोत भी है। विविध जलवायु परिस्थितियों के अनुकूल होने, उच्च बाजार मांग और पोषण मूल्य के कारण आधुनिक कृषि में प्रमुख स्थान रखता है और बढ़े पैमाने पर इसकी खेती होती है। टमाटर आजीविका में सहारा प्रदान करता है और खाद्य सुरक्षा को बढ़ाने में सहायक है। राष्ट्रीय कृषि सकल घरेलू उत्पाद में योगदान देती है। इससे अनेकों प्रकार के उपयोगी उत्पाद जैसे-सॉस, केचप, प्यूरी इत्यादि पोषण सुरक्षा प्रदान करने के साथ-साथ रोजगार का सृजन करता है। पके फलों में विटामिन 'ए', 'सी' और 'के', पोटैशियम तथा लाइकोपीन जैसे- एंटीऑक्सीडेंट सहित कई आवश्यक पोषक तत्व भरपूर मात्रा में पाये जाते हैं। फल में मिलने वाला लाइकोपीन आज मानव आहार में महत्वपूर्ण एवं उपयोगी घटक है।

पोषण में टमाटर का योगदान

टमाटर में मिलने वाले पोषकीय घटक जो मानव स्वास्थ्य के लिए अत्यंत लाभदायक हैं, उनका विवरण निम्नवत हैः

- **विटामिन 'सी':** पके हुये टमाटर में विटामिन 'सी' की मात्रा 100 ग्राम में लगभग 13-15 मिग्रा. होती है, जो प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करता है।
- **लाइकोपीनः** टमाटर में प्रति 100 ग्राम में लगभग 3-7 मिग्रा. लाइकोपीन पाया जाता है, जो पकने पर और भी सक्रिय हो जाता है तथा एक शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेंट जो कैंसर और हृदय रोगों से बचाव करता है।
- **पोटैशियम और फोलेटः** पके हुये टमाटर में पोटैशियम और फोलेट दोनों ही पाये जाते हैं, जो एक मध्यम आकार के टमाटर में 292 मिग्रा. पोटैशियम होता है जो दैनिक आवश्यकता का 6 प्रतिशत है इसके अतिरिक्त इसमें फोलेट (विटामिन 'बी9') का भी एक अच्छा स्रोत है और 100 ग्राम टमाटर में लगभग 19 माइक्रोग्राम फोलेट होता है, जो मानव मांसपेशियों और कोशिकाओं के लिए आवश्यक है।
- **विटामिन 'ए' :** पके हुये टमाटर में विटामिन 'ए' प्रचुर मात्रा में पायी जाती है यह मुख्य रूप से प्रोविटामिन 'ए' कैरोटीनॉयड के रूप में पाया जाता है जो आँखों की रौशनी के लिए लाभकारी।

इन सभी तत्वों के कारण टमाटर न केवल स्वाद बढ़ाता है, बल्कि स्वास्थ्य रक्षक के रूप में भी कार्य करता है। टमाटर का प्रमुख जैव-सक्रिय यौगिक है लाइकोपीन। यह लाल रंग का एक प्राकृतिक रंग द्रव्य है जो टमाटर को उसका विशिष्ट लाल रंग प्रदान करता है। परंतु यह केवल रंग ही नहीं देता, बल्कि अनेक बीमारियों से सुरक्षा, मानव स्वास्थ्य के सुधार और कृषि-आधारित उद्योगों में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

लाइकोपीन क्या है?

लाइकोपीन एक कैरोटिनॉयड वर्ग का यौगिक है जो मुख्यतः टमाटर और उसके उत्पादों में पाया जाता है। यह शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेंट है जो शरीर में हानिकारक मुक्त कणों को निष्क्रिय करने में सहायक होता है। मुक्त कण यदि शरीर में अधिक हो जाएँ, तो वे कोशिकाओं को नुकसान पहुँचा सकते हैं जिससे कैंसर, हृदय रोग, मधुमेह जैसी बीमारियाँ हो सकती हैं। लाइकोपीन विशेष रूप से कैंसर और हृदय रोग जैसी बीमारियों के जोखिम को कम करने में अपनी भूमिका के लिए जाना जाता है।

लाइकोपीन की मात्रा और उपलब्धता

टमाटर में प्रति 100 ग्राम में लगभग 3-7 मिग्रा. लाइकोपीन पाया जाता है जो पकने पर और भी सक्रिय हो जाता है। पके हुए या पकाए गए टमाटर में लाइकोपीन की जैव उपलब्धता अधिक होती है। इसका कारण यह है कि गर्मी से लाइकोपीन के अणु टूटते नहीं, बल्कि शरीर द्वारा अधिक आसानी से अवशोषित किये जा सकते हैं। इसलिए टमाटर सॉस, केचप, सूप और प्यूरी जैसे उत्पादों में इसका स्तर अधिक प्रभावशाली होता है।

स्वास्थ्य के क्षेत्र में लाइकोपीन का महत्व

कैंसर से बचावः लाइकोपीन प्रोस्टेट, स्तन, फेफड़े और पेट के कैंसर की रोक-थाम में सहायक माना गया है। यह डीएनए की क्षति को कम करता है और कोशिका वृद्धि को नियंत्रित करता है।

हृदय रोगः यह कोलेस्ट्रॉल के ऑक्सीकरण को रोकता है जिससे धमनियों में ब्लॉकेज की संभावना कम हो जाती है। इससे दिल के दौरे और उच्च रक्तचाप जैसी समस्याएँ नियंत्रित रहती हैं।

त्वचा की सुरक्षा: लाइकोपीन त्वचा को यू.वी. किरणों से होने वाले नुकसान से बचाता है और उम्र बढ़ने की प्रक्रिया को धीमा करता है।

प्रतिरक्षा प्रणाली को सुदृढ़ बनाना: नियमित सेवन से शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि होती है।

कृषि में लाइकोपीन का महत्व

उच्च-मूल्य फसल के रूप में टमाटर: वर्तमान में उपभोक्ता केवल स्वाद के लिए नहीं बल्कि पोषण गुणों से भरपूर उत्पाद की माँग करते हैं। इस संदर्भ में, उच्च लाइकोपीन युक्त टमाटर किस्मों की मांग तेजी से बढ़ रही है। किसानों को ऐसे टमाटर उगाने से बेहतर बाजार मूल्य मिलता है।

लाइकोपीन आधारित जैविक उत्पादों की खेती: लाइकोपीन एक प्राकृतिक बायोएक्टिव यौगिक है, जिसे खाद्य अनुपूरक, सौंदर्य प्रसाधन और औषधीय उत्पादों में उपयोग किया जाता है। इसकी खेती से किसान औद्योगिक प्रसंस्करण इकाइयों से जुड़कर अधिकाधिक लाभ कमाते हैं।

निर्यात में वृद्धि: देश में उत्पादित टमाटर का बड़ा हिस्सा घरेलू उपभोग में ताजे रूप में किया जाता है फिर भी अधिक उत्पादन की दशा में पके फलों का उपयोग लाइकोपीन निकालने के लिये किया जा सकता है। आज विश्व में इस घटक की ज्यादा माँग है जो लाइकोपीनयुक्त प्रसंस्कृत उत्पादों को तैयार कर निर्यात की संभावनाओं को बढ़ाया जा सकता है। इससे विदेशी मुद्रा प्राप्त करने में गति मिलती है।

शोध एवं विकास: कृषि वैज्ञानिक उच्च लाइकोपीन युक्त संकर किस्मों पर अनुसंधान कर रहे हैं जिससे पौधे अधिक उत्पादक और रोग प्रतिरोधक क्षमता भी अधिक हो। इससे खेती अधिक टिकाऊ और लाभकारी बन सकती है।

प्रसंस्करण उद्योग: टमाटर का उपयोग केवल ताजे रूप में ही नहीं, बल्कि प्रसंस्कृत उत्पादों जैसे– टमाटर सॉस, केचप, पेस्ट, सूप, प्यूरी आदि में भी होता है। यह प्रसंस्करण उद्योग न केवल टमाटर की उपयोगिता बढ़ाता है, बल्कि किसानों को बेहतर मूल्य दिलवाने में सहायक होता है। इसके अतिरिक्त, इन उद्योगों में स्थानीय रोजगार के नये अवसर भी पैदा होते हैं।

चुनौतियाँ और समाधान

हालाँकि टमाटर की खेती लाभदायक है, लेकिन इसमें कुछ चुनौतियाँ भी हैं:

चुनौती	समाधान
बाजार मूल्य में उतार-चढ़ाव	मूल्य स्थिरीकरण नीति और न्यूनतम समर्थन मूल्य की मांग
रोग और कीट संक्रमण	जैविक कीटनाशक और रोग प्रतिरोधी किस्मों का प्रयोग
भंडारण की समस्या	शीतगृह भण्डारण और स्थानीय गोदामों की व्यवस्था
अधिक उत्पादन की स्थिति में गिरते दाम	टमाटर प्रसंस्करण उद्योग को बढ़ावा

टमाटर की खेती न केवल एक कृषिगत गतिविधि, बल्कि आर्थिक, पोषणीय और सामाजिक विकास का माध्यम बन चुकी है। यह फसल ग्रामीण भारत की रीढ़ बन सकती है, यदि इसे आधुनिक तकनीक, उचित विपणन और सरकारी सहयोग के साथ जोड़ा जायें। टमाटर उत्पादन में वैज्ञानिक दृष्टिकोण, नवाचार और मूल्य संवर्धन को अपनाकर किसान आत्मनिर्भर बन सकते हैं और देश की खाद्य सुरक्षा को और अधिक मजबूत किया जा सकता है।

उभरते कीट से सब्जियों की सुरक्षा

सूरज सोनी, उमेश चन्द्रा, हर्षित गुप्ता, *राहुल कुमार, ** शुभम तिवारी एवं प्रजन्या दुबे

आ.न.दे.कृ.प्रा.वि.वि., कुमारगंज, अयोध्या, *च.आ.कृ.प्रा.वि.वि., कानपुर, **सै.हि.कृ., प्रा.वि.वि.वि., प्रयागराज

सब्जियों में कीटों से नुकसान का स्तर विभिन्न कारकों जैसे- पौधों की किस्म, फसल का मौसम, भौगोलिक स्थिति आदि पर निर्भर करती है। वर्तमान समय में उभरते कीटों से फसलों को ज्यादा क्षति हो रही है। प्रथमगत किसी विशेष क्षेत्र व फसल में देखने को मिलती है और समय के साथ उनकी आबादी में निरंतर वृद्धि होती रहती है जिससे आर्थिक स्तर पर किसानों को कृषिगत व्यय से ज्यादा क्षति होने के कारण क्षेत्र विशेष में होने वाली फसलों के क्षेत्रफल में कमी देखने को मिल रही है। उदाहरण के लिये मिलीबग, फल मक्खियाँ, तना छेदक, हीरक पृष्ठ जैसे-पादप भक्षी कीट और एकरीन (माईट्स) वर्ग के अंतर्गत लाल मकड़ी। हाल के वर्षों में दक्षिण अमेरिकी टमाटर छेदक कीट और मिर्च फूलगोभी थ्रिप्स जैसे आक्रामक कीटों ने टमाटर और मिर्च की फसलों को व्यापक नुकसान पहुँचाया है। यह समीक्षा उन विभिन्न कारकों पर केंद्रित है, जो नए आक्रामक कीटों की स्थापना, प्रमुख कीटों की स्थायित्व, सामान्य कीट प्रबंधन पद्धतियों और सतत् सब्जी उत्पादन के लिए एकीकृत कीट प्रबंधन की भूमिका में सहायक होते हैं। भारतीय सब्जियों में कीट प्रबंधन और सतत उत्पादन की दिशा में विचारणीय पहलू है। अकेले कीट ही औसतन 25-30 प्रतिशत तक उपज में कमी का कारण बनते हैं। इसके अतिरिक्त, अनेक कीट पौधों में विभिन्न बीमारियाँ फैलाकर क्षति को और भी गम्भीर बना देते हैं। विभिन्न सब्जियों में कीटों द्वारा की गई उपज हानि का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा गया है। ऐसे में पर्यावरण के अनुकूल कीट प्रबंधन के माध्यम से टिकाऊ सब्जी उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। इसमें निम्नलिखित उपाय शामिल है:

- कृषि सस्य क्रियायें
- स्थानीय किस्में
- पौधों में प्रतिरोधी किस्मों का चयन
- पौधों के द्वितीयक चयापचय उत्पाद
- जैविक नियंत्रण, रक्षा प्रोटीन एवं रासायनिक नियंत्रण जिसे सावधानीपूर्वक और सीमित मात्रा में प्रयोग में लाना चाहिए। इन विकल्पों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए क्योंकि ये तुलनात्मक रूप से सुरक्षित हैं एवं परागण करने वाली मधुमक्खियों व प्राकृतिक शत्रुओं जैसे लाभकारी कीटों पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालते।

उभरते कीट के जिम्मेदार कारक

फसल प्रणाली में परिवर्तन के साथ, उच्च उपज वाली किस्मों का उपयोग, जलवायु परिस्थितियों में परिवर्तन समय और स्थान में कीट की स्थिति में बदलाव का मूल कारण है जिसके परिणामस्वरूप दुनिया भर में उनके कारण होने वाली क्षति में वृद्धि हुई। उनमें से कई वायरल और माइकोप्लाज्मा रोगों के संवाहक के रूप में भी कार्य करते हैं जिससे समस्या और बढ़ जाती है। नियमित कीटों के अलावा हाल ही में कई विदेशी और आक्रामक कीटों ने देश के कई हिस्सों में आक्रमण किया है। टमाटर पत्ती खंदक कीट, सोलानेसी वर्गीय सब्ज़ियों की मिलीबग (रस चूसक) ऐसे ही कुछ कीट हैं। इसी तरह मिरिड बग, खरबूजा वीविल, सफ़ेद प्लम मोथ, खीरा पतंगा, मोरिंगा फल तथा बीज छेदक, कछुआ भृंग वे कीट हैं जो पिछले कुछ वर्षों में या तो पादप रोग प्रतिरोधक क्षमता का विस्तार करके या अपनी गंभीरता बढ़ाकर बड़े पैमाने पर सामने आए हैं।

प्रमुख कीटों की सतत उपस्थिति: एक चुनौती

सब्जियों की खेती में कई प्रमुख कीटों की लगातार उपस्थिति एक गंभीर और स्थायी समस्या के रूप में देखी गई है। हीरक पृष्ठ पतंगा इसका प्रमुख उदाहरण है, जो गर्म और ठंडे दोनों प्रकार के जलवायु क्षेत्रों में व्यापक रूप से पाया जाता है। गोभी वर्गीय फसलों की सफेद तितली अन्य महत्वपूर्ण कीट है, जो मुख्यतः ठंडे और पहाड़ी क्षेत्रों तक सीमित रहती है। वहीं, शीर्षक पीढ जैसे कीट गर्म और उष्णकटिबंधीय निम्न भू-भागों में गोभी की खेती के लिए एक बड़ी समस्या बने हुए हैं। इसके अलावा कर्तन कीट, तम्बाकू इल्ली गोभी शीर्षक कीट, पिस्सू भृंग और माहू जैसे कीट भी सब्जियों के उत्पादन को प्रभावित करने वाले प्रमुख कीटों में गिने जाते हैं। बहरहाल, उनके लगातार जागरूकता के बावजूद, ये अक्सर लगातार महत्वपूर्ण नुकसान पहुंचाते हैं। इनमें से कुछ कीटों का महत्व प्रजातियों के आधार पर भिन्न हो सकता है। हीरक पृष्ठ और गोभी सफेद तितली विशिष्ट उदाहरण हैं। ऐसे कई उदाहरण हैं जहाँ प्राकृतिक दुश्मन खतरनाक कीटनाशकों के अत्यधिक उपयोग के कारण अपने पूर्ण प्रभाव को प्रदर्शित करने में असमर्थ हैं। सामान्यतौर पर अधिकांश कीट पारिस्थितिक इंजीनियरिंग प्रबंधन रणनीतियों की कमी और उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में कीट जैव-पारिस्थितिकी की खराब समझ के कारण बने हुए हैं। सभी

के साथ, प्रबंधन के प्रयास रासायनिक कीटनाशकों को नियोजित करने और खोजने पर केंद्रित रहे हैं जो तेजी से प्रभावी हैं। गोभी वर्गीय फसलों का सबसे महत्वपूर्ण कीट हीरक पृष्ठ पतंगा है, कमजोर प्राकृतिक शत्रु परिसर और कीटनाशकों के भारी उपयोग के कारण, बैंगन और लोबिया की फली छेदक, भिंडी में कलिका और फल छेदक इल्ली (एरियस विटेलिया), ककड़ी फल मक्खी, कद्दू वर्गीय सब्जियों में लगने वाले कीट आदि पिछले 20 वर्षों से एक प्रमुख कीट बने हुए हैं। चना पत्ती व फली छेदक, एक गंभीर कीट है जो टमाटर, मटर, भारतीय बीन्स, मिर्च और भिंडी आदि को संक्रमित करता है, जो पौधे के वानस्पति और प्रजनन दोनों चरणों को नुकसान पहुंचाता है। इसी प्रकार, तंबाकू की इल्ली एक बहुभक्षी कीट है जो टमाटर, मिर्च और भारतीय सेम आदि जैसे खाद्य पदार्थों को खाता है और कई बार काफी नुकसान पहुँचाता है। सब्जियों के उभरते कीटों के लिए नुकसान की प्रकृति और विशिष्ट प्रबंधन प्रथाओं को सारिणी-1 में प्रस्तुत किया गया है।

सारिणी-1: सब्जियों में प्रमुख कीटों के कारण उपज हानि

क्रमांक	फसल	प्रमुख कीट का नाम	संभावित क्षति (प्रतिशत)
1	बैंगन	कलिका और फल छेदक	70 75
2	पत्तागोभी	हीरक पृष्ठ	52
		गोभी की तितली	40
3	लोबिया	चित्तीदार फली छेदक	36 (फूल और फली क्षति)
		हड्डा बीटल	13-88 (पत्तियों को क्षति)
4	भिंडी	कलिका एवं फल छेदक	35
		लाल मकड़ी कीट	7 48 (पत्तियों को क्षति)
5	टमाटर	टमाटर फल छेदक	50 80
		दक्षिण अमरीकी पत्ती खन्दक	50-100
6	खीरा	खीरा का इल्ली	23
7	परवल	फलमक्खी	30
8	तरबूज	फलमक्खी	28 55
9	लौकी	फलमक्खी	30 100
10	करेला	फलमक्खी	41 89
11	मिर्च	काली थ्रिप्स	22.8
		मिर्च थ्रिप्स	50

नये कीटों के उद्भव पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव

बढ़ती जनसंख्या और परिणामस्वरूप अधिक फसल उत्पादन की आवश्यकता खाद्य सुरक्षा के लिए एक महत्वपूर्ण चुनौती का प्रतिनिधित्व करती है। तूफान, सूखा, बाढ़, वर्षा, कार्बन डाई आक्साइड के स्तर में वृद्धि और उच्च तापमान सभी का खाद्य आपूर्ति पर काफी प्रभाव पड़ता है। शोध के अनुसार, मानवजनित गतिविधियों से ग्रीनहाउस गैस सांद्रता मुख्य रूप से कार्बन डाइऑक्साइड बढ़ती है, जिसके परिणामस्वरूप जलवायु परिवर्तन होता है। हवा और मिट्टी का तापमान, सौर विकिरण, वर्षा, सापेक्ष आर्द्रता और हवा की गति सभी जलवायु चर हैं जो पौधों की शारीरिक गतिविधियों पर सीधा प्रभाव डालते हैं। जलवायु परिवर्तन का सबसे अधिक प्रभाव कीटों, बीमारियों और खर-पतवारों पर पड़ता है। कीट शीत रक्त वाले होते हैं कीटों पर जलवायु परिवर्तन के प्रभावों का महत्व इस तथ्य से बढ़ जाता है कि कीट पौधों, प्राकृतिक शत्रुओं, परागण को और अन्य जीवों के साथ कई जैविक अंतःक्रियाओं में भाग लेते हैं जो पारिस्थितिक कार्यप्रणाली के लिए आवश्यक हैं। कृत्रिम रसायनों, पोषक-पौध प्रतिरोध, प्राकृतिक पौधों के उत्पादों, जैव-कीटनाशकों, प्राकृतिक शत्रुओं और अन्य कीट प्रबंधन रणनीतियों की प्रभावशीलता पर जलवायु परिवर्तन का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ने की उम्मीद है। बढ़ी हुई वैश्विक औसत वर्षा फसल उत्पादन के साथ-साथ जैव

की विविधता और मात्रा और फसल प्रणालियों को भी महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करेगी। इसके अलावा, कीटों की भौगोलिक सीमाओं के प्रसार का फसल उत्पादकता पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ेगा। जलवायु परिवर्तन पर अंतर-सरकारी पैनल के सबसे हालिया आकलन आईपीसीसी (2014) के अनुसार, 1880 और 2012 के बीच तापमान 0.85 डिग्री सेन्टीग्रेड बढ़ा है। इसके अलावा, कार्बन डाइऑक्साइड की सांद्रता 280 (पूर्व-औद्योगिक मूल्य) से बढ़कर वर्ष 2015 में 401 पी.पी.एम हो गई है। भौगोलिक सीमाएं, मौसमी गतिविधियाँ, प्रवासन पैटर्न और प्रचुरता,साथ ही कीटों के बीच अंतर और अंतर-विशिष्ट संबंध जैसी घटनाएं सभी बदल गई हैं।

एकीकृत कीट प्रबंधन एवं नवीनतम विधियाँ

हाल के उपकरण एकीकृत कीट प्रबंधन, परिभाषा के अनुसार, बीमारियों, खर-पतवारों और पादप भक्षक जीवों (ज्यादातर कीट और घुन) की विनाशकारी प्रजातियों को संदर्भित करता है। संधारणीय कृषि के संदर्भ में पौध संरक्षण का ध्यान एहतियाती या अप्रत्यक्ष तरीकों पर है जिनका नियंत्रण या प्रत्यक्ष उपायों का उपयोग करने से पहले पूरी तरह से उपयोग किया जाना चाहिए। नियंत्रण उपायों की आवश्यकता का निर्धारण करते समय पूर्वानुमान उपकरणों और मानदंडों के उपयोग पर विचार किया जाना चाहिए, जिनका वैज्ञानिक सत्यापन हो चुका है। यदि अप्रत्यक्ष तरीकों से आर्थिक रूप से असहनीय नुकसान से बचा नहीं जा सकता है, तो प्रत्यक्ष कीट नियंत्रण उपकरण अंतिम विकल्प हैं। आई.पी.एम. रणनीतियाँ मुख्य रूप से उत्पादकों और शोधकर्ताओं द्वारा प्रतिकूल पर्यावरणीय प्रभावों को कम करते हुए फसल की पैदावार और वित्तीय लाभ को अधिकतम करने के लिए बनाई जाती हैं (खाद्य एवं कृषि संगठन 2021)। मौसम परिवर्तनशीलता को सहन करने के लिए पर्याप्त लचीले विषम कृषि पारिस्थितिकी तंत्रों को बेहतर बनाने के लिए, वर्तमान निवारक कृषि प्रथाओं और आई.पी.एम. रणनीतियों का पुनर्मूल्यांकन करना आवश्यक है। हालांकि, हाल के वर्षों में यह अनुमान लगाया गया है कि जलवायु परिवर्तन के महत्वपूर्ण प्रभावों को संबोधित करने के लिए शोधकर्ताओं और उत्पादकों को इन सावधानीपूर्वक तैयार की गई रणनीतियों में से कई को संशोधित करने की आवश्यकता। कई आई.पी.एम. प्रणालियों ने आर्थिक उपज हानि होने से पहले कीटों की संख्या की गहन समझ के आधार पर चुनाव करने पर ध्यान केंद्रित किया है, जिसे आमतौर पर आर्थिक या हस्तक्षेप सीमा के रूप में जाना जाता है। आई.पी.एम. पारंपरिक रूप से कीट प्रबंधन के क्षेत्र में विकसित हुआ है, जहाँ स्थापित सीमाओं के अनुप्रयोग ने सकारात्मक परिणाम दिए हैं। हालाँकि वे एकीकृत कीट प्रबंधन के लिए महत्वपूर्ण हैं, हस्तक्षेप सीमाएँ हमेशा लागू नहीं होता है, पर्याप्त नहीं होता है या व्यवहार्य भी नहीं होता है। जब निर्णय सहायता प्रणालियाँ अनुपलब्ध होती हैं या उपयुक्त नहीं होती हैं, तो सीमारेखा का उपयोग नहीं किया जाता है। यह समझना महत्वपूर्ण है कि पर्यावरण पौधों और कीटों की वृद्धि को कैसे प्रभावित करता है क्योंकि यह ज्ञान कृषि सलाहकारों को जलवायु परिवर्तन के अनुकूल होने में सक्षम बनाता है। फसल संरक्षण के लिए सिफारिशें सूखे के तनाव सहित पर्यावरणीय कारकों से प्रभावित होती हैं। जब कोई फसल सूखे के तनाव में होती है, तो आर्थिक सीमा को आसानी से कम किया जा सकता है क्योंकि यह शाकाहारी कीटों द्वारा लाए गए अतिरिक्त तनाव को संभालने में कम सक्षम होती है । कीटों की आबादी अधिक तेजी से बढ़ती है और उच्च तापमान पर कीटों के तेज विकास के परिणामस्वरूप कृषि क्षति वर्तमान में अनुमानित समय से पहले होती है। उपज के नुकसान से बचने के लिए, प्रति पौधे कीटों की मात्रा के आधार पर उपचार की सीमा को कम किया जाना चाहिए। बदलते पर्यावरण में फसलों पर कृषि कीटों के प्रभाव को कम करने के लिए, संशोधित फसल तकनीक और अनुकूली प्रबंधन उपायों की आवश्यकता है। कीटों के प्रकोप के जोखिम को कम करने के लिए, इन उपायों में विविध फसल किस्मों को लगाना। वर्ष के अलग – अलग समय पर रोपण कर, प्राकृतिक शत्रुओं की संख्या बढ़ाने के लिए खेत की सीमाओं पर जैव विविधता को बढ़ाना शामिल हो सकता है। रोपण तिथियों और अंतर-फसल उपचारों की परस्पर क्रिया का उपयोग गोभी के कीटों हीरक पृष्ठ, गोभी वेबवॉर्म और गोभी लूपर को नियंत्रित करने के लिए प्रभावी रूप से किया जा सकता है जिससे पैदावार में सुधार होता है जिसमें देर से रोपण की तारीख जलवायु परिवर्तनशीलता के लिए व्यवहार्य वैकल्पिक खेत-स्तरीय अनुकूलन के रूप में होती है। ये लागत प्रभावी और पर्यावरण के अनुकूल कीट प्रबंधन रणनीतियों का प्रतिनिधित्व करते हैं जिन्हें किसान आर्थिक क्षति सीमा से नीचे गोभी के कीटों को नियंत्रित करने और उपज में सुधार करने के लिए अपना सकते हैं। इसी तरह, कीट अपने परिवेश को समझने के लिए फेरोमोन (नर कीटों को आकर्षित करना) और एलीलोकेमिकल्स का उपयोग करते हैं, आई.पी.एम. जो एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। इनका कई रणनीतियों पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है जिसमें निगरानी, कीट जाल से पकड़ना, विश्वसनीय रणनीति (कीटों को फसल से दूर करना और मित्र

कीट को फसल की और आकर्षित करना), जैविक नियंत्रण और संभोग व्यवधान शामिल हैं अपने वर्तमान स्वरूप में फेरोमोन और एलीलोकेमिकल्स का उपयोग कम सफल होने का अनुमान है क्योंकि जलवायु गर्म होती है और माइक्रोक्लाइमेट अधिक परिवर्तनशील होते हैं और उच्च तापमान की परिस्थितियों में उनकी अस्थिरता को कम करने के लिए एक सिनर्जिस्ट या अन्य सहायक की आवश्यकता हो सकती है। इसके अलावा, कीटों को संक्रमित करने वाले जीवाणु, सूत्रकृमि, कवक और विषाणु के उपभेदों पर आधारित कुछ जैव कीटनाशक पर्यावरणीय परिवर्तनों के प्रति काफी संवेदनशील होते हैं। तापमान में वृद्धि और सापेक्ष आर्द्रता में गिरावट के साथ इनमें से कुछ नियंत्रण रणनीतियाँ कम प्रभावी हो सकती हैं और सिंथेटिक कीटनाशकों का भी ऐसा ही प्रभाव होने का अनुमान है। इस स्थिति में, नवीन कीट नियंत्रण तकनीक और संभावित कीटनाशक योगों के साथ-साथ आकर्षित करने वाले और विकर्षक, मुख्य ध्यान केंद्रित करने चाहिए। खेत की परिस्थितियों में 1 लीटर प्रति हेक्टेयर (1.6ह्104 कोनिडिया/मिली.) मेटारिजियम एनिसोप्लाई, लेकनीसिलियम (वर्टिसिलियम लेकनी) और बेवरिया बेसियाना जैसे एंटोमोपैथोजेनिक कवक थ्रिप्स, सफेद मक्खी, पादप फुदका इत्यादि जैसे चूषने वाले कीटों को नियंत्रित करने में कुशल हैं। वानस्पतियों की सब्जी कीटों के उपचार में महत्वपूर्ण भूमिका होती है क्योंकि वे गैर-स्थायी होते हैं और स्तनधारियों के लिए सुरक्षित होते हैं। नीम के उत्पादों ने अन्य वानस्पतियों के अलावा जैसिड्स, माहू, थ्रिप्स, सफेद मक्खी और मिलीबग जैसे चूषने वाले कीटों के खिलाफ रोक-थाम में लाभकारी है। चूषने वाले कीटों और पिस्सू के प्रबंधन के लिए 5 प्रतिशत नीम के बीज की गिरी के अर्क के दो से तीन साप्ताहिक अनुप्रयोग भी सहायक होते हैं। खुशबूदार पौधे जैसे-सोआ और धनिया जैसे सुगंधित पौधों का उपयोग टमाटर में सफेद मक्खी को नियंत्रित करने के लिए अंतर-फसल घटकों के रूप में किया जा सकता है। इसके अलावा क्षेत्र अध्ययनों से यह भी पता चला कि जब धनिया और सोआ की फसलें टमाटर के साथ अंतर-फसल घटकों के रूप में उगाई गईं, तो एकल टमाटर फसल की तुलना में सफेद मक्खी का प्रकोप काफी कम हो गया। यह अध्ययन सफेद मक्खी के प्रकोप को कम करने के लिए टमाटर के साथ अंतर-फसल घटकों के रूप में सोआ के साथ-साथ धनिया के संभावित उपयोग पर जोर देता है। इसके अलावा, सफेद मक्खी पौधों के विषाणु की एक विस्तृत श्रृंखला के लिए एक संभावित वेक्टर होने के नाते, वर्तमान अध्ययन में देखी गई सोआ के साथ-साथ धनिया के पौधों की प्रतिकर्षण क्षमता को विश्वसनीय रणनीतियों को तैयार करने के लिए संभावित उत्तेजना के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। सब्जी फसल-एकीकृत कीट प्रबंधन कार्यक्रमों में चूसने वाले कीटों का रासायनिक नियंत्रण एक महत्वपूर्ण घटक के रूप में शामिल होना चाहिए। रासायनिक कीटनाशक फसल छत्र में कीटों को नियंत्रित करने का एक त्वरित और प्रभावी तरीका है। फिर भी, ऐसे चुनिंदा कीटनाशकों का चयन करना जो कीटों के लिए सुरक्षित हों, प्राकृतिक हों। पारंपरिक आनुवंशिक प्रजनन या आनुवंशिक इंजीनियरिंग के माध्यम से विकसित कीटों के प्रति प्रतिरोधी फसल प्रकारों की शुरूआत। कई कार्यात्मक जीनोमिक्स जांच अधिक सटीक जीनोम संपादन विधियों जैसे-बेस एडिटर और प्राइम एडिटर का उपयोग कर सकती हैं, ताकि पौधे-कीट युद्ध में नए आण्विक चलन को स्पष्ट किया जा सके। क्रिस्पर कास 9 तकनीक का उपयोग कीटों में विशिष्ट जीन को बाधित या संसोधित करने में, बाँझ कीटों को तैयार कर प्रजनन क्षमता कम करने में, कीट व्यहार में बदलाव जिससे फसलों की और कम आकर्षित हो, पौधों में प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में करके कीट नियंत्रण के लिए आशाजनक रास्ता प्रदान करती हैं।

मिलीबग, सफेद मक्खी और काली थ्रिप्स जैसे- चूषने वाले कीट साथ ही पत्ती खाने वाले लार्वा, हड्डा बीटल, कछुआ बीटल, सफेद पंख वाले कीट, पत्ती खंदक कीट फल छेदक कीट अब सब्जी की फसलों में गंभीर कीट बन गए हैं। सब्जी की कीट समस्याओं में समय और स्थान के साथ बदलाव आया है और यह ज्यादातर फसल पैटर्न, पारिस्थितिकी तंत्र एवं आवास में बदलाव के साथ-साथ जलवायु में बदलाव तथा कृषि रसायनों के अनुचित उपयोग के कारण है। वर्तमान में ऐसे कई दृष्टिकोण हैं जिनका उपयोग पारंपरिक सिंथेटिक कीटनाशकों के बजाय एकीकृत कीट प्रबंधन कार्यक्रमों में किया जा सकता है। इन दिनों कीट विज्ञानिकों के सामने मुख्य चुनौती क्षेत्र-विशिष्ट जैव गहन एकीकृत कीट प्रबंधन मॉड्यूल बनाना, मान्य कराना और उपलब्ध कराना है। साथ ही, कीट-प्रतिरोधी ट्रांसजेनिक फसलों और आनुवंशिक रूप से संवर्धित बायोएजेंट जीवनाशी सहित प्रमुख क्षेत्रों में अनुसंधान को तेज करने की आवश्यकता है। जैविक कीट नियंत्रण की मूलभूत कमियों से परे जाने के लिए, आण्विक तकनीकों का उपयोग करना आवश्यक है। एक ही कीटनाशक और या एक ही समूह के कीटनाशकों के बार-बार उपयोग से बचकर, इसे रोका या स्थगित किया जा सकता है। संरक्षित वातावरण में कीट प्रबंधन तकनीक बनाने के लिए शोध की आवश्यकता है क्योंकि ये

उभरती हुई कीट समस्याएँ वहाँ अधिक प्रचलित हैं। कीटों की वृद्धि और विकास के आण्विक, जैव रासायनिक और शारीरिक तंत्रों की आगे की जांच और समझ से हाल ही में विकसित आण्विक उपकरणों जैसे-आर. एन. ए. आई. आधारित कीट नियंत्रण विधियों, क्रिस्पर कास 9 उपकरणों की मदद से कीट प्रबंधन के लिए आवश्यक लक्ष्य जीन की पहचान करने में मदद मिलेगी।

सब्जियों में लगने वाले कीट

भिण्डी की एकरीन माईट्स

हीरक पृष्ठ कीट

मिलीबग कीट

सरसों पर माहू कीट

लोबिया पर माहू कीट

बैंगन की पत्तियों को खाने वाले भृंग कीट

कद्दू की लाल भृंग कीट

प्रोत्साहन एक भीतर ही सुलगने वाली आग है। यदि कोई दूसरा आपके नीचे उस आग को जलाने का प्रयास करता है, तो इस बात की सम्भावना अधिक है कि यह बहुत थोड़े समय के लिये ही जल पाये।

-स्टीफेन आर. कोले

मिर्च का तुड़ाई उपरान्त प्रबंधन

चंद्रोदय प्रकाश तिवारी, *इन्दीवर प्रसाद, सी. एन. राम, आस्तिक झा एवं *इन्द्रेश कुमार तिवारी

आ.न.दे.कृ.प्रा.वि.वि., अयोध्या *भा.कृ.अनु.प.-भा.स.अनु.सं., वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

मिर्च भारत की एक अत्यंत महत्वपूर्ण सब्जी एवं मसाला फसल है, जो न केवल घरेलू उपयोग के लिए बल्कि निर्यात के लिए भी व्यापक रूप से उगाई जाती है। यह विटामिन 'ए', 'सी', 'बी6', लौह तत्व और पोटैशियम का अच्छा स्रोत है तथा इसमें पाये जाने वाले कैप्सैसिन यौगिक के कारण यह औषधीय दृष्टिकोण से भी महत्वपूर्ण है। मिर्च की खेती से लाखों किसानों को रोजगार और आय प्राप्त होती है। परंतु कटाई के बाद यदि उचित प्रबंधन नहीं किया जाए तो मिर्च की गुणवत्ता, तीखेपन, रंग और बाजार मूल्य में भारी गिरावट आ जाती है। मिर्च की कटाई के तुरंत बाद छंटाई (ग्रेडिंग), सफाई और छाया में या धूप की सहायता से सुखाना अत्यंत आवश्यक होता है जिससे रंग और तीखेपन का सरंक्षण होता है। इसके अलावा नमी-रहित और कीटमुक्त भंडारण भी जरूरी है, ताकि फफूंदी, कीड़ों और खराबी से बचा जा सके। मिर्च का मूल्यवर्धन जैसे- मिर्च का चूर्ण (पाउडर), अचार, सॉस आदि के रूप में प्रसंस्करण, किसानों की आमदनी में अतिरिक्त वृद्धि की संभावनाएं प्रदान करता है। मिर्च की कटाई के बाद की वैज्ञानिक प्रक्रियाएँ अपनाकर न केवल उपज की गुणवत्ता बरकरार रखी जा सकती है, बल्कि निर्यात क्षमताओं में भी वृद्धि की जा सकती है।

मिर्च की तुड़ाई का उपयुक्त समय: मिर्च की तुड़ाई फलों की उपयोगिता (हरी या सूखी मिर्च) और किस्म पर निर्भर करती है। हरी मिर्च के लिए तुड़ाई तब की जाती है जब फल पूर्ण विकसित होकर हरे, चमकीले और कोमल होते हैं, लेकिन बीज पूर्णतः परिपक्व नहीं होते। इस अवस्था में तुड़ाई करने से मिर्च का स्वाद तीखा होता है और बाजार में अच्छी कीमत मिलती है। सूखी मिर्च के लिए तुड़ाई तब की जाती है जब फल पूर्ण परिपक्व होकर लाल रंग के हो जाते हैं। इस अवस्था में फलों में तीखापन, रंग और सूखने की क्षमता अधिक होती है। तुड़ाई प्रातः या संध्या समय की जानी चाहिए जब तापमान कम हो जिससे फलों को चोट या नुकसान कम होता है। साथ ही तुड़ाई के लिए हाथों को दस्ताने या कपड़े से ढककर रखना चाहिए ताकि कैप्सैसिन यौगिक के कारण त्वचा पर जलन न हो। तुड़ाई समय पर और सावधानीपूर्वक करने से मिर्च की गुणवत्ता और बाजार मूल्य दोनों में सुधार होता है।

तुड़ाई के बाद सफाई और छंटाई: मिर्च की तुड़ाई के बाद उसकी सफाई और छंटाई अत्यंत महत्वपूर्ण होती है जिससे उत्पाद की गुणवत्ता, विपणन क्षमता और भंडारण जीवन बेहतर होता है। ताजी हरी मिर्च की सफाई में हाथ से पत्तियाँ, डंठल के टुकड़े, रोगग्रस्त या कीटग्रस्त मिर्च हटाई जाती हैं। कभी-कभी हल्के पानी का छिड़काव कर धूल-मिट्टी हटाई जाती है, लेकिन अत्यधिक नमी से बचना ज़रूरी होता है क्योंकि इससे सड़न की संभावना बढ़ जाती है। सुखाने का कार्य छायादार और हवादार स्थान में किया जाता है। छंटाई के दौरान मिर्च को उनके रंग (गहरा हरा या चमकीला लाल), आकार (लंबाई और मोटाई), रूप (सीधा या टेढ़ा), चमक, सतह की चिकनाई और बीज की मात्रा के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है। हरी मिर्च के लिए गहरे हरे रंग की, मध्यम आकार की, चमकदार और बिना दाग वाली मिर्चों को उच्च श्रेणी में रखा जाता है, जबकि लाल मिर्च के लिए गहरा लाल रंग, पतली त्वचा, तीखापन और कम बीजवाला होना प्रमुख गुण होते हैं। छंटाई सामान्यतः हाथ से की जाती है, परंतु बड़े स्तर पर यांत्रिक विधि का प्रयोग भी किया जा सकता है। यह प्रक्रिया न केवल उपभोक्ता की मांग को पूरा करने में सहायक होती है, बल्कि प्रसंस्करण उद्योगों के लिए भी एकरूपता और गुणवत्ता भी सुनिश्चित करती है।

सुखाने की विधियाँ

पारंपरिक विधियाँ

धूप में सुखाना: यह सबसे पुरानी और सामान्य विधि है

जिसमें मिर्च को खुले स्थान पर सीधे सूर्य की रोशनी में सुखाया जाता है। मिर्च को बिछा कर या डोरी से लटका कर सूखने के लिए छोड़ दिया जाता है। अधिकतर किसान मिर्च को सुखाने के लिए इसी विधि का प्रयोग करते हैं हालांकि यह विधि सस्ती और आसान होती है, परंतु इसमें मौसम की अनिश्चितताओं (जैसे-बारिश, आर्द्रता) के कारण नुकसान हो सकता है। इस विधि में मिर्च की रंगत और गुणवत्ता में भी बदलाव हो सकता है।

हवा में सुखाना: इस विधि में मिर्चों को छायादार स्थान पर लटका कर हवा के संपर्क में रखा जाता है। यह विधि सूर्य की सीधी रोशनी से बचाती है, प्राचीन समय में व्यवसायिक स्तर पर मिर्च पाउडर बनाने के लिए इस विधि का उपयोग किया जाता था जिससे मिर्च का रंग और स्वाद बेहतर रहता है। हालांकि, यह विधि धीमी और अधिक समय लगता है।

आग पर सुखाना: इस विधि में मिर्च को लकड़ी या कोयले के चूल्हे पर कम आंच में सुखाया जाता है। इसमें मिर्च का स्वाद अधिक तीव्र हो सकता है, लेकिन अत्यधिक गर्मी के कारण उसका रंग और पोषण घट सकता है।

आधुनिक/यांत्रिक विधियाँ

- **हॉट एयर ड्रायर:** इसमें मिर्च को नियंत्रित तापमान (50-70 डिग्री सेन्टीग्रेड) और तेज हवा के प्रवाह में सुखाया जाता है। यह विधि तेजी से नमी को हटाती है जिससे मिर्च की गुणवत्ता बनाए रहती है और समय की बचत होती है। मिर्च का रंग और आकार इस प्रक्रिया में अच्छा बना रहता है और यह बड़ी मात्रा में मिर्चों को सुखाने के लिए उपयुक्त है।
- **डिह्यूस्ड एयर ड्रायर:** इस विधि में मिर्च को एक नियंत्रित वातावरण में रखा जाता है, जहाँ तापमान और आर्द्रता का संतुलन बनाए रखा जाता है। यह विधि मिर्च के पोषक तत्वों को सुरक्षित रखने के लिए आदर्श होती है, क्योंकि इसमें अत्यधिक गर्मी का प्रयोग नहीं होता है। यह तरीका ऊर्जा की बचत करता है और मिर्च की गुणवत्ता को भी बेहतर बनाये रखता है।
- **फ्रीज ड्राईंग:** यह एक उच्च तकनीकी प्रक्रिया है जिसमें मिर्च को पहले बहुत ठंडा किया जाता है और फिर इसके अंदर की नमी को वाष्पीकरण के द्वारा बाहर निकाला जाता है। इस प्रक्रिया में मिर्च का रंग, स्वाद और पोषण स्तर अधिकतम बना रहता है और यह विधि सबसे प्रभावी होती है जब पोषक तत्वों की रक्षा प्राथमिकता हो।
- **माइक्रोवेव ड्राईंग:** इसमें मिर्चों को माइक्रोवेव यंत्र के माध्यम से सुखाया जाता है। यह विधि बहुत तेज़ है और इसमें कम समय में नमी को हटाया जा सकता है। माइक्रोवेव ड्राईंग मिर्च की गुणवत्ता और स्वाद पर न्यूनतम असर डालती है, परंतु इसका खर्च और तकनीकी जटिलताएँ अधिक होती हैं।

पारंपरिक विधियाँ जैसे-धूप और हवा में सुखाना आसान तरीका हैं, लेकिन इनकी प्रक्रिया धीमी और मौसम पर निर्भर होती है, जबकि आधुनिक विधियाँ जैसे- हॉट एयर ड्राईंग, फ्रीज ड्राईंग, माइक्रोवेव ड्राईंग तेज़ और नियंत्रित होती हैं जिससे मिर्च की गुणवत्ता, रंग और पोषक तत्व सुरक्षित रहते हैं, लेकिन ये महंगी और तकनीकी रूप से अधिक जटिल हो सकती हैं।

मिर्च तुड़ाई उपरांत हानि एवं प्रबंधन

हानि का प्रकार	कारण	निवारण
रंग बदलना	लंबे समय तक धूप में सुखाना	यांत्रिक विधि से सुखाना
	अपरिपक्व फलों की तुड़ाई	परिपक्व फलों की तुड़ाई
फफूंद लगना	अनुचित सुखाने की विधि	उचित सुखाई की विधि
	खराब भंडारण की स्थिति	उचित भंडारण
बीज का नुकसान	शारीरिक चोट	ठीक से देखभाल
	अनुचित पैकिंग	सावधानीपूर्वक पैकिंग
	ढीला डंठल	सही किस्म का चयन
	फली छेदक	
फलों पर झुर्रियाँ पड़ना	लंबे समय तक धूप में सुखाना	यांत्रिक विधि से सुखाना
	अधिक सुखाना	उपयुक्त अवधि तक सुखाना
	देर से तुड़ाई	सही समय पर तुड़ाई

भंडारण के तरीके (नमी नियंत्रण एवं कीट प्रबंधन): मिर्च की गुणवत्ता और भंडारण क्षमता बनाए रखने के लिए वैज्ञानिक भंडारण विधियों का पालन आवश्यक है। नमी नियंत्रण के अंतर्गत ताज़ी मिर्च को भंडारण से पूर्व 8–10 प्रतिशत सुरक्षित नमी स्तर तक सुखाया जाना चाहिए ताकि फफूंद या सड़न की संभावना न रहे। भंडारण स्थान में वायुसंचार अच्छा होना चाहिए और सापेक्षिक आर्द्रता 65 प्रतिशत से कम होनी चाहिए। कंटेनरों में कैल्शियम क्लोराइड या सिलिका द्रव्य जैसे नमी अवशोषक पदार्थों का प्रयोग किया जा सकता है। वैज्ञानिक भंडारण में यांत्रिक आर्द्रता नियंत्रक का भी प्रयोग किया जाता है। कीट प्रबंधन के अंतर्गत एलमिनियम फॉस्फाइड से धुआं/धुनी द्वारा भंडारित कीटों जैसे- तम्बाकू कीड़ा, लाल आटा चींटी तथा घुन को नियंत्रित किया जाता है। जैविक विकल्प के रूप में नीम की पत्ती का चूर्ण भी मिर्च में मिलाकर सुरक्षा प्रदान की जा सकती है। बहुपरतीय पॉलिमर बैग या हवाबंद पैकिंग में भंडारण से कीट संक्रमण की संभावना और भी कम हो जाती है। नियमित निगरानी और स्वच्छ भंडारण वातावरण भंडारण प्रबंधन का आवश्यक भाग हैं।

मिर्च पाउडर व अन्य मूल्यवर्धित उत्पादों का प्रसंस्करण

- **लाल मिर्च चूर्ण (पाउडर) निर्माण:** लाल मिर्च पाउडर के प्रसंस्करण में पहले ताज़ी मिर्च को धूप में अच्छी तरह सुखाया जाता है जब तक उसमें 8-10 प्रतिशत तक ही नमी रह जाए। इसके बाद सूखी मिर्च को साफ करने के उपरान्त बारीक चूर्ण में बदला जाता है। चूर्ण को नमी और प्रकाश से बचाकर हवाबंद भण्डारण में संग्रहित किया जाता है ताकि इसका रंग, तीखापन और सुगंध बनी रहे। लाल मिर्च चूर्ण बनाने के लिए आवश्यक है कि सही मिर्च किस्म का चयन किया जाए।
- **हरा मिर्च चूर्ण (पाउडर)**- हरा मिर्च का चूर्ण, हरी मिर्च को सुखाकर और पीसकर तैयार किया जाता है। इसमें प्राकृतिक तीखापन, स्वाद और रंग बनाये रखने के लिए उचित सुखाने की प्रक्रिया अपनाई जाती है, यांत्रिक विधि अथवा पारंपरिक विधि से सुखाया जाता है। हरी मिर्च पाउडर का उपयोग सब्ज़ियों, चटनी, सॉस और अन्य खाद्य उत्पादों में तीखापन बढ़ाने के लिए किया जाता है। यह उत्पाद लंबे समय तक भंडारण योग्य होता है और स्थानीय से लेकर अंतर्राष्ट्रीय बाज़ारों में इसकी अच्छी माँग है जिससे किसानों और उद्यमियों को अतिरिक्त आय का एक अच्छा साधन प्राप्त हो सकता है।
- **अचार निर्माण:** हरी मिर्च का उपयोग अचार बनाने में होता है जिसमें मिर्च को धोकर छोटे टुकड़ों में काटा जाता है और सरसों के तेल, नमक, मसाले और सिरके के साथ मिलाकर कंटेनरों में भर दिया जाता है। यह प्रक्रिया नियंत्रित तापमान पर की जाती है ताकि उत्पाद अधिक समय तक सुरक्षित रहे।
- **मिर्च फ्लेक्स और पेस्ट:** मिर्च फ्लेक्स के लिए सूखी मिर्च को मोटे रूप में पीस लिया जाता है, जबकि पेस्ट के लिए ताज़ी मिर्च को पीसकर परिरक्षक मिलाकर जीवाणुरहित पात्र में भर दिया जाता है। ये उत्पाद त्वरित उपयोग और उपभोक्ता सुविधा के लिए लोकप्रिय हैं।
- **मिर्च ऑयल:** तीखी मिर्च से निष्कर्षण विधियों द्वारा मिर्च का तीखा तेल प्राप्त किया जाता है जिसे खाद्य पदार्थों, दवा और सौन्दर्य उद्योग में उपयोग किया जाता है।

बाजार में विक्रय और निर्यात की संभावनाए: भारत विश्व का सबसे बड़ा मिर्च उत्पादक और निर्यातक देश है और यहाँ की मिर्च को उसकी तीव्रता, रंग, सुगंध और गुणवत्ता के कारण अंतर्राष्ट्रीय बाजार में अत्यधिक मांग प्राप्त है। घरेलू बाजार में मिर्च का उपयोग ताजे रूप में, सूखे रूप में, मिर्च पाउडर, अचार तथा औषधीय व खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों में होता है जिससे इसकी निरंतर मांग बनी रहती है। निर्यात की दृष्टि से भारत से विभिन्न प्रजातियों की मिर्च को अमेरिका, चीन, वियतनाम, बांग्लादेश, श्रीलंका, यूएई, मैक्सिको, मलेशिया और थाईलैंड जैसे देशों में निर्यात किया जाता है। मिर्च से तैयार मूल्यवर्धित उत्पाद की वैश्विक बाजार में निरंतर मांग बनी हुई है।

भारत सरकार द्वारा कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण, मसाला बोर्ड एवं व्यापारिक निर्यात योजना आदि योजनाओं के तहत निर्यातकों को प्रोत्साहन, वित्तीय सहायता, प्रमाणीकरण तथा अंतर्राष्ट्रीय व्यापार मेलों में भागीदारी जैसे समर्थन दिए जाते हैं। डिजिटल मंच और ई-कॉमर्स वेबसाइट्स के माध्यम से किसान व छोटे उद्यमी भी अब सीधे उपभोक्ताओं या थोक खरीदारों से जुड़ सकते हैं। उचित छंटाई, पैकेजिंग, विशिष्ट पहचान तथा गुणवत्ता नियंत्रण के साथ बाजार में मिर्च के विक्रय व निर्यात की संभावनाएँ अत्यंत उज्ज्वल हैं।

हाइड्रोपोनिक्स से सब्जी उत्पादन

नीतीश सिंह, शुभम कुमार तिवारी, अनूप कुमार सिंह एवं सुनील कुमार सिंह
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

इस खेती तकनीक में बाग़वान द्वारा पौधों की उगाई जाने वाली पर्यावरण को नियंत्रित करने की क्षमता, पानी और खाद का उपयोग कम करने की क्षमता और उत्पादन में वृद्धि करने की क्षमता शामिल होती है। हाइड्रोपोनिक्स खेती विधि का उपयोग फल और सब्जियों सहित विभिन्न फसलों को उगाने के लिए किया जा सकता है. हाइड्रोपोनिक खेती हमारी दुनिया की कई मौजूदा कृषि समस्याओं का समाधान प्रदान करती है। शहरी किसान तेजी से हाइड्रोपोनिक्स की ओर रुख कर रहे हैं, जो छतों पर कीटनाशक मुक्त उपज उगाने की एक जल-बचत विधि है। एक शोध के अनुसार, भारत में हाइड्रोपोनिक्स बाजार वर्ष 2020 और 2027 के बीच 13.53 प्रतिशत की चक्रवृद्धि वार्षिक वृद्धि दर से बढ़ने की उम्मीद है।

हाइड्रोपोनिक्स के तहत पालक की खेती

कैसे होती है हाइड्रोपोनिक खेती?

हाइड्रोपोनिक खेती मिट्टी के बिना पौधों एवं साग-सब्जी को उगाने की एक बेहतरीन विधि है। हाइड्रोपोनिक खेती पाइपों के माध्यम से की जाती है, इसमें पाइपों के ऊपरी हिस्सा में निर्धारित दूरी पर छेद की जाती है। पाइपों में पौधों को पोषक तत्वों से भरपूर घोल में उगाया जाता है जो उनके विकास के लिए सभी आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करता है। जड़ों को घोल में डुबाया जाता है जिससे वे पोषक तत्वों और पानी को आवश्यकतानुसार अवशोषित कर पाते हैं।

हाइड्रोपोनिक्स खेती के लाभ

हाइड्रोपोनिक्स एक रेगिस्तान, सूखे क्षेत्र, छतें, गंदे मिट्टी क्षेत्र या उन किसी भी पर्यावरण में उपयोग किया जा सकता है, जहाँ पारंपरिक कृषि संभव न हो। हाइड्रोपोनिक्स खेती के बहुत सारे लाभ हैं इससे विभिन्न जलवायु और स्थानों में उच्च उत्पादन हासिल किया जा सकता है। इस खेती में मिट्टी की आवश्यकता नहीं होती है, इसलिए यह उन क्षेत्रों में उपयोग किया जा सकता है जहाँ पौधों की खेती के लिए परंपरागत कृषि के लिए उचित प्राकृतिक संसाधन नहीं होते हैं। साथ ही, हाइड्रोपोनिक्स खेती में मिट्टी आधारित खेती की तुलना में कम पानी की आवश्यकता होती है जिससे यह प्रभावी और पर्यावरण के प्रति सजग होता है।

हाइड्रोपोनिक सिस्टम के प्रकार

हाइड्रोपोनिक सिस्टम के कई प्रकार से काम करती हैं और उसके अपने फायदे और नुकसान भी हैं। हाइड्रोपोनिक सिस्टम के 6 अलग-अलग प्रकार है। जो निम्नानुसार हैः

- डीप वाटर कल्चर) सिस्टम
- न्यूट्रेंट एलिमेंट फिल्म तकनीक सिस्टम
- ड्रिप सिस्टम
- एब्ब एन्ड फ्लो(फ्लड और ड्रेन) सिस्टम
- एरोपोनिक्स
- विक सिस्टम

हाइड्रोपोनिक पोषण माध्यम की संरचना

पानी के अलावा, हाइड्रोपोनिक विकास माध्यम में रॉकवूल, हाइड्रोकॉर्न (छोटी मिट्टी की चट्टानें), नारियल फाइबर या चिप्स, पेर्लाइट, रेत और वर्मीक्यूलाइट शामिल हो सकते हैं। ये तत्व 'निष्क्रिय' होते हैं और पोषक विलयन के साथ अभिक्रिया नहीं करते हैं। इन तत्वों की झरझरा प्रकृति पौधों को पोषक तत्वों की आपूर्ति में मदद करती है। हालांकि, किसी भी कवक या मोल्ड के विकास से बचने के लिए नमी के स्तर की नियमित रूप से जांच की जानी चाहिए। अन्यथा, यह टयूबिंग सिस्टम को रोक देगा और अंततः पौधे मर सकते हैं।

हाइड्रोपोनिकली उगाए जाने वाले पौधे

आमतौर पर हाइड्रोपोनिकली उगाए जाने वाले पौधों में टमाटर, मिर्च, खीरे, स्ट्रॉबेरी, लेट्यूस, धनिया और पालक शामिल है जो आमतौर पर वाणिज्यिक उपयोग के लिए होते हैं।

निर्यात योग्य भिण्डी की उत्पादन तकनीक

सौरभ सिंह, प्रदीप कर्मकार, विद्या सागर, *हिमांशु सिंह, बृजेश कुमार मौर्य, **प्रवीण सिंह, सुनील कुमार सिंह एवं राघवेन्द्र प्रताप सिंह

भा.कृ.अनु.प.-भा.स.अनु. सं., वाराणसी, *बां.कृ. एवं प्रौ.वि.वि., बांदा, **सं.बा.भा.सिं.वि.वि., जालंधर

भिण्डी जिसे आमतौर पर लेडीज फिंगर कहा जाता है, एक लोकप्रिय सब्जी फसल है जो दुनिया भर के उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में उगाई जाती है। यह नाजुक, चिपचिपे हरे फलों के लिए जानी जाती है, इसको न केवल उसके पाक उपयोगों के लिए बल्कि उसके पोषण संबंधी लाभों के लिए भी व्यापक रूप से मान्यता प्राप्त है। भिण्डी खाद्य रेशा, विटामिन 'ए', 'सी' और एंटीऑक्सीडेंट्स से भरपूर होती है, जो इसे एशिया, अफ्रीका के लोगों के आहारों में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भारत दुनिया का सबसे बड़ा भिण्डी उत्पादक और निर्यातक है जो वैश्विक बाजार में महत्वपूर्ण योगदान देता है। यह लेख भिण्डी की खेती की वैश्विक और भारतीय महत्वता, इसकी खेती की प्रथाओं, कटाई उपरान्त प्रबंधन और इस उपयोगी फसल के निर्यात की संभावनाओं का अन्वेषण करता है।

भिण्डी का वैश्विक और भारतीय महत्व

वैश्विक महत्व

भिण्डी उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों के कई देशों में उगाई जाती है। एक आर्थिक फसल के रूप में, इसका छोटे किसानों के लिए महत्वपूर्ण महत्व है, जो स्थानीय खाद्य सुरक्षा और आय सृजन में योगदान देती है। भिण्डी की वैश्विक मांग में वृद्धि हो रही है, जो स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता और इसकी विविध पाक उपयोगों के कारण है। भिण्डी के ताजे फलों का सेवन किया जाता है और इसे सूखे या जमे हुए रूपों, अचार और अन्य मूल्यवर्धित उत्पादों में भी संसाधित किया जाता है। वर्ष 2023 में भिण्डी का वैश्विक उत्पादन भारत द्वारा अग्रणी रहा, इसके बाद नाइजीरिया, सूडान और इराक हैं।

सारिणी:1: वर्ष 2023 में भिण्डी का वैश्विक उत्पादन

देश	उत्पादन (मैट्रिक टन)	वैश्विक उत्पादन का प्रतिशत
भारत	6,350,000	69 प्रतिशत
नाइजीरिया	1,300,000	14 प्रतिशत
सूडान	800,000	8 प्रतिशत
इराक	350,000	4 प्रतिशत
अन्य देश	450,000	5 प्रतिशत

डेटा स्रोतः एफ.ए.ओ. (2023)

भिण्डी की बढ़ती अंतर्राष्ट्रीय मांग स्वास्थ्य के प्रति जागरूक आहारों में वृद्धि और विटामिन, खनिज और एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर सब्जियों के बढ़ते उपभोग से प्रेरित है।

भारतीय कृषि में भूमिका

भारत विश्व में भिण्डी का सबसे बड़ा उत्पादक है, जो वैश्विक भिण्डी उत्पादन का लगभग 69 प्रतिशत योगदान देता है। महाराष्ट्र, गुजरात, उत्तर प्रदेश और तमिलनाडु भिण्डी की खेती के लिए प्रमुख क्षेत्र है। इन क्षेत्रों में भिण्डी एक नकद फसल के रूप में उगायी जाती है जो किसानों की आय में वृद्धि करती है। भारत की वैश्विक भिण्डी बाजार में प्रमुखता का कारण अनुकूल कृषि-जलवायु स्थितियाँ, नवोन्मेषी कृषि तकनीकें और उच्च उपज वाली किस्मों का विकास है। भारतीय भिण्डी का निर्यात मुख्य रूप से यूरोप, मध्य पूर्व और उत्तरी अमेरिका के बाजारों में होता है।

सारिणी-2: भिण्डी के अग्रणी राज्य

राज्य	उत्पादन (मैट्रिक टन)	खेती के अंतर्गत क्षेत्र (हेक्टेयर)
महाराष्ट्र	1,050,000	85,000
गुजरात	800,000	70,000
उत्तर प्रदेश	550,000	65,000
तमिलनाडु	500,000	60,000
पश्चिम बंगाल	450,000	55,000

भिण्डी की खेती

आदर्श कृषि-जलवायु स्थितियाँ: भिण्डी एक गर्म मौसम की फसल है जो धूप और अच्छी जल निकासी वाली मिट्टी वाले क्षेत्रों में उगती है। भिण्डी की खेती के लिए आदर्श मिट्टी प्रकार बलुई दोमट है जिसमें पी.एच. मान की सीमा 6.0-6.8 होती है। फसल के लिए 25-35 डिग्री सेन्टीग्रेड के बीच का तापमान आवश्यक है। भिण्डी को ठंड और जलभराव के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होती है, जो उपज पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाल सकती है। वर्षा की आवश्यकताएँ प्रति वर्ष 500-700 मिमी. के बीच होती हैं।

निर्यात योग्य भिण्डी की किस्में: भारत में भिण्डी की खेती

बड़े पैमाने पर किया जा रहा है जिससे माँग के अनुसार बे-मौसम के दौरान अन्य प्रदेशों एवं देशों को इसकी आपूर्ति की जा सके। निर्यात के लिए उत्पादित भिण्डी में कई तरह के कीटों एवं पौधों पर रोगों का प्रकोप होना एवं नियंत्रण हेतु रोगनाशकों का प्रयोग तना अनेक प्रकार के कीटनाशकों के अधिक मात्रा के संचयन का एक मूल्य समस्या है। उपरोक्त रोगरोधी किस्में जैसे-वर्षा उपहार, पूसा ए-4, पूसा सावनी, परभनी क्रांति का भारत से निर्यात किया जाता है। इसके अलावा भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश) द्वारा विकसित काशी उत्कर्ष, काशी सहिष्णु तथा काशी पराक्रम जैसी किस्मों के फलों का उपयुक्त समय पर तुड़ाई करने से निर्यात योग्य भिण्डी प्राप्त होती है।

कीट और रोग प्रबंधन

सफेद मक्खी: यह कीट पत्तियो का रस चूषते हैं जिससे पत्ती का हरा पन दूर हो जाता है।

फली बेधक: फलों में छेद करते हैं।

येलो वेन मोजैक: सफेद मक्खियों द्वारा फैलता है, यह एक प्रमुख उपज सीमित करने वाला रोग है।

पाउडरी मिल्डयू: यह एक फंगल रोग है जो पत्तियों और फलों को प्रभावित करता है।

एकीकृत कीट प्रबंधन प्रथाओं जैसे-फसल चक्रण, प्रतिरोधी किस्मों का उपयोग और जैव कीटनाशकों का उपयोग इन समस्याओं के प्रभावी नियंत्रण के लिए आवश्यक है।

भिण्डी का कटाई उपरान्त प्रबंधन

भिण्डी में कटाई उपरान्त प्रबंधन की हानिया काफी अधिक होती है जो मुख्य रूप से इसकी उच्च नाशवंतता के कारण होती है। यदि सही तरीके से प्रबंधित नही किया गया, तो फल जल्दी खराब हो जाते हैं, काले धब्बे विकसित होते हैं या नरम हो जाते हैं जिससे फली बेचने के योग्य नहीं रह जाते हैं।

- **भण्डारण और हैडलिंग:** हानियाँ को कम करने के लिए भिण्डी को 7-10 डिग्री सेन्टीग्रेड के बीच के तापमान पर 90-95 प्रतिशत सापेक्ष आर्द्रता पर संग्रहीत किया जाना चाहिए। अधिक कम तापमान ठंड के घावों का कारण बन सकते हैं, जैसे धारियों पर काले रंग का परिवर्तन।
- **पैकेजिंग:** भिण्डी की गुणवत्ता बनाये रखने के लिए उचित पैकेजिंग निर्यात के लिए महत्वपूर्ण है। ताजा भिण्डी को परिवहन के लिए आमतौर पर वेंटिलेशन होल वाली कार्ड बोर्ड बक्से का उपयोग किया जाता है। ये बक्से की ताजगी को बनाए रखने और यांत्रिक क्षति को रोकने में मदद करते हैं।

सारिणी-3: पैकेंजिग की आवश्यक सामग्री

पैकेज प्रकार	आयाम	वजन क्षमता	वेंटिलेशन
कार्ड बोर्ड	500 मिमी. × 300 मिमी.	10-15 किग्रा.	हाँ
प्लास्टिक ट्रे (नेट वर्क)	400 मिमी. × 250 मिमी.	5-10 किग्रा.	हाँ
जूट बैग	500 मिमी. × 300 मिमी.	15-20 किग्रा.	नहीं

भिण्डी का निर्यात

निर्यात की संभावनाएँ

भारत में भिण्डी के निर्यात की संभावनायें तेजी से बढ़ रही है। उच्च गुणवत्ता वाली भिण्डी, विशेष रूप से ताजी भिण्डी, यूरोप, मध्य पूर्व और उत्तरी अमेरिका में मांग में है। भारतीय भिण्डी की विशेषता इसकी ताजगी, स्वाद और औषधीय गुण है जो इन्हें पसंदीदी विकल्प बनाते हैं।

मार्केटिंग और ब्रांडिंग

भिण्डी के निर्यात के लिए सही मार्केटिंग रणनीतियाँ अपनाना आवश्यक है। उत्पादकों और निर्यातकों को इस फसल की गुणवत्ता, स्वच्छता और उपभोक्ता मांग को ध्यान में रखते हुए लक्षित बाजारों में ध्यान केंद्रित करना चाहिए। इंटरनेट पर ऑनलाइन मार्केटप्लेस और सोशल मीडिया के माध्यम से उपभोक्ता जागरूकता और मांग को बढ़ाने के लिए कदम उठाने की आवश्यकता है।

भिण्डी महत्वपूर्ण और मूल्यवान फसल है जो भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसकी उगायी, प्रबंधन और निर्यात में नवाचारों के माध्यम से इस फसल की उत्पादकता और आर्थिक लाभ में वृद्धि संभव है। भारत में भिण्डी के निर्यात की संभावनाएँ व्यापक हैं, लेकिन इसे प्रभावी प्रबंधन और मार्केटिंग के साथ आगे बढ़ाने की आवश्यकता है। भिण्डी की खेती, निर्यात और पोस्ट-हार्वेस्ट प्रबंधन की तकनीकों के विकास से भारतीय किसान बेहतर आजीविका प्राप्त कर सकते हैं और भिण्डी की वैश्विक बाजार में प्रतिस्पर्धात्मता को बढ़ा सकते हैं।

सब्जी फसलों में ग्राउंडनट बड नेक्रोसिस वायरस का प्रकोप एवं प्रबंधन

श्वेता कुमारी, *राज किरण, मंजुनाथ गौड़ा टी, प्रताप ए. दिवेकर, के.के. पाण्डेय, ए.एन. सिंह एवं राजेश कुमार

भा.कृ.अनु.प.भा. स. अनु. सं., वाराणसी, *भा.कृ.अनु.प.-रा. पौ.आनु.सं. ब्यूरो, नई दिल्ली

थ्रिप्स द्वारा प्रसारित ऑर्थोटॉस्पोवायरस (परिवार बुन्याविरिडी) विश्व स्तर पर सब्जी की खेती को प्रभावित करने वाला महत्वपूर्ण विषाणु है जो पौधों में गम्भीर समस्यायें उत्पन्न करता है। वर्तमान में विश्वभर में 30 ऑर्थोटॉस्पोवायरस प्रजातियाँ ज्ञात हैं, जिनमें 11 सुनिश्चित और 19 अस्थायी प्रजातियाँ (सीधे अक्षरों में) शामिल हैं। विश्व स्तर पर दर्ज 11 ऑर्थोटॉस्पोवायरस प्रजातियों में से 7 विषाणु प्रजातियाँ जैसे- ग्राउंड नट (पी नट) बड नेक्रोसिस वायरस, वाटर मेलन बड नेक्रोसिस वायरस, कैप्सिकम क्लोरोसिस वायरस, टोमैटो स्पॉटेड विल्ट वायरस, आईरिस येलो स्पॉट वायरस, ग्राउंड नट येलो स्पॉट वायरस एवं मेलन येलो स्पॉट वायरस भारत में रिपोर्ट की गई हैं। इनमें से ग्राउंड नट (पी नट) बड नेक्रोसिस वायरस, वाटर मेलन बड नेक्रोसिस वायरस एवं ग्राउंड नट येलो स्पॉट वायरस तीन टॉस्पो वायरस भारत में सब्जी उत्पादन के लिए प्रमुख बाधक कारक हैं, जो टमाटर, मिर्च, ककड़ी और आलू जैसी फसलों के उत्पादन के लिए गंभीर खतरा उत्पन्न करते हैं। इन तीनों में ग्राउंड नट (पीनट) बड नेक्रोसिस वायरस भारतीय उपमहाद्वीप में सबसे विनाशकारी वायरस माना जाता है जो विभिन्न कुलों जैसे- फैबेसी, सोलानेसी, कुकुरबिटेसी, मालवेसी एवं एस्टेरेसी से संबंधित 30 विभिन्न पौधों को संक्रमित करता है। टॉस्पोवायरस की त्रिपक्षीय जीनोम संरचना होती है जिसमें तीन सिंगल-स्ट्रैंडेड आर.एन.ए. (एस.एस. आर.एन.ए.) खंड होते हैं। एस.आर.एन.ए. (लगभग 2.9 के.बी.), एम.आर.एन.ए. (एम्बीसन) (लगभग 5 के.बी.). एल.आर.एन.ए. (नेगेटिव सेंस) (लगभग 8.9 के.बी.) ग्राउंड नट (पी नट) बड नेक्रोसिस वायरस के संक्रमण के कारण होने वाली उपज हानि फसल के अनुसार भिन्न-भिन्न होती है जैसे-मूंगफली में 70-90 प्रतिशत, टमाटर में 100 प्रतिशत, आलू में 29 प्रतिशत, दलहनी में 92 तक की क्षति भारत में देखी गई है। इस प्रकार ग्राउंड नट (पी नट) बड नेक्रोसिस वायरस सब्जी उत्पादन के लिए एक गंभीर और ध्यान देने योग्य विषाणु बन चुका है।

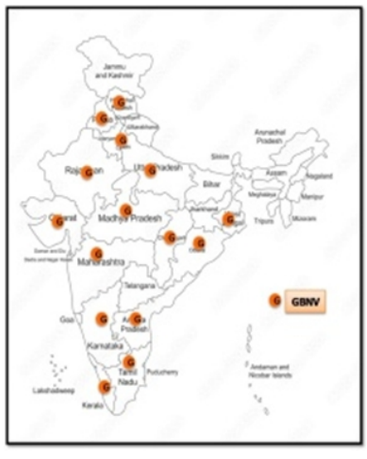

टॉस्पोवायरस लक्षण: टॉस्पोवायरस संक्रमण से जुड़ी सब्जियों में विशिष्ट लक्षण उत्पन्न होते हैं जिनमें नई पत्तियों पर क्लोरोटिक/नेक्रोटिक धब्बे, पौधे का विकास रूक जाना (बौनापन), पत्तियों के डंठल, बढ़ते सिरे और कलियों में नेक्रोसिस शामिल है। प्रारम्भ में नई पत्तियों गर हल्के क्लोरोटिक धब्बे दिखाई देते हैं, जो बाद में क्लोरोटिक रिंग में परिवर्तित होते हैं। इसके अतिरिक्त, गंभीर रूप से संक्रमित पौधों में तने पर नेक्रोटिक धारियाँ और पके फलों पर क्लोरोटिक रिंग धब्बे देखे गये हैं। फिर भी टॉस्पोवायरस विभिन्न होस्ट पौधों में एक जैसे लक्षण उत्पन्न करते हैं जिससे ग्राउंड नट बड नेक्रोसिस वायरस का केवल लक्षणों के आधार पर निदान करना कठिन हो जाता है।

क. लोबिया की पत्तियों पर क्लोरोटिक रिंग धब्बे

ख. मिर्च की पत्तियों पर क्लोरिटिक रिंग

ग. बैंगन की पत्तियों पर नेक्रोटिक धब्बे

ध. टमाटर की पत्तियों पर नेक्रोटिक धब्बे

ड़. टमाटर के पौधे की तने पर नेक्रोटिक धारियाँ

च. टमाटर के फलों पर क्लोरोटिक रिंग धब्बे

टॉस्पोवायरस का संचरण: लगभग 76 प्रतिशत पौधों के विषाणु वेक्टर द्वारा संचालित होते हैं, जिनमें से 55 प्रतिशत पौधों के विषाणु हेमिप्टेरन कीटर वेक्टर जैसे- एफिड्स, सफेद मक्खियाँ और थ्रिप्स द्वारा संचारित होते हैं। टॉस्पोवायरस केवल थ्रिप्स द्वारा एक स्थिर, परिसंचारी और प्रचारात्मक तरीके से संचारित होते हैं। अब तक 16 थ्रिप्स प्रजातियाँ, 29 टॉस्पोवायरस के साथ जुड़ी पाई गई हैं। भारत में फ्रैंकलिनिएला शुल्जी (कॉमन ब्लॉसम थ्रिप्स), स्किरटोथ्रिप्स डॉर्सलिस (मिर्च थिप्स), थ्रिप्स पाल्मी (मेलोन थ्रिप्स), टी. तबासी (प्याज थ्रिप्स), एफ. फुस्का (तम्बाकू थ्रिप्स) और फ. ऑक्सीडेंटलिस (वेस्टर्न फ्लावर थ्रिप्स) प्रजातियाँ ग्राउंडनट बड नेक्रोसिस वायरस के लिए सबसे खतरनाक कीट वेक्टर के रूप में प्रदर्शित किया गया है।

टॉस्पोवायरस का निदान: ग्राउंड नट बड नेक्रोसिस वायरस का निदान करने के लिए कई पहचान तकनीकों का विकास किया गया है, जिनमें एंजाइम-लिंक्ड इम्यूनोसर्बिट अस्से, रिवर्स ट्रांसक्रिप्शन-पॉलीमरेज चेन रिएक्शन, क्काटिटेटिव और रिवर्स ट्रांसक्रिप्शन-लूप-मीडिएटेड आइसोथर्मल एम्पलीफिकेशन शामिल हैं। हाल ही में बायोसेंसर जैसे नवाचार उपकरणों का विकास किया गया है जो ग्राउंड नट बड नेक्रोसिस वायरस के संक्रमित नमूनों में वायरस की टाइटर की पहचान और मात्रात्मक माप के लिए उपयोग किये जाते हैं।

ग्राउंड नट बड नेक्रोसिस वायरस का प्रबंधन: कई प्रबंधन रणनीतियों का उपयोग विभिन्न फसलों में टॉस्पोवायरस के संक्रमण को नियंत्रित करने के लिए किया जाता गया है। फिर भी ग्राउंड नट बड नेक्रोसिस वायरस का प्रभावी प्रबंधन उसके व्यापक होस्ट रेंज, थ्रिप्स में कीटनाशकों के प्रति प्रतिरोध का तीव्र विकास और फसल होस्टों में मजबूत आनुवांशिक प्रतिरोध की कमी के कारण कठिन बना हुआ है। विषाणु का प्रबंधन एक वैश्विक चुनौती बना हुआ है, क्योंकि पौधों में विषाणु संक्रमण के लिए उपचारात्मक उपाय वर्तमान में उपलब्ध नही है। इस स्थिति में रोग के प्रारम्भिक और सटीक निदान जैसी निवारक रणनीतियों का कार्यान्वयन विषाणु के फैलाव को अन्य फसलों तक सीमित उपलब्धता को देखते हुए, कीटनाशकों के माध्यम से वेक्टर नियंत्रण एक आवश्यक और प्रभावी दृष्टिकोण है, बशर्ते ये उपाय उचित समय पर लागू किये जायें जबकि कीटनाशकों का उपयोग रोग की गंभीरता को महत्वपूर्ण रूप से कम कर सकता है, अत्यधिक उपयोग अवशिष्ट विषाक्वता के कारण पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य के लिए जोखिम उत्पन्न करता है। इसलिए एकीकृत रोग प्रबंधन रणनीति को अपनाना रोग की गम्भीरता को कम करने और आर्थिक नुकसानों को न्यूनतम करने के लिए एक सतत् समाधान प्रदान करता है। इस दृष्टिकोण में कई घटक होते हैं, जिनमें कर्षण क्रियायें, फाइटोथेरपी उपाय, वेक्टर नियंत्रण, होस्ट प्रतिरोध और जैव प्रौद्योगिकी हस्तक्षेप शामिल है। जैव प्रौद्योगिकी में हाल के विकास ने वायरल रोग प्रबंधन के लिए आशाजनक उपकरण प्रस्तुत किये हैं जैसे- सी.आर.आई.एस.पी.आर./कैस-9 प्रेरित जीनोम संपादन और आर.एन.ए. इंटरफेरेंस आधारित गैर-ट्रांसजेनिक दृष्टिकोण। इनमें जीन साइलेसिंग, माइक्रो आरूमरु एवं डबल-स्ट्रैंडेड आर.एन.ए. का ट्रॉपिकल छिड़काव शामिल है। जीन सिलेंसिंग और कृत्रिम माइक्रो आर.एन.ए.एस. शामिल हैं, जिन्होंने वायरल संक्रमण से पौधों की सुरक्षा करने की क्षमता दिखायी है।

टमाटर के रोग व कीट का समेकित प्रबंधन

गौरी जी. लाल, देवराज, *ऋतु कुमारी, **अनुराग, अखिला मैथ्यू, अभिनय एवं शरद शर्मा

भा.कृ.अनु.प.- भा.स.अनु.सं., वाराणसी, *न्यू. लिं.एग्री.प्रा.लि., एग्रोस्टार, **इं.वि.वि., लखनऊ

टमाटर (*सोलनम लाइकोपर्सिकम*) का फल सब्जी के रूप में खाया जाता है। टमाटर में भरपूर मात्रा में कैल्शियम, फास्फोरस व विटामिन 'सी' पाये जाते हैं। इसमें एक प्राकृतिक पिगमेंट होता है, जिसे लाइकोपीन कहा जाता है जो टमाटर को लाल रंग प्रदान करता है। लाइकोपीन स्वास्थ्य के लिए भी फायदेमंद होता है।

(अ) प्रमुख कीट एवं उनका प्रबन्धन

फल बेधक: फल बेधक के कारण टमाटर की उपज में कमी होती है। पूर्ण विकसित हल्के हरे-पीले रंग की वयस्क सूंडी फल में वृताकार छेद करके भीतरी भाग को खाती हैं। सामान्यतयः अकेली सूंडी 2-8 फलों को खाके नष्ट कर सकती है।

प्रबंधन: शुरूआती नुकसान के समय इसके लार्वा को हाथों से भी एकत्रित किया जा सकता है। शुरूआती समय में एच.एन.पी.वी. या नीम के पत्तों का घोल बनाकर 50 ग्राम/लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। फल बेधक कीट को रोकने के लिए फेरोमोन कार्ड, स्पानोसैड 80 मिली. + स्टिकर 400 मिली./200 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

थ्रिप्स: यह कीट पत्तों का रस चूषता है, जिस कारण पत्ते मुड़ जाते हैं। पत्तों का आकार कप की तरह हो जाता है और यह ऊपर की ओर मुड़ जाते हैं। इससे फूल झड़ने भी शुरू हो जाते हैं।

प्रबंधन: 6-8 स्टीकी ट्रैप प्रति एकड़ में लगायें। उचित प्रबंधन हेतु *वर्टीसीलियम लिकानी* 5 ग्राम/लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस. एल. 60 मिली. या फिप्रोनिल 200 मिली./ 200 लीटर पानी या फिप्रोनिल 80 प्रतिशत डब्ल्यू. पी. 2.5 मिली./लीटर पानी या एसीफेट 75 प्रतिशत डब्ल्यू.पी. 600 ग्राम प्रति 200 लीटर या स्पाइनोसैड 80 मिली./ एकड़ को 200 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

सफेद मक्खी: यह कीट पत्तियों से रस चूषकर पौधों को कमज़ोर कर देती हैं।

प्रबंधन: नर्सरी में बेड को 400 मैस के नाइलोन जाल के साथ या पतले सफेद कपड़े से ढक दें। यह पौधों को कीड़ों के प्रकोप से बचाता है। सफेद मक्खी को फैलने से रोकने के लिए प्रभावित पौधों को जड़ों से उखाड़कर नष्ट कर दें। एसिटामिप्रिड 20 एस.पी. 80 ग्राम/ 200 लीटर पानी या ट्राइज़ोफोस 250 मिली./ 200 लीटर या प्रोफैनोफोस 200 मिली./ 200 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। यह छिड़काव 15 दिनों उपरान्त दोबारा करें।

पत्ते का सुरंगी कीट: यह कीट पत्तों में टेढ़ी-मेढ़ी सुरंगे बना देते हैं।

प्रबंधन: शुरूआती समय में नीम सीड करनल एक्सट्रैक्ट 5 प्रतिशत प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। नियंत्रण करने के लिए स्पीनोसैड 80 मिली. 200 लीटर पानी या ट्राइज़ोफोस 200 मिली.प्रति 200 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

मकड़ी: यह कीट 80 प्रतिशत तक पैदावार कम कर देता है। यह पत्तों को नीचे की ओर से

खाता है। प्रभावित पत्ते कप के आकार में नज़र आते हैं। इसका प्रकोप बढ़ने से पत्ते सूखने और झड़ने लग जाते हैं।

प्रबंधन: क्लोफैनापियर 15 मिली./10 लीटर, एबामैक्टिन 15 मिली. 10 लीटर या फैनाज़ाकुइन 100 मिली./ 100 लीटर, स्पाइरोमैसीफेन 22.9 एस. सी. 200 मिली./एकड़ 180 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

प्रमुख रोग एवं उनका प्रबंधन

फल का गलना: यह टमाटर की प्रमुख बीमारी है, टमाटरों पर पानी के फैलाव जैसे धब्बे बन जाते हैं। फल गलने के कारण बाद में काले और भूरे रंग में बदल जाते हैं।

प्रबंधन: बीजों को ट्राइकोडर्मा 5 ग्राम या कार्बेन्डाज़िम 2 ग्राम या थीरम 3 ग्राम/किग्रा. बीज से उपचार करें। यदि खेत में इसका संक्रमण दिखे तो प्रभावित और नीचे गिरे हुए फल और पत्ते को एकत्रित करके नष्ट कर दें। इसे रोकने के लिए मैन्कोज़ेब 400 ग्राम या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 300 ग्राम या क्लोरोथैलोनिल 250 ग्राम/ 200 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। यह छिड़काव 15 दिनों बाद दोबारा करें।

एन्थ्रोक्नोज: इस बीमारी से पौधे के प्रभावित हिस्सों पर काले धब्बे पड़ जाते हैं। यह धब्बे आमतौर पर गोलाकार और काली धारियों वाले होते हैं।

जिन फलों पर ज्यादा धब्बे हों वे पकने से पहले ही झड़ जाते हैं जिससे फसल की उपज में भारी कमी आ जाती है।

प्रबंधन: यदि इस बीमारी का संक्रमण दिखे तो इसे रोकने के लिए प्रॉपीकोनाज़ोल या हेक्साकोनाज़ोल 200 मिली./200 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

झुलसा रोग: शुरू में पत्तों पर छोटे भूरे धब्बे, बाद में ये धब्बे तने और फल के ऊपर भी दिखाई देते हैं। पूरी तरह विकसित धब्बे भद्दे और गहरे भूरे हो जाते हैं जिनके बीच में गोल सुराख होते हैं। ज्यादा प्रकोप होने पर पत्ते झड़ जाते हैं।

प्रबंधन: मैन्कोज़ेब 400 ग्राम या टेबुकोनाज़ोल 200 मिली./ 200 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। पहली छिड़काव से 10-15 दिनों के बाद दोबारा छिड़काव करें। बादल वाले मौसम में इसके फैलने का ज्यादा खतरा होता है। इसके लिए क्लोरोथैलोनिल 250 ग्राम/ 100 लीटर पानी का छिड़काव करें।

समय निर्मित चीज़ है। यह कहने के लिए कि 'मेरे पास समय नहीं है,' यह कहने जैसा है, 'मैं नहीं करना चाहता।

– लाओत्स

अंतरिक्ष में आलू उत्पादनः शोध एवं संभावनाएं

चन्द्रोदय प्रकाश तिवारी, सी.एन. राम एवं आस्तिक झा

आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, अयोध्या (उत्तर प्रदेश)

दीर्घकालिक अंतरिक्ष मिशनों में सबसे बड़ी चुनौती रही है भोजन की निरंतर आपूर्ति। पृथ्वी से भोजन ले जाना सीमित संसाधनों, भारी लागत और समय के कारण व्यावहारिक नहीं है। ऐसे में, वैज्ञानिकों के सामने यह प्रश्न खड़ा हुआ की क्या अंतरिक्ष में विशेष रूप से मंगल जैसे कठिन वातावरण में फसलें उगा सकते हैं? इसी जिज्ञासा से जन्म हुआ अन्तरिक्ष में खेती की अवधारणा का अर्थात् अंतरिक्ष यानों, चंद्र या मंगल सतह पर पौधों को उगाना ताकि अंतरिक्ष यात्री दीर्घकाल तक आत्मनिर्भर रूप से जीवन यापन कर सकें और इस पूरी अवधारणा के केंद्र में आलू को सबसे उपयुक्त माना गया। आलू एक ऐसी फसल है जिसे कम स्थान में, कम समय और सीमित संसाधनों के साथ उगाया जा सकता है। इसमें उच्च पोषण मूल्य होता है जैसे-कार्बोहाइड्रेट, पोटैशियम, विटामिन 'सी' और खाद्य रेशा (फाइबर) जो ऊर्जा और स्वास्थ्य के लिए आवश्यक हैं। आलू बीज की जगह कंद से उगाई जाती है, जो प्रयोगशाला आधारित परिस्थितियों में आसानी से अनुकूल हो सकती है। इसके पास जल, मिट्टी और पोषक तत्वों की विविध सीमाओं में भी जीवित रहने की प्राकृतिक सहनशक्ति होती है। अंतरिक्ष में आलू उगाने का अर्थ केवल शून्य गुरुत्वाकर्षण में बीज बोना नहीं है। इसमें अनेक समस्यायें भी आती हैं:

- गुरुत्वाकर्षण का अभाव जिससे जल और पोषक तत्वों का संचालन कठिन हो जाता है
- प्राकृतिक प्रकाश की अनुपस्थिति जिससे कृत्रिम प्रकाश स्रोतों की आवश्यकता होती है
- मंगल जैसे वातावरण में उच्च विकिरण, कम तापमान और कम दबाव
- मिट्टी और जल की अनुपलब्धता जिसके कारण जल और वायु संवर्धन जैसी तकनीकें आवश्यक हो जाती हैं
- उपरोक्त समस्या के मध्य वैज्ञानिकों ने ऐसे वातावरण की कल्पना की और निर्मित किया जो मंगल जैसा हो और वहीं आलू जैसी फसल को उगाने की संभावनाएँ तलाशना शुरू किया।

अंतरिक्ष एजेंसियों की भूमिका: अमेरिका से जुडी संस्था नासा ने अंतर्राष्ट्रीय आलू केंद्र (पेरू) के साथ मिलकर वर्ष 2016 में एक प्रयोग शुरू किया जिसका नाम था 'क्या आलू मंगल पर उग सकता है? भारतीय अन्तरिक्ष शोध संस्था इसरो और कुछ भारतीय कृषि संस्थानों ने भी ऐसी परियोजनाओं में रुचि दिखाना शुरू किया है जो भविष्य में भारतीय अंतरिक्ष यात्राओं में दीर्घकालिक खेती को संभव बनाए। आज आलू की कहानी केवल धरती तक सीमित नहीं रही। वह अब अंतरिक्ष में जीवन की संभावनाओं का अग्रदूत बन चुका है। यह विचार कि एक साधारण सा कंद, जो कभी अकाल में आवश्यक फसल बना था, अब मंगल ग्रह की भूमि पर भी उगने की क्षमता रखता है और मानवीय सोच और विज्ञान की शक्ति का सबसे सुंदर उदाहरण है।

प्रयोग की रुपरेखा: इस प्रयोग को 'मंगल ग्रह पर आलू' या 'मंगल ग्रह जैसी परिस्थितियों आलू उत्पादन' कहा गया। इसका प्राथमिक उद्देश्य था मंगल ग्रह पर जीवन की संभावनाएँ तलाशना, कठोर परिस्थितियों में भी खाद्य फसल उगाने की क्षमता परखना एवं भविष्य के अंतरिक्ष मिशनों के लिए स्थानीय खाद्य स्रोतों का निर्माण करना।

कैसे हुआ प्रयोग?: नेशनल एरोनॉटिक्स एंड स्पेस एडमिनिस्ट्रेशन, अमेरिका के एम्स रिसर्च सेंटर और अंतर्राष्ट्रीय आलू केंद्र, पेरू ने एक विशेष नियंत्रित कक्ष (बॉक्सनुमा कंटेनर) तैयार किया, इसमें मंगल ग्रह के समान वातावरण तैयार करने के लिए अत्यधिक कम तापमान (मंगल का औसत -60 डिग्री सेन्टीग्रेड), बहुत कम वायुदाब, कार्बन डाइऑक्साइड से भरपूर वायुमंडल, कम आर्द्रता एवं रेगिस्तानी मिट्टी (पेरू के दक्षिणी तटीय क्षेत्र की मिट्टी का उपयोग हुआ जो मंगल की मिट्टी जैसी मानी जाती है)। प्रयोग में अंतर्राष्ट्रीय आलू केंद्र की 65 से अधिक आलू की किस्मों को परखा गया। इनमें से कई किस्में सूखा, ठंड, लवणीयता और कीट रोगों के प्रति सहनशील थी। विशेष रूप से सी.आई.पी.-392797-22 नामक किस्म ने उत्कृष्ट प्रदर्शन किया तथा यह कम तापमान और उच्च कार्बन डाइऑक्साइड में भी अंकुरित हो पाई।

तकनीकी विशेषतायें: प्रयोग में जल संवर्धन और वायुवीय संवर्धन तकनीकों को शामिल किया गया जिनमें मिट्टी की आवश्यकता नहीं होती। प्रकाश उत्सर्जक डायोड आधारित प्रकाश प्रणाली का उपयोग किया गया ताकि प्रकाश संश्लेषण में कोई बाधा न आयें। तापमान, गैस, नमी और प्रकाश को

सारिणी-1: अंतरिक्ष में आलू उगाने के लिए आवश्यक वातावरणीय शर्तें

कारक	पृथ्वी पर सामान्य सीमा	अंतरिक्ष की आदर्श सीमा
तापमान (डिग्री सेन्टीग्रेड)	15–25 डिग्री सेन्टीग्रेड	16–22 डिग्री सेन्टीग्रेड
कार्बन डाइऑक्साइड स्तर (पीपीएम)	400–450	1000–1200
आर्द्रता (%)	60–80	70–80
प्रकाश तीव्रता (लक्स)	10,000–20,000	10,000–12,000
गुरुत्वाकर्षण	1g	।0g (न्यून गुरुत्वाकर्षण)
पानी की उपलब्धता	सामान्य सिंचाई	नियंत्रित बूंद प्रणाली

स्व-चालित मशीन से नियंत्रित किया गया।

परिणाम: इस शोध कार्य से यह प्रमाणित प्राप्त हुआ कि विशेष परिस्थितियों में आलू मंगल ग्रह जैसे वातावरण में भी अंकुरित एवं विकसित भी हो सकता है और यह भी निष्कर्ष निकला कि भविष्य में यदि मंगल पर संरक्षित ग्रीनहाउस बनाए जायें, तो वहाँ स्थानीय रूप से खाद्य उत्पादन संभव हो सकता है। 'यदि आलू जैसे संवेदनशील पौधे मंगल जैसे वातावरण में उग सकते हैं, तो इसका अर्थ है कि जीवन के लिए आवश्यक जैविक प्रक्रियाएँ अन्य ग्रहों पर भी संभव हो सकती हैं।'

प्रयोग की वैश्विक महत्ता: यह प्रयोग केवल अंतरिक्ष के लिए ही नहीं, बल्कि धरती पर भी उन क्षेत्रों के लिए उपयोगी साबित हुआ जहाँ परिस्थितियाँ खेती के लिए प्रतिकूल हैं, जैसे- मरुस्थल, सूखा प्रभावित क्षेत्र, लवणीय भूमि आदि। इस प्रयोग से ऐसे प्रणाली विकसित करने की प्रेरणा मिली जो जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों का सामना कर सकें।

भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) और कृषि अनुसंधान संस्थानों का प्रयासः जहाँ नासा और अंतर्राष्ट्रीय आलू केंद्र जैसी संस्थाएँ अंतरिक्ष में फसलों की खेती के क्षेत्र में अग्रणी हैं, वहीं भारत ने भी इस दिशा में गंभीर कदम उठाने शुरू कर दिये हैं। इसरो ने न केवल अंतरिक्ष में मानवयुक्त कार्यक्रमों की योजना बनाई है, बल्कि भविष्य में दीर्घकालिक अंतरिक्ष यात्रा और चंद्र-मंगल मिशनों के लिए स्थानीय खाद्य उत्पादन की संभावनाओं को भी कार्यक्रम में सम्मिलित किया है।

इसरो की प्रारंभिक गतिविधियाँ

1. बायो-पुनर्योजी जीवन समर्थन प्रणाली: इसरो के मानव अंतरिक्ष उड़ान केंद्र और विक्रम साराभाई उड़ान केंद्र के वैज्ञानिक इस प्रणाली पर कार्य कर रहे हैं, जिनका उद्देश्य है अंतरिक्ष यात्रियों के लिए ऐसी तकनीक विकसित करना जो खाद्य, जल और ऑक्सीजन को स्वयं उत्पन्न कर सकें। यह प्रणाली पौधों, सूक्ष्मजीवों और पुनर्चक्रण तकनीक पर आधारित होती है। आलू जैसी फसलें जो कम समय और सीमित संसाधनों में उग सकती हैं, इसके लिए अत्यंत उपयुक्त मानी जाती हैं।

2. अंतरिक्ष में पौधों के विकास का अध्ययन: इसरो ने भारतीय वैज्ञानिकों को प्रोत्साहित किया है कि वे सूक्ष्म गुरुत्वाकर्षण में पौधों की वृद्धि पर अध्ययन करें जिसके लिए निम्नलिखित गतिविधियाँ चल रही हैं: गुरुत्वहीनता उड़ान प्रयोग में बीज अंकुरण पर शोध और भविष्य में पृथ्वी की निचली कक्षा में छोटे उपग्रह आधारित प्रयोगशालायें।

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थानों की भागीदारी: भारत के प्रमुख कृषि अनुसंधान संस्थानों जैसे- भा.कृ.अनु.प.-केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला और भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने भी अंतरिक्ष के लिए अनुकूल आलू की किस्में विकसित करने और उनका परीक्षण शुरू कर दिया है। इन संस्थानों द्वारा नियंत्रित पर्यावरण, जल संवर्धन और वायुवसंवर्धन जैसी तकनीकों में आलू की खेती पर प्रयोग किए जा रहे हैं जिससे मिट्टी रहित कृषि प्रणाली को विकसित किया जा सके। विशेष रूप से लद्दाख जैसे अत्यधिक ठंडे और निम्न वायुदाब वाले क्षेत्रों में आलू की खेती कर वैज्ञानिकों ने मंगल जैसे चरम वातावरण का अनुकरण किया है। वर्ष 2022 में भा.कृ.अनु.प.-केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान द्वारा प्रस्तावित ' स्पडस्पेस-1' परियोजना में यह विचार रखा गया कि भविष्य में इसरो के साथ मिलकर पृथ्वी की निचली कक्षा में आलू उगाने का प्रयोग किया जा सकता है। भारत की यह पहल न केवल अंतरिक्ष कृषि में उसकी भविष्य की भूमिका तय करेगी, इस दिशा में इसरो और नासा के बीच बढ़ते सहयोग से आने वाले समय में साझा अंतरिक्ष कृषि मिशनों की भी प्रबल संभावना है।

भविष्य की संभावनाएँ: अंतरिक्ष कृषि में आलू की भूमिकाः जैसे-जैसे मानव अंतरिक्ष अन्वेषण की सीमाओं को लांघ रहा

है, वैसे-वैसे स्पेस कॉलोनी और लंबी अवधि के मानवयुक्त मिशनों की अवधारणा यथार्थ का रूप ले रही है। ऐसे मिशनों में सबसे बड़ी चुनौती होती है– स्थायी और आत्मनिर्भर जीवन समर्थन प्रणाली। इस दिशा में आलू जैसी फसलों की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण मानी जा रही है। नासा के मंगल ग्रह पर आलू जैसे सफल प्रयोग यह संकेत देते हैं कि यदि संरक्षित वातावरण और सही तकनीक उपलब्ध कराई जाये, तो आलू चंद्रमा, मंगल या अंतरिक्ष यानों में भी सफलता से उगाई जा सकती हैं। इससे अंतरिक्ष यात्रियों को पोषणयुक्त, ताज़ा और आत्मनिर्भर खाद्य स्त्रोत उपलब्ध हो सकते हैं जिससे पृथ्वी पर निर्भरता घटेगी और मिशनों की लागत में भारी कमी आएगी।

भविष्य में अंतरिक्ष कृषि अनुसंधान केवल विज्ञान की सीमा नहीं रह जाएगी, बल्कि यह अंतरिक्ष अर्थव्यवस्था और खाद्य सुरक्षा का भी एक महत्वपूर्ण स्तंभ बनेगी। इसरो, नासा और अन्य वैश्विक एजेंसियों के बीच सहयोग बढ़ने से संयुक्त मिशनों में फसल उत्पादन का क्षेत्र और भी उन्नत होगा। इसके अलावा, मंगल और अन्य ग्रहों में स्पेस ग्रीनहाउस विकसित किये जा रहे हैं, जहाँ तापमान, प्रकाश और वायुमंडल को नियंत्रित किया जा सकेगा इन संरचनाओं में आलू एक प्रमुख फसल के रूप में उगाई जा सकती है। इतना ही नहीं, इन प्रयोगों से प्राप्त तकनीकें पृथ्वी पर भी जलवायु परिवर्तन, सूखा और लवणीयता जैसी चुनौतियों से जूझते क्षेत्रों में खेती के नए विकल्प दे सकती हैं। केवल अंतरिक्ष ही नहीं, बल्कि पृथ्वी पर भी इन प्रयोगों के परिणाम दूरगामी प्रभाव डाल सकते हैं। जलवायु परिवर्तन, भूमि क्षरण और जल संकट जैसी समस्याओं से जूझ रहे क्षेत्रों में जहाँ परंपरागत खेती संभव नहीं है, वहाँ इन तकनीकों का उपयोग कर मिट्टी रहित खेती को बढ़ावा दिया जा सकता है।

चूँकि किसी को स्वयं पर विश्वास है, इसलिये वह दूसरों को मनाने का कोई प्रयत्न नहीं करता। चूँकि कोई स्वयं में ही संतुष्ट है, इसलिये उसे दूसरों के अनुमोदन की आवश्यकता नहीं है। चूँकि कोई स्वयं को स्वीकार करता है, इसलिये समस्त संसार उसे स्वीकार करता है।

- लाओ जू

कद्दूवर्गीय सब्जियों के बीज गिरी का महत्व

डी.आर.भारद्वाज

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

देश के नागरिकों की पोषण सुरक्षा आवश्यक है जो जीवन का आधार है। पोषण प्रदान करने में अनेकों फसलों के बीजों का उपयोग बड़े पैमाने पर किया जाता है। सब्जी फसलों के बीजों से प्राप्त बीज गिरी का उपयोग पोषण सुरक्षा एवं उत्तम स्वास्थ्य के लिये किया जा रहा है। बीज गिरी पोषक तत्वों से भरपूर होते हैं। आवश्यकता इस बात की है कि खाने में ऐसी बीजों को स्थान दे जो सुपर फूड की तरह काम करें एवं सेहत के लिये फायदेमंद हो।

महत्व

1. **पोषण का उच्च स्त्रोत:** सब्जियों के बीज गिरी प्रचुर मात्रा में खाद्य रेशा, प्रोटीन, स्वस्थ वसा, खनिज लवण और अनेकों विटामिन्स पाये जाते हैं। कद्दू के बीज में मैग्नीशियम प्रचुर मात्रा में पाया जाता है।

2. **हृदय स्वास्थ्य:** सब्जियों जैसे-कुम्हण, खीरा, ककड़ी, तरबूज आदि में ह्दय के स्वास्थ्य रखने वाले अनेकों घटक पाये जाते हैं।

3. **पाचन में सुधार:** प्रकृति में स्वयं उगने वाले चिया के बीज पाचन में सुधार के लिये जाना जाता है। कब्ज की समस्या को जड़ से समाप्त करता है।

4. **रक्त शर्करा नियंत्रण:** कुछ सब्जियों के बीज मानव की रक्त शर्करा के नियंत्रण में सहायक है। कद्दू के बीज की गिरी सेन्सीटीविटी का बेहतर बनाता है।

5. **शारीरिक वजन में नियंत्रण:** बीज गिरी में प्रचुर मात्रा में पाये जाने वाले खाद्य रेशा एवं लाभदायक वसा, शारीरिक वजन को बढ़ने में रोकता है और अन्य तत्वों के अवशोषण में सहायक होता है।

6. **त्वचा की सेहत:** बीज गिरी के उपभोग से ओमेगा-3 फैटी एसिड की प्रचुर मात्रा में प्राप्ति होती है।

बीज गिरी को कैसे खाये?

बीज गिरी को भिगोंकर खा सकते हैं। इसके अलावा इन्हें सलाद, दही या अन्य अनाज में मिलाकर उपभोग कर सकते हैं। बीज गिरी को हल्का भूनकर या तलकर खा सकते हैं। इन्हें मिठाई में मिलाकर उपभोग कर सकते हैं। इनसे स्नैक्स, बीज बार या बीज किस्प बना सकते हैं।

ध्यान देने योग्य बातें

- बीजों को अधिक मात्रा में नही खाना चाहिए।
- बीज गिरी को हमेशा चबाकर खाना चाहिए।

कुछ प्रमुख स्वास्थ्यवर्धक बीज गिरी

1. **खरबूजा का बीज:** खरबूजा का तासीर ठण्डा होता है। बीज गिरी में एंटीआक्सीडेन्ट होता है जो फ्री- रेडिकल को कम करता है। खरबूजा के बीज गिरी में सबसे ज्यादा प्रोटीन (29 ग्राम/100 ग्राम), वसा (43 ग्राम/100 ग्राम), कार्बोहाइड्रेट (30 ग्राम/100 ग्राम), खाद्य रेशा (2 ग्राम/100 ग्राम), जिंक, मैंग्नीज, सोडियम, ऊर्जा (557 किलो कैलोरी/100 ग्राम), कैल्शियम और लौह तत्व पाया जाता है।

2. **तरबूज का बीज:** इसमें ऊर्जा (601.56 किलो कैलोरी/100 ग्राम), प्रोटीन (30.60 ग्राम/100 ग्राम), वसा (51.16 ग्राम/100 ग्राम),कार्बोहाइड्रेट (16.53 ग्राम/100 ग्राम), पोटैशियम (699.84 मिग्रा./100 ग्राम), कैल्शियम (58.32 मिग्रा./100 ग्राम), मैग्नीशियम (556.20 मिग्रा./100 ग्राम), सोडियम (106.92 मिग्रा./100 ग्राम), लौह तत्व (7.86 मिग्रा./100 ग्राम), तांबा (0.74 मिग्रा./100 ग्राम), जस्ता (11.06 मिग्रा./100 ग्राम), मैग्नीज (1.74मिग्रा./100 ग्राम), फास्फोरस (815.40 मिग्रा./100 ग्राम), खाद्य रेशा व खनिज लवण पाया जाता है।

3. **कद्दू का बीज:** बीज गिरी में पर्याप्त मात्रा में एंटीआक्सीडेन्ट पाये जाते हैं। यह बैड कोलेस्टाल को कम करने में सहायक है। पोषण विज्ञान के वैज्ञानिकों ने प्रोस्ट्रेट की समस्या को कम करने वाला स्त्रोत बताया है। इसमें ट्रिप्टोफैन तत्व की उपलब्धता होती है जो सेरोटीनिज (यह एक न्यूरो ट्रांसमीटर है) के रिसाव में मदद करता है। यह मानसिक एकाग्रता को बनाये रखने में सहायक है। यह इम्यूनिटी को बढ़ाता है। आन्तरिक सूजन को कम करता है। लगातार सही मात्रा में उपभोग करने से मधुमेह को नियंत्रित करता है।

भिण्डी की उपयोगिता

सुनील कुमार सिंह, प्रदीप कर्मकार, विजय बहादुर सिंह चौहान, सौरभ सिंह, परगट सिंह, राघवेन्द्र प्रताप सिंह, अनूप प्रताप सिंह, नीतीश सिंह एवं *शुभम तिवारी

भा.कृ.अनु.प.-भा.स.अनु., वाराणसी, *सै.हि.कृ.प्रौ. एवं वि.वि.वि., प्रयागराज

कच्चे गन्ने के रस में कई प्रकार की अशुद्धियाँ मिली रहती हैं जैसे- मिट्टी, धूल, रेशे और अन्य अवांछित तत्व जिन्हें रस से सफाई करना बहुत आवश्यक होता है, इसकी सफाई किये बिना उत्तम गुणवत्ता का गुड़ नहीं बनाया जा सकता है। पारंपरिक शोधन विधियों में चूना और अन्य रसायनों का उपयोग होता है जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हो सकते हैं। इसके अलावा, इन रसायनों का उपयोग पर्यावरण को भी नुकसान पहुँचाता है। इस संदर्भ में, प्राकृतिक और सुरक्षित शोधन विधि की आवश्यकता महसूस की गई। भिण्डी के पौधे के तने से प्राप्त पादप रेशा, एक मोटी पालीसैकेराइड फिल्म के समान संरचना होने के कारण इसका औद्योगिक उपयोग होता है। भिण्डी में पाये जाने वाले म्यूसिलेज के फ्लोकुलेंट (गंदगी के निलम्बित कणों के समूह) गुणों के कारण इसका उपयोग गन्ने के रस के अपशिष्ट को साफ करने के लिये किया जाता है। इसके पौधे में पेक्टिन पॉलीसेकेराइड्स तथा म्यूसिलेज नामक चिपचिपा पदार्थ होता है। भिण्डी का म्यूसिलेज एक चिपाचिपा पॉलीसैकेराइड है जो मुख्य रूप से गैलेक्टोज, रैमनोज एवं गैलेक्टुरोनिक एसिड से बना होता है। भिण्डी में किसी भी प्रकार के हानिकारक रसायनिक तत्व नहीं होते हैं, इसलिए इसका उपयोग रस की शुद्धि से लेकर गुड़ की गुणवत्ता में सुधार हेतु किया जाता है जो स्वास्थ्य के लिए सुरक्षित तथा पर्यावरण के अनुकूल है।

भिण्डी की गन्ना शोधन हेतु उन्नतशील जंगली प्रजातिः भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश) द्वारा विकसित दो जंगली प्रजाति विकसित किया गया है जिसमें उच्च म्यूसिलेज, पादप हाइड्रोकोलॉइड, जटिल पॉलीसेकेराइड और मोनोसैकेराइड रसायनों का घटक एवं प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, शर्करा, खनिज तत्वों का महत्वपूर्ण स्तर है जिसमें म्यूसिलेज (चिपचिपा पदार्थ) अधिक मात्रा में मिलता है। जिसे हिंदी में 'कस्तूरी भिंडी' या 'लाटाकस्तूरी' भी कहा जाता है, एक पौधा है जिसके विभिन्न शारीरिक गुणों के कारण आयुर्वेदिक चिकित्सा में उपयोग किया जाता है।

एबेलमोस्कस कैली: भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी द्वारा विकसित जंगली किस्म विकसित किया गया। इसके डंठल, फूल, पत्ती एवं फलों में उच्च म्यूसिलेज, पादप हाइड्रोकोलॉइड, जटिल पॉलीसेकेराइड और मोनोसैकेराइड रसायनों का घटक एवं प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, शर्करा, खनिज तत्वों का प्रचुर मात्रा में पाया जाता है।

गुड़ निर्माण की प्रक्रिया में भिण्डी का उपयोग: उत्तम गुणवत्ता गुड़ बनाने हेतु गन्ने के रस की सफाई वानस्पतिक रस शोधकों से ही करनी चाहिये, गुड़ बनाने की प्रक्रिया की शुरुआत गन्ने का रस निकालने से होती है। गन्ने के रस को निकालने के लिए पारंपरिक और आधुनिक दोनों तरीकों का उपयोग किया जाता है। पारंपरिक तरीकों में गन्ने को पेरकर रस निकाला जाता है, जबकि आधुनिक तरीकों में मशीनों का उपयोग किया जाता है। इस रस को बड़े बर्तनों में रखा जाता है। भिण्डी के तने को छोटे-छोटे टुकड़ों में काटकर गन्ने के रस में मिलाया जाता है, इसे मिलाने के बाद अच्छी तरह से हिलाया जाता है, ताकि म्यूसिलेज रस में अच्छी तरह से घुल सके क्योंकि भिण्डी के पौधे में पेक्टिन और पॉलीसेकेराइड्स जैसे-रसायन एवं म्यूसिलेज नामक एक चिपचिपा पदार्थ होता है, जो रस में उपस्थित कैल्शियम और मैग्नीशियम के साथ मिलकर अशुद्धियों को एकत्र कर लेता है। इसके बाद उसको छान लिया जाता है तत्पश्चात् गन्ने के रस को उबाला जाता है। उबालने की प्रक्रिया में भिण्डी का म्यूसिलेज रस में उपस्थित गंदगी और अशुद्धियों को ऊपर खींच लेता है जिसे चाशनी द्वारा आसानी से हटा दिया जाता है। चाशनी उतारने का समय गुड़ के प्रकार पर निर्भर करता है। यह गुड़ के तीनों रूपों (ठोस, तरल एवं पाउडर) हेतु अलग-अलग तापक्रम निर्धारित हैं अर्थात् जिस प्रकार का गुड़ बनाना हो चाशनी को उसी तापक्रम पर उतारना चाहिये। शुद्ध किए गए रस को फिर से उबालकर गाढ़ा किया जाता है। इसे विभिन्न आकारों एवं रूपों में ढाला जाता है, जिससे यह ठोस रूप में बदल जाता है। इस प्रक्रिया में इसका उपयोग रस की शुद्धता, गुणवत्ता और रसायन मुक्त बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

गन्ने के रस से गुड़ बनाने की शोधन प्रक्रिया में भिण्डी का

उपयोग एक प्रभावी, सुरक्षित और पर्यावरण अनुकूल विधि है। यह न केवल गुड़ की गुणवत्ता को बढ़ाता है, बल्कि इसे स्वास्थ्य और पर्यावरण के दृष्टिकोण से भी लाभकारी बनाता है। भिण्डी का उपयोग शोधन प्रक्रिया को सरल और सुलभ बनाता है जिससे छोटे और बड़े पैमाने पर गुड़ उत्पादन करने वाले किसानों और उद्यमियों को लाभ होता है। भविष्य में शोधन प्रक्रियाओं में भिण्डी के उपयोग को और अधिक प्रोत्साहित करने एवं इसके नवाचार पर ध्यान देने की आवश्यकता है, ताकि गुड़ उद्योग को अधिक प्रभावी और सुरक्षित बनाया जा सके।

मैंने देखा है वो लोग भी जो ये कहते हैं कि सब कुछ पहले से तय है और हम उसे बदलने के लिए कुछ भी नहीं कर सकते, वे भी सड़क पार करने से पहले देखते हैं।

- स्टीफन हॉकिंग

मेथी का मानव आहार में पोषण एवं औषधीय महत्व

श्रेयांशी सिंह, शशिबाला एवं शिवराज वर्मा

उदय प्रताप (स्वायतशासी) कॉलेज, वाराणसी

मेथी सदियों से भारतीय रसोई और आयुर्वेदिक चिकित्सा का अभिन्न हिस्सा रही है। हरी पत्तियों के रूप में सब्जी बनाने या इसके बीज को मसाले के रूप में उपयोग किया जाता रहा है। आधुनिक विज्ञान और तकनीक के द्वारा मेथी का उपयोग स्वास्थ्य और सौन्दर्य उत्पाद के रूप में अपनी अलग पहचान बनाने लगी है। इसके अलावा ऊर्जावर्धक, हर्बल चाय, त्वचा की देखभाल और बालों के तेल जैसे कई रूपों में उपयोग किया जा रहा है। बीज से निकाले गये पोषक और सक्रिय यौगिकों को मिलाकर पाउडर, कैप्सूल और क्रीम के रूप में उत्पाद तैयार किये जा रहे हैं। इन उत्पादों का उपयोग मधुमेह के नियंत्रण, कोलेस्ट्रॉल कम करने, वजन घटाने और पाचन तंत्र में सुधार के लिए किया जाता है। इसके अलावा, इसके द्वारा निर्मित अन्य उत्पाद त्वचा की देखभाल, चमक बढ़ाने और बालों में रुसी (डैंड्रफ़) को कम करने में मददगार साबित हुए हैं। बीजों से प्राप्त तेल/अर्क का उपयोग बालों को मजबूती देने और झड़ने से बचाने के लिए किया जा रहा है। यह एक सुपरफूड के रूप में पहचान बना ली है जिसका मुख्य कारण शरीर को संपूर्ण पोषण प्रदान करता है। इसके सतत् और जैविक खेती पर जोर देने से पर्यावरण के प्रति जागरूकता भी बढ़ी है। पारंपरिक भारतीय जड़ी-बूटी से आधुनिक स्वास्थ्य और सौंदर्य उत्पाद तक इसका सफर एक प्रेरणादायक उदाहरण है कि कैसे प्राकृतिक संसाधनों को आधुनिक विज्ञान के साथ जोड़कर स्वास्थ्य को बेहतर बनाया जा सकता है।

1. पारंपरिक उपयोग और सांस्कृतिक महत्व: मेथी का भारत में पारंपरिक उपयोग और सांस्कृतिक महत्व सदियों पुराना है। यह न केवल एक आम घरेलू मसाला और सब्जी है, बल्कि आयुर्वेदिक चिकित्सा में भी इसका विशेष स्थान है। भारतीय परिवारों में इसको सर्दियों में ताजगी और पोषण देने वाली हरी सब्जी के रूप में खाया जाता है। इसके अलावा, इसके दानों को कई प्रकार के व्यंजनों में मसाले के रूप में भी प्रयोग किया जाता है जो भोजन को स्वादिष्ट और पाचन में आसान बनाते हैं। इसका उपयोग केवल खाने में ही नहीं, बल्कि कई पारंपरिक घरेलू नुस्खों में भी किया जाता है जैसे- बालों के झड़ने को रोकने के लिए मेथी के मिश्रण का इस्तेमाल या त्वचा के लिए मेथी का काढ़ा। इसके अलावा, इसको धार्मिक और सांस्कृतिक समारोहों में भी महत्वपूर्ण माना जाता है, जहाँ इसे शुभ और शुद्ध माना जाता है। ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में इसकी खेती और उपयोग भारत की सांस्कृतिक विरासत का हिस्सा है, जो आज भी लोगों की जीवनशैली और खान-पान में गहराई से जुड़ा हुआ है।

2. पोषकीय और औषधीय गुण: मेथी पोषण और औषधीय गुणों से भरपूर एक अद्भुत पौधा है, जो शरीर के कई आवश्यक कार्यों को सुचारू रूप से चलाने में मदद करता है। इसमें आयरन, कैल्शियम, मैग्नीशियम, विटामिन 'ए', 'सी' और खाद्य रेशा प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं जो रक्त निर्माण, हड्डियों की मजबूती और प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करने में सहायक होते हैं। मेथी के बीजों में घुलनशील खाद्य रेशा होता है जो पाचन तंत्र को स्वस्थ रखता है और कब्ज जैसी समस्याओं को दूर करता है। साथ ही इसमें पाये जाने वाले सैपोनिन और फ्लेवोनोइड जैसे सक्रिय यौगिक शरीर में सूजन कम करते हैं और हृदय रोगों से सुरक्षा प्रदान करते हैं। यह मधुमेह रोगियों के लिए भी लाभकारी है क्योंकि यह रक्त शर्करा के स्तर को नियंत्रित करने में मदद करती है। इसके अलावा, इसके बीजों में पाये जाने वाले डायोसजेनिन जैसे पादप रसायन हार्मोन संतुलन में सहायक होते हैं जो महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए विशेष रूप से उपयोगी हैं। इस प्रकार, मेथी न केवल एक स्वादिष्ट मसाला है, बल्कि यह शरीर को पोषण प्रदान करने और रोगों से लड़ने में भी अहम् भूमिका निभाती है।

3. पुनर्विमर्श: आधुनिक विज्ञान ने मेथी के औषधीय गुणों को गहराई से समझने के लिए कई शोध किये हैं, जिनमें इसके स्वास्थ्य लाभों को प्रमाणित किया गया है। विभिन्न वैज्ञानिक अध्ययनों के अनुसार, इसके बीज और पत्तियाँ रक्त में शर्करा के स्तर को नियंत्रित करने में मदद करती हैं जिससे यह मधुमेह रोगियों के लिए एक प्राकृतिक उपाय बन गया है। इसके अतिरिक्त, इसमें मौजूद खाद्य रेशा और सक्रिय यौगिक रक्त में कोलेस्ट्रॉल की मात्रा को कम करने में सहायक होते हैं जिससे हृदय रोगों का खतरा घटता है। सूजनरोधी गुणों के कारण यह गठिया और अन्य सूजन संबंधी रोगों में भी राहत प्रदान करती है। इसके बीजों में मौजूद डायोसजेनिन जैसे यौगिक महिलाओं के हार्मोन संतुलन में सहायक होते हैं, जो मासिक धर्म संबंधी समस्याओं और रजोनिवृत्ति के लक्षणों को कम कर सकते हैं।

इन खोजों ने पारंपरिक आयुर्वेदिक ज्ञान को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से पुष्ट किया है और इसको एक प्रभावी हर्बल उपचार के रूप में स्थापित किया है। इस प्रकार, मेथी का वैज्ञानिक पुनर्विमर्श इसके उपयोग को आधुनिक चिकित्सा प्रणाली में भी महत्वपूर्ण स्थान दिला रहा है।

4. आधुनिक उत्पाद: आधुनिक युग में मेथी के पोषक और औषधीय गुणों को ध्यान में रखते हुए इसके कई नये और अभिनव उत्पाद बाजार में आये हैं, जो पारंपरिक उपयोग से कहीं आगे बढ़कर स्वास्थ्य और सौंदर्य की जरूरतों को पूरा करते हैं। आज मेथी आहार अनुपूरक और कैप्सूल के रूप में उपलब्ध हैं जो मधुमेह नियंत्रण, पाचन सुधार और वजन नियंत्रण में मदद करते हैं। इसके अलावा, इससे निर्मित हर्बल चाय ने भी लोकप्रियता हासिल की है जो शरीर को शुद्ध करती है और रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाती है। इसके अर्क और चूर्ण का उपयोग बालों के तेल और सौन्दर्य उत्पादों में भी बड़े पैमाने पर हो रहा है जिससे बाल मजबूत होते हैं, झड़ना कम होता है और त्वचा की चमक बढ़ती है। इन आधुनिक उत्पादों के कारण इसका उपयोग न केवल सरल हुआ है, बल्कि इसके लाभों को दैनिक जीवन में अधिक प्रभावी तरीके से शामिल किया जा सकता है। इस तरह मेथी ने पारंपरिक छवि से हटकर एक आधुनिक, बहुआयामी सुपरफूड के रूप में नई पहचान बनाई है।

5. स्वास्थ्य यौगिकों की प्रचुरता: मेथी सदियों से भारतीय जीवनशैली का अहम् हिस्सा रही है और आज भी यह स्वास्थ्य जागरूकता के युग में विशेष जगह बनाये हुए है। इसके बीज और पत्तियाँ न केवल स्वादिष्ट होती हैं, बल्कि इनमें कई औषधीय गुण भी मौजूद हैं जो आधुनिक विज्ञान द्वारा भी मान्य हैं। आज के दौर में जब लोग प्राकृतिक और हर्बल उपचार की ओर बढ़ रहे हैं, इसकी उपयोगिता और भी बढ़ जाती है। मधुमेह रोगियों के लिए मेथी एक वरदान साबित हुई है क्योंकि इसके बीज रक्त शर्करा नियंत्रित करने में मदद करते हैं। इसके साथ ही यह पाचन तंत्र को मजबूत बनाती है, कोलेस्ट्रॉल कम करती है और हृदय रोगों से बचाव में सहायक होती है। मेथी के नियमित सेवन से वजन नियंत्रित रहता है और यह महिलाओं के हार्मोन संतुलन में भी सुधार करती है। स्वास्थ्य जागरूकता के इस दौर में मेथी को प्राकृतिक औषधि के रूप में अपनाना लोगों को स्वस्थ जीवन जीने की ओर प्रेरित करता है। मेथी को दैनिक आहार सूची में किया जा रहा है जो न केवल स्वाद बढाती है बल्कि स्वास्थ्य की रक्षा भी करती है।

6. पर्यावरण पर प्रभाव: मेथी की खेती न केवल आर्थिक रूप से लाभदायक है बल्कि पर्यावरण के लिहाज से भी इसे अत्यंत महत्वपूर्ण फसल माना जाता है। यह एक ऐसी फसल है जो कम पानी में अच्छी तरह उग जाती है जिससे जल संसाधनों की बचत होती है और सूखे के प्रभाव को कम किया जा सकता है। यह मिट्टी की गुणवत्ता सुधारने में भी मदद करती है क्योंकि यह नत्रजन स्थिरीकरण करने वाला पौधा है, यानी मिट्टी में नत्रजन की मात्रा बढ़ाकर उसकी उपजाऊ शक्ति बढ़ाती है। इससे रासायनिक उर्वरकों की जरूरत कम हो जाती है, जो पर्यावरण प्रदूषण को घटाने में सहायक है। इसकी जैविक खेती के माध्यम से प्राकृतिक कीटनाशकों और जैविक उर्वरकों का उपयोग कर रासायनिक प्रदूषण को कम किया जा सकता है। इसकी खेती से स्थानीय जीव-जंतुओं और मृदा के सूक्ष्मजीवों का संतुलन बना रहता है, जो पारिस्थितिकी तंत्र के लिए अच्छा है। मेथी की खेती पर्यावरण संरक्षण और सतत् विकास की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है जो कृषि को अधिक प्राकृतिक, टिकाऊ और लाभकारी बनाता है।

7. भविष्य की संभावनायें: मेथी की खेती और उपयोग के क्षेत्र में प्रभावशाली संभावनायें हैं क्योंकि इसके स्वास्थ्य और पर्यावरणीय लाभों को अब वैज्ञानिक और उपभोक्ता दोनों ही तेजी से स्वीकार कर रहे हैं। भविष्य में मेथी आधारित उत्पादों की माँग बढ़ने की संभावना है, जैसे- हर्बल उत्पाद, औषधीय चाय, आहार अनुपूरक और सौंदर्य सम्बन्धी उत्पाद। साथ ही, जैव-प्रौद्योगिकी की मदद से इसकी उन्नत किस्में विकसित की जा रही हैं जो गुणवत्तायुक्त अधिक उपज, रोग-प्रतिरोधक और जल-संरक्षण क्षमता वाली होगी जिससे किसानों की आमदनी भी बढ़ेगी। मेथी के उपयोग को बढ़ावा देने के लिए इसके विभिन्न स्वास्थ्य लाभों पर जागरूकता अभियान चलाए जा रहे हैं, जो इसे एक सुपरफूड के रूप में स्थापित करेंगे। इसके

सारिणी-1: मेथी में पाये जाने वाले प्रमुख रासायनिक घटक

पादप रसायन	भूमिका/लाभ	उपयोग क्षेत्र
ट्राइगोनेस्ट्रिन	रक्त शर्करा नियंत्रित करने में मदद	मधुमेह नियंत्रण
गैलेक्टोमैनन	पाचन में सुधार, वजन घटाने में सहायक	डाइटरी फाइबर सप्लीमेंट्स
एपीजेनिन	सूजन रोधी और प्रतिआक्सीकारक	सूजन और हृदय रोग नियंत्रण
क्वेरसेटिन	जीवाणुरोधी और कवकरोधी गुण	संक्रमण नियंत्रण

अलावा, सतत कृषि प्रथाओं के साथ मेथी की खेती पर्यावरण के प्रति सजग और टिकाऊ होगी। इस तरह, यह न केवल पारंपरिक आहार और चिकित्सा का हिस्सा बनी रहेगी, बल्कि बाजार की मांग के साथ उसका भविष्य भी बहुत उज्जवल रहेगा।

मेथी ऐसी चमत्कारी फसल है जो स्वाद, पोषण, औषधीय गुणों और पर्यावरणीय संतुलन चारों मोर्चों पर उत्कृष्ट भूमिका निभाती है। यह न केवल भारतीय रसोई की शान है, बल्कि एक सशक्त जैविक विकल्प, पर्यावरण-अनुकूल फसल और स्वास्थ्य संवर्धक तत्व भी है। पारंपरिक ज्ञान और आधुनिक विज्ञान के संगम से इसकी उपयोगिता और भी व्यापक होती जा रही है। आज जब दुनिया स्वास्थ्य और पर्यावरण के प्रति अधिक जागरूक हो रही है, मेथी की प्रासंगिकता पहले से कहीं अधिक है। इसकी खेती, प्रसंस्करण और नवाचार में निवेश करके न केवल कृषि क्षेत्र को समृद्ध कर सकते हैं, बल्कि एक टिकाऊ, स्वस्थ और आर्थिक रूप से मजबूत समाज की ओर भी अग्रसर हो सकते हैं। अतः समय आ गया है कि मेथी को केवल एक साधारण साग-सब्जी के रूप में नहीं, बल्कि एक बहुमूल्य प्राकृतिक निधि के रूप में अपनाएं और आगे बढ़ाएं।

मैं करने की अत्यावश्यकता से प्रभावित रहा हूँ। जानना ही पर्याप्त ही नहीं है; हमें प्रयोग में भी अवश्य लाना चाहिये। इच्छुक होना ही काफी नहीं है; हमें करना भी अवश्य आना चाहिये।

-रसेल सी. टेलर

पौधशाला मृदा सौर्यीकरण का महत्व

इन्द्रेश कुमार तिवारी, इन्दीवर प्रसाद, राजेश कुमार एवं चंद्रोदय प्रकाश तिवारी

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

सब्जी उत्पादन का प्रमुख आधार बीज है परन्तु कुछ सब्जियों की बुवाई सीधे मुख्य प्रक्षेत्र पर करते हैं एवं कुल सब्जियों की बुवाई पहले पौधशाला में करते हैं उसके 20-30 दिनों बाद पौध उखाड़कर मुख्य प्रक्षेत्र पर प्रत्यारोपण करते हैं। पौधशाला में बुवाई की जाने वाली मुख्य फसलें टमाटर, मिर्च व बैंगन, गोभीवर्गीय एवं सलाद वाली फसलें है। अतः ऐसी सब्जी फसलों में अधिक उत्पादन और गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए स्वस्थ पौध का होना आवश्यक है। पौधशालाओं में होने वाली समस्यायें जैसे- खर-पतवार, मृदा जनित रोग, कीट और मृदा सूत्रकृमि न केवल उत्पादन को प्रभावित करते हैं, इन समस्याओं से निपटने के लिए मृदा सौर्यीकरण एक वैज्ञानिक, सरल, पर्यावरण-अनुकूल और दीर्घकालिक समाधान प्रस्तुत करता है। मृदा सौर्यीकरण ऐसी तकनीक है जिसमें पारदर्शी पॉलीथीन शीट की सहायता से मृदा को सूर्य की उष्मा से गर्म किया जाता है। यह प्रक्रिया विशेष रूप से गर्मी के मौसम (अप्रैल से जुलाई) में की जाती है, जब सूर्य की किरणें तीव्र होती हैं। मृदा सौर्यीकरण करते समय तापमान 30 डिग्री सेन्टीग्रेड से अधिक होना आवश्यक है। मृदा की सिंचाई करके उसे पॉलीथीन शीट द्वारा ढक कर चार सप्ताह के लिए छोड़ दिया जाता है जिससे नीचे की मृदा का तापमान बढ़कर 45-60 डिग्री सेन्टीग्रेड तक पहुँच जाता है। यह उच्च तापमान मृदा में मौजूद खर-पतवार बीजों, हानिकारक सूक्ष्मजीवों, कीटों के अंडों तथा सूत्रकृमि को नष्ट कर देता है। इससे मिट्टी रोगमुक्त, खर-पतवारमुक्त और उपयुक्त हो जाती है।

मृदा सौर्यीकरण के लाभ

मृदा में पाये जाने वाले जीवाणु जनित रोग, जो सामान्यतः पौधों के तनों और जड़ों पर सड़न, मुरझाने या पत्ती झुलसने जैसे लक्षण उत्पन्न करते हैं, सौर तप्तीकरण के प्रभाव से निष्क्रिय हो जाते हैं। इससे पौध की स्वस्थता और दीर्घजीविता में वृद्धि होती है। जड़ गांठ सूत्रकृमि जो पौधशाला व खेतों में पौधों की जड़ों को संक्रमित कर उनकी वृद्धि और उत्पादन पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं, उनके अंडे और लार्वा उच्च तापमान के कारण नष्ट हो जाते हैं जिससे सूत्रकृमि जनित हानि को रोका जा सकता है। सौर्यीकरण से विकसित पौधें रोगमुक्त, स्वस्थ और अधिक सशक्त होती हैं। इन पौधों की जड़ प्रणाली अधिक विकसित होती है जिससे रोपण के बाद पौध शीघ्रता से भूमि में स्थापित होती है, तेजी से वृद्धि करती है और उत्पादन की बेहतर संभावना बनाती है।

यह एक रसायन-मुक्त जैविक विधि है जिसमें कीटनाशक, फफूंदनाशक इत्यादि के प्रयोग की आवश्यकता न्यूनतम होती है। इससे न केवल पर्यावरण सुरक्षित रहता है, बल्कि उपज की गुणवत्ता भी रसायन अवशेषों से मुक्त रहती है जो उपभोक्ता और बाजार दोनों के लिए लाभकारी है।

सावधानियाँ और सुझाव

- पॉलीथीन शीट का गुणवत्ता युक्त होना अनिवार्य है ताकि वह फट न जाये और अधिक ताप संचित कर सके।
- शीट को दोबारा उपयोग के लिए सही से समेटकर रखें।
- सौर्यीकरण के तुरंत बाद जैव उर्वरकों का उपयोग करें।
- पौधशाला की मिट्टी में सौर्यीकरण के बाद रासायनिक उर्वरकों का अधिक प्रयोग न करें।
- जिन क्षेत्रों में अधिक वर्षा होती है, वहाँ सौर्यीकरण के दौरान पॉलीथीन पर ढलान बनायें ताकि पानी जमा न हो।

मृदा सौर्यीकरण एक सस्ती, प्रभावी, पर्यावरण-अनुकूल और दीर्घकालिक समाधान है, जो सब्ज़ियों के पौध उत्पादन की गुणवत्ता और सफलता को सुनिश्चित करता है। यह न केवल रोगजनकों और कीटों पर नियंत्रण प्रदान करता है, बल्कि मिट्टी की संरचना, जैविक सक्रियता और पोषण क्षमता को भी सुधारता है। इसके माध्यम से रसायनों पर निर्भरता कम होती है जिससे कृषकों को आर्थिक लाभ के साथ-साथ टिकाऊ खेती की ओर भी अग्रसर किया जा सकता है।

सारिणी-1: मृदा सौर्यीकरण के लिए विभिन्न क्षेत्रों में समय सारिणी

क्षेत्र	सौर्यीकरण के लिए उपयुक्त समय	इस अवधि में सामान्य तापमान	महत्वपूर्ण सब्जी फसलें
उत्तर भारत	मई-जून	42–48 डिग्री सेन्टीग्रेड	टमाटर, मिर्च, बैंगन, गोभी
दक्षिण भारत	मार्च-मई	38–44 डिग्री सेन्टीग्रेड	मिर्च, शिमला मिर्च, टमाटर
पूर्वी भारत	अप्रैल-मई	36–42 डिग्री सेन्टीग्रेड	पत्तागोभी, मिर्च, बैंगन

कीटनाशकों का पर्यावरण एवं मानव स्वास्थ पर बढ़ते दुष्प्रभाव

रविन्द्र कुमार वर्मा, वी. के. सिंह, भुवनेश्वरी, विपिन कुमार एवं चन्द्रशेखर

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

फसलों के उत्पादन में विभिन्न प्रकार के समस्यायें आती हैं। इनमें कीट एवं रोग एक प्रमुख कारक हैं जो फसलों के उत्पादन को प्रमुखतः से प्रभावित करते हैं। कीट प्रायः फसलों पर आक्रमण करके उनकी उपज घटाने के साथ-साथ उनकी गुणवत्ता को भी प्रभावित करते हैं। कीटों के नियंत्रण के लिए जिन विषों का प्रयोग किया जाता है वह कीटनाशक कहलाते

हैं। भारत की आबादी 140 करोड़ है, इसके भरण पोषण के लिए यह अतिआवश्यक है कि प्राकृतिक संसाधनों का प्रयोग उचित एवं धारणीय ढंग से करें। कीटनाशकों का अव्यवस्थित उपयोग मानव स्वाथ्य एवं पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। इसके बावजूद विश्व में लगभग 44 प्रतिशत कीटनाशक, 30 प्रतिशत खर-पतवारनाशक, 21 प्रतिशत कवकनाशक एवं 5 प्रतिशत अन्य विषों का उपयोग किया जाता है। भारत में लगभग 76 प्रतिशत कीटनाशक, 13 प्रतिशत कवकनाशक, 10 प्रतिशत खर-पतवारनाशक एवं 1 प्रतिशत अन्य रसायनों का प्रयोग किया जाता है । इस समय उपयोग किये जाने वाले अधिकतर विष संश्लेषित कार्बनिक रसायन हैं, जो उपचारित जीव कि उपापचयी क्रियाओं पर प्रभाव डालते हैं। कीटनाशक पर्यावरण के जैविक एवं अजैविक अवयवों में निर्माण, आवागमन, भण्डारण एवं उपयोग से प्रवेश करते हैं। इस समय पर्यावरण प्रदूषण एक बड़ी समस्या है। कीटनाशकों के द्वारा होने वाले प्रदूषण का उल्लेख सर्वप्रथम वर्ष1967 में प्रकाशित किताब 'सैइलेंट स्प्रिंग में किया गया था जिसमें डी.डी.टी. के मानव स्वाथ्य एवं पर्यावरण पर प्रभाव के बारे में बताया गया था।

पर्यावरण पर प्रभाव: कीटनाशक पर्यावरण के विभिन्न घटकों पर अवांछनीय प्रभाव डालते हैं जिसको कीटनाशक प्रदूषण कहते हैं जिसे निम्न प्रकार से समझया गया हैः

(i) मृदा प्रदूषण: कीटनाशक मृदा में रहने वाले कीटों के नियंत्रण, छिड़काव, धूलमार्जन अथवा इनके पात्रों के मृदा में निस्तारण से प्रवेश करते हैं। मृदा इनके भण्डारण कुण्ड का काम करती है। मृदा में कीटनाशक विशेषकर एल्ड्रिन, बी.एच.सी., डाईएल्ड्रिन, हेप्टाक्लोर, क्लोरडेन, टोक्साफेन, मिथाइल पैराथीओन, फोरेट आदि प्रायः दीमक, सफेद लट, कुतरा कीट एवं जड़ बेधक के नियंत्रण में उपयोग होते हैं। एल्ड्रिन बलुई दोमट जबकि बी.एच.सी., पैराथीओन एवं कार्बारिल के अवशेष चिकनी दोमट मृदा में अधिक समय तक रहते हैं। मृदा में अधिक कार्बन एवं सूक्ष्मजीवों की सक्रियता भी इन कीटनाशकों के जीवन को प्रभावित करती है। क्लोरेनेटेड कीटनाशक प्रायः ओर्गनोफॉस्फेट एवं कार्बनेट की अपेक्षा अधिक समय तक मृदा में विद्यमान रहते हैं। इसके प्रयोग से मिट्टी की सूक्ष्मजीवों, केंचुए, परभक्षी मकड़ी जैसे कीटों पर बुरा प्रभाव पड़ता है जिससे मृदा की उर्वरता भी प्रभावित होती है।

(ii) जल प्रदूषण: जल भी मृदा की समान ही किसी न किसी रूप में कीटनाशकों से प्रदूषित हो चुका है। कीटों की नियंत्रण में किये जाने वाले उपयोग से जल स्त्रोत भी प्रदूषित हो चुके हैं। जल स्त्रोत प्रायः प्रदूषित जल की अप्रवाह, सीवेज निस्तारण, मृत और सड़े हुए उपचारित पौधों से प्रदूषित होता है। हिमालय की ताजे जल स्त्रोत में भी कीटनाशक अवशेष का वर्णन किया गया है। बहुत सारी नदियों में भी बड़ी मात्रा में कीटनाशक पाये गये हैं जो जलीय जीवों के लिए अत्यधिक हानिकारक है।

(iii) वायु प्रदूषण: जो लोग प्रायः कीटनाशकों की फैक्ट्रियों की 5-7 किमी. के आस-पास रहते हैं वो इसके प्रभाव से विभिन्न प्रकार के रोगों से प्रभावित हो जाते हैं। वर्ष 1984 में भोपाल में मिथाइल आइसो साईनाइट नामक गैस के रिसाव से हजारों लोग मारे गये थे। कीटनाशकों के प्रयोग के समय भी स्वाथ्य पर हानिकारक प्रभाव पड़ते हैं। दिल्ली विश्वविद्यालय द्वारा किये गए सर्वेक्षण की अनुसार डी.डी.टी. की अत्यधिक मात्रा दिल्ली हवाई अड्डे की पास के बायोस्फियर

में पायी गयी। पैराथीओन, अजिनोफोस मिथाइल, मैलाथियान एवं कार्बारिल की वाष्प संकेन्द्रण अधिक मात्रा में उद्यान की समीप छिड़काव के बाद अधिक पायी गयी। बरमूडा की वायुमंडल में 4 प्रतिशत तक ओर्गनोक्लोरिन कीटनाशक गये हैं।

2. खाद्य वस्तुओं में कीटनाशकों का परिमाण: फसलों पर विभिन्न प्रकार की कीटों को नियंत्रित करने की लिये अनेक प्रकार के कीटनाशकों का प्रयोग देश में लगभग चार दशक से भी अधिक समय से किया जा रहा है। कीटनाशकों के खाद्य पदार्थों में अवशेष पर विभिन्न शोध किये जा चुके हैं और उनके परिणाम उत्पादकों एवं उपभोक्ताओं के लिए चिंताजनक है। विभिन्न खाद्य पदार्थों के नमूनों में अवांछनीय रूप से कीटनाशक अवशेष पाये गये हैं।

(i) फल एवं सब्जियाँ: कीटनाशकों के हानिकारक प्रभाव पर गठित समितियाँ ने केंद्रीय खाद्य प्रसंस्करण शोध संस्थान, मैसूर से संग्रहित आलू नमूनों में डी.डी.टी. का अवशेष 1-169 पी.पी.एम. तक पाया गया। पंजाब से संग्रहित भिंडी के नमूनों में एन्ड्रिन का अवशेष 0-38 पी.पी.एम. तक पाया। हैदराबाद के संग्रहित सब्जियों की 83 नमूनों में से 58 कीटनाशकों से सन्दूषित पाये गये। इनमें डी.डी.टी., एन्ड्रिन, लिंडेन, हेप्टाक्लोर एवं क्लोरडेन प्रमुख थे। अन्य वैज्ञानिकों ने देश की विभिन्न भागों से संग्रहित बैंगन, टमाटर, गाजर, मूली, बंदगोभी, फूलगोभी तथा अन्य सब्जियों में भी कीटनाशक अवशेष पाये गये हैं। अंगूर तथा बेर के फलों में ओर्गनोफॉस्फेट कीटनाशकों के अवशेष 2-5 पी.पी.एम. तक पाया गया है।

(ii) धान्य एवं दालें: धान्य एवं दालों में देश के विभिन्न भागों से संग्रहीत नमूनों में डी.डी.टी., लिंडेन, बी.एच.सी., एंड्रिन, प्रमुख थे। पंजाब कृषि विश्वविद्यालय द्वारा किये गए सर्वेक्षण में गेहूँ के 29 में से 12 नमूनों में डी.डी.टी. अथवा बी.एच.सी. के अवशेष पाये गये हैं। इससे यह प्रतीत होता है कि धान्य एवं दालें कीटनाशक के अंतर्ग्रहण का प्रमुख स्रोत हैं।

(iii) तिलहन फसलें एंव तेल: देश के विभिन्न भागों जैसे- हैदराबाद, पश्चिमी एवं दक्षिणी भागों से संगृहीत नमूनों में से मूंगफली में डी. डी. टी. का अवशेष पाया गया है। कपास के बीजों में मोनोक्रोटोफॉस, फेनीट्रोथिऑन, सिट्रोलान, डाईमेथोएट और फोस्फोमिडऑन के अवशेष नहीं पाये गये जबकि कार्बारिल एवं एंड्रिन के अवशेष पाये गये हैं। मूंगफली की फसल में बी.एच.सी. एवं डी.डी.टी. के मृदा में उपयोग से उनका अवशेष तेल में भी पाया गया है। पंजाब के वानस्पतिक तेल के नमूनों में बी.एच.सी. एवं डी.डी.टी. के अवशेष पाये गये हैं।

(iv) प्रसंस्कृत खाद्य: विभिन्न प्रसंस्कृत खाद्यों में डी.डी.टी. के अवशेष पाये गये हैं।

(v) पशु आहार: पशु आहार में कीटनाशक अवशेष की जानकारी अति आवश्यक है क्योंकि इसके द्वारा यह अंडा, दूध और माँस में भी पहुंच सकता है। वैज्ञानिकों द्वारा किये गए शोध से यह पता चला है कि पोल्ट्री आहार, सूखा चारा, चारा (जई, बरसीम, लूसर्न, मक्का आदि) में डी.डी.टी. के अवशेष पाये गये हैं। पशु आहार के नमूनों में चने की खली, गेंहूँ के भूसे में डी.डी.टी. के अधिक अवशेष पाये गये हैं, जबकि दलहनों की खली में इसके कम अवशेष पाये गये हैं।

(vi) दुग्ध एवं दुग्ध पदार्थ: दूध के विभिन्न नमूनों में डी.डी.टी. और बी.एच.सी. का अवशेष निर्धारित मानक से अधिक पाया गया है। पंजाब के 99 नमूनों में डी.डी.टी. अवशेष निर्धारित मानक से अधिक पाये गये।

(vii) अंडा और माँस:- अंडे और माँस के नमूनों में कीटनाशक अवशेष पाये गये हैं। गाय, भैंस और बकरी में 5-10 साल की उम्र तक के जानवरों में डी.डी.टी. के अवशेष पाये गये। पंजाब से संग्रहित सूअर, चूजों, भेड़, बकरी और अंडों के नमूनों में डी.डी.टी. के अवशेष पाये गये हैं।

3. जीव जन्तुओं पर प्रभाव: कीटनाशकों के दुष्प्रभावों को देखते हुए बहुत से देशों में इनका उपयोग जैव संरक्षण अधिनियम के अंतर्गत नियंत्रित किया जाता है। कीटनाशक जीवों के भोजन स्रोत को संदूषित और नष्ट करके उन्हें प्रभावित करते हैं जिससे वे अपना भोजन बदलने या दूसरी जगह जाकर उसे खोजने पर विवश हो जाते हैं। कीटनाशक अवशेष खाद्य श्रृंखला में जाकर पंक्षियों को प्रभावित भी करते हैं जब वे कीटों और केचुओं को खाती हैं। कीटनाशक मृदा में उपस्थित केचुओं की वृद्धि एवं विकास पर बुरा प्रभाव डालते हैं। अमेरिका की वन्य जीव सेवाओं के अनुमान के अनुसार हर साल लगभग 72 मिलियन पंक्षियों की मृत्यु कीटनाशकों की वजह से होती हैं। यूरोप में 116 पंक्षियों की प्रजातियाँ खतरे में हैं। पंक्षियों की संख्या कीटनाशकों के उपयोग एवं उससे उपचारित क्षेत्र पर निर्भर करती हैं। डी.डी.टी. के उपयोग से पंक्षियों के अंडों का खोल पतला होने का भी वर्णन मिलता हैं। कुछ कीटनाशक दाने के रूप में उपलब्ध है जिसको वन्य जीव भोजन के दाने समझ कर खा लेते हैं जो इनकी मृत्यु का कारण बनते हैं। मछलियों एवं अन्य जलीय जीव भी कीटनाशकों से प्रदूषित जल द्वारा प्रभावित होते हैं। कीटनाशक अप्रवाह द्वारा

नदियों, धाराओं में पहुंच कर जलीय जीवों के लिए हानि पँहुचाते हैं, कभी-कभी यह इनकी मृत्यु का कारण भी बनते हैं। खर-पतवारनाशकों के प्रयोग से जल स्त्रोतों में मछलियों एवं अन्य जलीय जन्तु पर बुरा प्रभाव पड़ता है और ये मर जाते हैं। कीटनाशक जल में रहने वाले सूक्ष्म जंतुओं को नष्ट कर देते हैं जो मछलीयों का प्रमुख भोजन हैं। पिछले कई दशकों से उभयचर जीवों की संख्या तेजी से पूरे विश्व में घट रही है, इसके पीछे बहुत से कारण है लेकिन उनमे कीटनाशक उपयोग भी प्रमुख हैं। कीटनाशक प्रायः मेंढक और उनके बच्चों के लिए हानिकारक पाये गये हैं। क्लोरिन कीटनाशक मेंढक में व्यावहारिक एवं वृद्धि विषमता उत्पन्न करते हैं।

4. मानव स्वस्थ्य पर प्रभाव: कीटनाशक मानव के शरीर में धूल, वाष्प एवं एरोसोल के रूप में श्वसन के द्वारा प्रवेश करते हैं। इसके अतरिक्त संदूषित खाद्य, जल और त्वचा के स्पर्श में आने से भी प्रवेश करते हैं। इनका मानव पर प्रभाव इनकी विषाक्तता और अनावरण के समय पर निर्भर करता है। कृषि

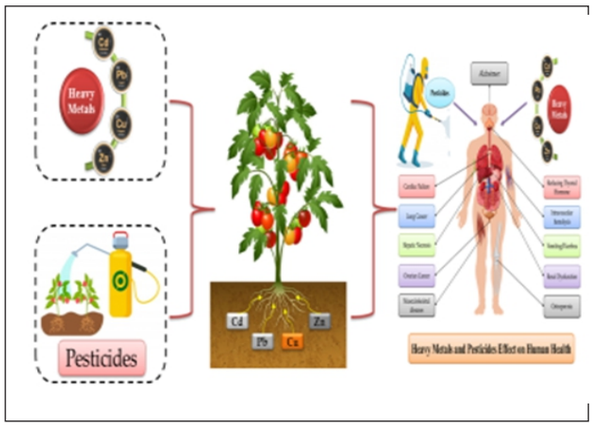

फार्म पर कार्य करने वाले मजदूर इनके अधिक संपर्क में आते है। बच्चे, प्रौढ़ मनुष्यों की अपेक्षा अधिक संवेदनशील होते हैं। कीटनाशकों के अनावरण से जन्मदोष, ट्यूमर, आनुवांशिक परिवर्तन, तंत्रिका रोग अन्तःस्त्रावी विच्छेद और अंत में इससे मृत्यु तक हो सकती है। डी.डी.टी. एवं इसका विघटन पदार्थ डी.डी.ई. महिलाओं में मासिक धर्म को प्रभावित करता है जो बाद में स्तन कैंसर का कारण भी बन सकता है। इसके अतरिक्त प्रत्यक्ष अनावरण से केरल में वर्ष 1958 में 100 लोगों की मृत्यु पैराथीयोन संदूषित गेहूँ का आटा खाने से हो गयी थी। भोपाल में गैस त्रासदी भी इसका एक प्रत्यक्ष उदाहरण है जिसमें लगभग 8000 हजार से अधिक लोगों और 15000 से अधिक जानवरों की मृत्यु हो गयी थी। इसके चिरकालिक दुष्प्रभाव आज भी वह रहने वाले लोगों पर देखे जा सकते हैं। केरल के कैसरगोड़ क्षेत्र में काजू के बागान में एण्डोसल्फान कीटनाशक के हवाई छिड़काव से वहीं की जैव विविधता पर बुरा प्रभाव पड़ा है। वहाँ पर रहने वाले लोगों में जन्मजात विकार एवं कैंसर जैसे भयंकर रोग उत्पन हो रहे हैं। इसके अतिरिक्त मछलियों, मधुमक्खियों, मेढ़कों, पंक्षियों, चूजों और गायों की मृत्यु भी देखी गयी है। इसको देखते हुए उच्चतम न्यायलय ने एण्डोसल्फान के उपयोग, उत्पादन को तत्काल प्रभाव से बंद करने का निर्णय सरकार को दिया है। असम के बराक घाटी में बैंगन प्रमुखतः से उगाई जाने वाली फसल है। यहाँ पर किये गए शोध से पता चला है कि बैंगन कि फसल पर कीटनाशकों के उपयोग से वहाँ के किसानों में विभिन्न प्रकार के रोग देखे गये हैं। इस क्षेत्र के किसान प्रमुख रूप से क्लोरिन, ओर्गनोफॉस्फेट एवं कार्बामेट कीटनाशकों का उपयोग करते हैं। जिनके उपयोग से आँखों में जलन, माँसपेशियों की कमजोरी, सीने में दर्द, पेट की समस्यायें, कमजोरी एवं मस्तिष्क का कम विकास प्रमुख थे। इसका प्रमुख कारण उचित सावधानियों न अपनाना है।

5. अन्य हानिकारक प्रभाव: कीटनाशकों का उपयोग कीटों में प्रतिरोधकता उत्पन्न करते हैं। इसका प्रमुख कारण कीटनाशकों के उपयोग से प्राकृतिक शत्रुओं की मृत्यु के कारण होता है। कीटनाशकों के उपयोग से न केवल प्राकृतिक शत्रुओं की संख्या कम होती है अपितु उनकी प्रजातियों की संख्या में भी कमी होती है। इसके अतिरिक्त यह पौधों में परागण करने वाले कीटों पर भी बुरा प्रभाव डालते हैं। बंदगोभी में एंड्रिन और पैराथीओन के छिड़काव से 27 में से 22 परभक्षी और परपोषी प्रजातियाँ विलुप्त हो गयी। लिंडेन के माहू के नियंत्रण में प्रयोग करने से हेलिओथिस और टेट्रानिकस का प्रकोप अधिक देखा गया। इसका प्रमुख कारण संभवतः इनके प्राकृतिक शत्रुओं का नष्ट होना है।

आधुनिक कृषि में कीटनाशक एक प्रमुख उत्पादक सामग्री है, जबकि यह प्रदूषण का एक प्रमुख कारक है। कुछ कीटनाशक जो अधिक देर तक मृदा एवं वातावरण में विद्यमान रहते हैं उनको भारत सरकार ने प्रतिबंधित कर दिया है, उनमें से फिर भी कुछ सार्वजनिक स्वास्थ्य के कार्यों में उपयोग होते हैं। इनका उपयोग केवल सख्त निगरानी में किये जाने की आवश्यकता है तथा इसका उपयोग तभी किया जाना उचित होगा जब इसकी अत्यंत आवश्यकता हो। भविष्य में ऐसे कीटनाशकों के विकास की आवश्यकता है जो कम दर पर अधिक प्रभावी हो तथा जल्द नष्ट होने वाले हो। इसके अतिरिक्त ये पर्यावरण एवं मानव स्वाथ्य के लिए भी सुरक्षित हो।

किसानों के आर्थिक विकास में मधुमक्खी पालन

अजीत प्रताप सिंह, कुलदीप श्रीवास्तव एवं अरविन्द नाथ सिंह

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

राष्ट्रीय मधुमक्खी पालन एवं शहद मिशन (एन.बी.एच.एम.) और राष्ट्रीय मधुमक्खी बोर्ड (एन.बी.बी.) जैसी सरकारी पहलों ने मधुमक्खी पालकों को आधुनिक तकनीकों को अपनाने के लिए प्रेरित किया है जिससे शहद उत्पादन में वृद्धि और गुणवत्ता में सुधार हुआ है। विशेष रूप से पंजाब, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों में, मधुमक्खी पालन ने हजारों छोटे किसानों को सशक्त बनाया है और उनकी आय का एक महत्वपूर्ण स्रोत बन गया है। भविष्य में बेहतर प्रशिक्षण, आधुनिक तकनीकों और सरकारी समर्थन के साथ, भारत का मधुमक्खी पालन उद्योग और भी अधिक समृद्ध और आत्मनिर्भर बन सकता है।

समस्या एवं सामधान

- **प्रति छत्ता कम उत्पादकता:** दुनिया में सबसे अधिक मधुमक्खी के छत्ते होने के बावजूद, भारत में प्रति छत्ते शहद उत्पादन मात्र 5-6 किग्रा. है जो वैश्विक औसत 22 किग्रा. प्रति छत्ते की तुलना में काफी कम है। इस असमानता के पीछे मुख्य रूप से अपर्याप्त व्यावसायिक मधुमक्खी पालन और उन्नत तकनीकों तक सीमित पहुँच जैसे कारक जिम्मेदार हैं। भारत में कई मधुमक्खी पालकों को आधुनिक और वैज्ञानिक मधुमक्खी पालन तकनीकों की जानकारी और प्रशिक्षण का अभाव है। इस कमी के कारण छत्तों का कुशल प्रबंधन नहीं हो पाता जिससे शहद की गुणवत्ता और उत्पादन क्षमता दोनों प्रभावित होते हैं। मधुमक्खी पालकों को बाजार तक सीमित पहुँच और सरकारी सहायता कार्यक्रमों की जानकारी के अभाव के कारण कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। उचित जानकारी और संसाधनों

सारिणी-1: मधुमक्खियों की प्रजातियाँ और उनकी विशेषताएँ

मधुमक्खियों की प्रजातियाँ	सामान्य नाम	उत्पादकता	विशेषताएँ
एकल छत्ते की प्रजातियाँ			
एपिस डोर्सेटा	रॉक बी	20-40 किग्रा./ कॉलोनी/ वर्ष	आम तौर पर पाई जाने वाली बड़ी, जंगली मधुमक्खियाँ जो ऊंचे पेड़ों या चट्टानों पर एकल, विशाल छत्ते बनाती हैं। वे अत्यधिक आक्रामक होती हैं और उन्हें पाला नहीं जा सकता। हालाँकि इनसे उच्च गुणवत्ता वाला शहद प्राप्त होता हैं, लेकिन इस जाति का शहद निकालना जोखिम भरा और मौसमी होती है, क्योंकि यह जंगली संग्रह पर निर्भर करती है।
एपिस फ्लोरिया	लिटिल बी एक छोटी मधुमक्खी प्रजाति	1-3 किग्रा./कॉलोनी/ वर्ष	यह झाड़ियों और छोटे पेड़ों पर एव ऩल, खुले छत्ते बनाती है। इसमें शहद की मात्रा कम होती है और यह व्यावसायिक मधुमक्खी पालन के लिए उपयुक्त नहीं है, लेकिन स्थानीय पारिस्थितिकी तंत्र को बनाये रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।
एकाधिक छत्ते की प्रजातियाँ			
एपिस सेराना इंडिका	भारतीय मधुमक्खी	6-10 किग्रा./कॉलोनी/ वर्ष	भारत में पारंपरिक मधुमक्खी पालन के लिए आम तौर पर इस्तेमाल की जाने वाली प्रजाति है। यह प्रजाति उष्णकटिबंधीय जलवायु के लिए अच्छी तरह से अनुकूलित है। एपिस सेराना इंडिका स्थानीय कीटों और बीमारियों के लिए प्रतिरोधी प्रजाति है और भारतीय देशी फसलों के लिए एक प्रभावी परागणकर्ता के रूप में कार्य करती है।
एपिस मेलिफेरा	यूरोपीय मधुमक्खी	35-40 किग्रा./कॉलोनी/ वर्ष	उच्चतम मात्रा में शहद उत्पादन करने वाली एक प्रचलित प्रजाति है, जो इसे वाणिज्यिक मधुमक्खी पालन के लिए प्रथम विकल्प बनाती है। हालाँकि, इष्टतम उत्पादकता के लिए इसे गहन प्रबंधन और रोग नियंत्रण की आवश्यकता होती है।
टेट्रागोनुला इरिडिपेनिस	डंक रहित मधुमक्खी	0.2-0.5 किग्रा./वर्ष	दक्षिण एशिया में आम तौर पर पायी जाने वाली ये डंक रहित मधुमक्खियाँ कुशल परागणकर्ता हैं और अपने शांत स्वभाव के लिए जानी जाती हैं। इनका शहद, जिसे 'पॉट हनी' कहा जाता है, अपने औषधीय गुणों के लिए अत्यधिक मूल्यवान है और महंगे मूल्यों पर बेचा जाता है।

सारिणी-2: भारत में मधुमक्खी पालन की वर्तमान स्थिति

पैरामीटर (मापदंड)	वर्तमान स्थिति
मधुमक्खी पालक पोर्टल पर पंजीकरण	14,822
पंजीकृत मधुमक्खी कालोनियाँ पोर्टल पर	23 लाख मधुमक्खी कालोनियाँ पंजीकृत हैं।
शहद उत्पादन	133.200 मीट्रिक टन
शहद निर्यात	74,413 मीट्रिक टन
निर्यात मूल्य	1,221.17 करोड
निर्यात स्थलों की संख्या	83 देश

स्रोतः राष्ट्रीय मधुमक्खी बोर्ड (2022)

सारिणी-3: एपिस मेलीफेरा की 50 कॉलोनियों से प्रतिवर्ष प्राप्त होने वाली आय

विवरण/कालोनी/वर्ष	उपज (50 कॉलोनी)	दर/किग्रा. (रू.)	कुल आय (रू.)
शहद 30 किग्रा.	1,500 किग्रा.	175	2,62,500
मोम 4 किग्रा.	200 किग्रा.	250	50,000
पराग 20 किग्रा.	1000 किग्रा.	500	5,00,000
प्रोपोलिस 1 किग्रा.	50 किग्रा.	700	35,000
रॉयल जेली 0.5 किग्रा.	25 किग्रा.	1200	30,000
कुल आय			8,77,500
मधुमक्खियों की 50 कॉलोनियों के पालन-पोषण पर कुल व्यय			6,54,900
शुद्ध आय (कुल आयःकुल व्यय)			2,22,600

के अभाव में वे अपने उत्पादों को उचित मूल्य पर बेचने में असमर्थ रहते हैं जिससे उनकी आर्थिक स्थिति और व्यावसायिक स्थिरता प्रभावित होती है। इन चुनौतियों से निपटने के लिए व्यापक दृष्टिकोण आवश्यक है जिसके लिए व्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रम द्वारा मधुमक्खी पालकों को वैज्ञानिक विधियों और छत्ते प्रबंधन के बारे में शिक्षित करने के साथ-साथ टिकाऊ कृषि व्यवसाय को बढ़ावा, कीटनाशकों के उपयोग को कम करने और मधुमक्खी-अनुकूल आवासों को बढ़ावा देना। उन्नत तकनीक, मोम की नींव वाली चादरें, 19वीं सदी के मध्य में मोम की नींव वाली चादरों की शुरुआत हुई जो मधुमक्खियों को छत्ते बनाने के लिए एक स्थिर आधार प्रदान करती हैं। यह तकनीक मधुमक्खियों को फ्रेम के भीतर व्यवस्थित रूप से छत्ता बनाने में मदद करती है जिससे छत्ते का निरीक्षण और शहद निकालने की प्रक्रिया आसान हो जाती है। आधुनिक मोम की नींव वाली चादरों में अक्सर अतिरिक्त मजबूती के लिए एम्बेडेड तार जोड़े जाते हैं जिससे छत्तों को नुकसान पहुँचाये बिना केन्द्र प्रसारक बल द्वारा शहद आसानी से निकाला जा सकता है।

- **आर्थिक योगदान के अवसर:** एपिस मेलिफेरा कई फसलों के लिए प्राथमिक परागणकर्ता है जिसमें फल, सब्जियाँ और मेवे की फसल शामिल हैं, जो वैश्विक खाद्य उत्पादन में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं। यह प्रजाति शहद, मधुमक्खी पराग, मोम, प्रोपोलिस और रॉयल जेली का उत्पादन करती है जिसका व्यापक रूप से भोजन, दवा और सौंदर्य प्रसाधनों में उपयोग किया जाता है। ये वस्तुएँ छोटे पैमाने और वाणिज्यिक उद्यमों का समर्थन करती हैं जिससे किसानों की आय में विविधता लाने के अवसर मिलते हैं।

महिलाओं और युवाओं का सशक्तिकरण: मधुमक्खी पालन महिलाओं और युवाओं के लिए सुलभ आर्थिक अवसर प्रदान करता है जिससे वित्तीय स्वतंत्रता और उद्यमशीलता को बढ़ावा मिलता है। छोटे पैमाने के मधुमक्खी पालक स्थायी आय उत्पन्न कर सकते हैं, परिवारों को गरीबी से बाहर निकाल और जीवन स्तर में सुधार कर सकते हैं। मधुमक्खी पालन में प्रशिक्षण ज्ञान और कौशल को बढ़ाता है, आत्म-निर्भरता और सामुदायिक विकास को बढ़ावा देता है।

मधुमक्खी पालन की वृद्धि और विकास के लिए रणनीतियाँ: मधुमक्खी पालन के सामाजिक-आर्थिक प्रभाव को अधिकतम करने के लिए सरकारी, गैर सरकारी संगठनों और निजी क्षेत्र के हितधारकों को रणनीतिक हस्तक्षेप अपनाना चाहिए, सरकारों को मधुमक्खी पालन का समर्थन करने वाली

नीतियों को लागू करना चाहिए, जिसमें सब्सिडी, अनुसंधान निधि और हानिकारक कीटनाशकों के खिलाफ नियम शामिल हैं। आधुनिक मधुमक्खी पालन तकनीकों, छत्ते के प्रबंधन और बाजार तक पहुँच के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रदान करना महत्वपूर्ण है।

बाजार की बाधाएः छोटे पैमाने के मधुमक्खी पालक अक्सर प्रतिस्पर्धा, खराब बुनियादी ढाँचे और अपर्याप्त प्रसंस्करण सुविधाओं के कारण लाभदायक बाजारों तक पहुँचने के लिए संघर्ष करते हैं। कई समुदायों में कुशल मधुमक्खी पालन व्यवसाय के लिए आवश्यक ज्ञान और कौशल की कमी है। शहद उत्पादन आपूर्ति श्रृंखलाओं को मजबूत करना, प्रसंस्करण सुविधाओं में सुधार करना और सहकारी समितियों की स्थापना करना छोटे पैमाने के मधुमक्खी पालकों को बेहतर बाजारों तक पहुँचने में मदद कर सकता है।

सब्सिडी और अनुदानः सरकारों को मधुमक्खी पालन उपकरण, छत्ते के निर्माण और स्टार्टअप लागतों के लिए सब्सिडी प्रदान करनी चाहिए ताकि अधिक लोगों, विशेष रूप से छोटे पैमाने के किसानों को मधुमक्खी पालन में शामिल होने के लिए प्रोत्साहित किया जा सके। वित्तीय संस्थानों को मधुमक्खी पालकों के लिए अनुकूलित ऋण कार्यक्रम विकसित करने चाहिए, जो कम ब्याज दरों और लचीली पुनर्भुगतान योजनाओं की पेशकश करते हैं। सहकारी समितियों के गठन को प्रोत्साहित करने से मधुमक्खी पालकों को संसाधनों को इकट्ठा करने, ज्ञान साझा करने और बेहतर बाजार मूल्यों पर बातचीत करने में मदद मिल सकती है।

वैज्ञानिक अनुसंधान में निवेशः सरकारों को इस क्षेत्र की स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए मधुमक्खी स्वास्थ्य, रोग की रोक-थाम, प्रजनन सुधार और जलवायु लचीलापन पर अधिक अनुसंधान होना चाहिए। शोध संस्थानों को मधुमक्खी पालकों के साथ मिलकर नवीन छत्ता प्रबंधन तकनीक विकसित करनी चाहिए जो शहद और अन्य मधुमक्खी उत्पाद की पैदावार को बढ़ाए। मधुमक्खी आबादी, शहद उत्पादन और बाजार के रुझानों पर राष्ट्रीय डेटाबेस स्थापित करने से सूचित नीतिगत निर्णय लेने में मदद मिलेगी। कीटनाशक विनियमनरू अत्यधिक कीटनाशक का उपयोग मधुमक्खियों को नुकसान पहुँचाता है जिससे परागण दक्षता और शहद उत्पादन कम हो जाता है। नियोनिकोटिनोइड्स, प्रणालीगत कीटनाशकों का एक वर्ग, मधुमक्खियों द्वारा खाये जाने वाले पराग और मकरंद में उनकी उपस्थिति के कारण मधुमक्खियों की संख्या तेजी से कम हो रही है। सरकारों को मधुमक्खियों पर हानिकारक प्रभावों को रोकने के लिए कीटनाशकों के उपयोग को विनियमित करना चाहिए, मधुमक्खी के अनुकूल कृषि पद्धतियों को बढ़ावा देना चाहिए। सरकारों को उपभोक्ताओं के लिए गुणवत्ता और सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए शहद और अन्य मधुमक्खी उत्पादों के लिए मानक लागू करने चाहिए।

पर्यावरणीय चुनौतियाँः प्रतिकूल मौसम की स्थिति जैसे- बेमौसम बारिश, के कारण पराग और मकरंद की उपलब्धता बाधित होती है जिसके कारण शहद की पैदावार प्रभावित होती है। इसके अतिरिक्त, कृषि में कीटनाशकों का अंधाधुंध उपयोग मधुमक्खियों के स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण खतरा पैदा करता है जिससे कॉलोनी में कमी आती है। कीटनाशकों का दुरुपयोग मधुमक्खी पालन के लिए महत्वपूर्ण खतरा पैदा करता है, क्योंकि मधुमक्खियाँ कृषि और बागवानी में उपयोग किए जाने वाले विभिन्न रसायनों के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होती हैं। हानिकारक कीटनाशकों के संपर्क में आने से मधुमक्खियों की तत्काल मृत्यु हो सकती है या उनके विकास, व्यवहार और समग्र कॉलोनी के स्वास्थ्य को नुकसान पहुँचाने वाले उप-घातक प्रभाव हो सकते हैं।

सारिणी-4: मधुमक्खियों के लिए कीटनाशक विषाक्तता के स्तर

सबसे अधिक विषैले कीटनाशक	मध्यम विषैले कीटनाशक	कम विषैले कीटनाशक
कार्बारिल, डायजिनॉन, इमिडाक्लोप्रिड, कॉपर सल्फेट लाइम, सबाडिला, बीटा-साइफ्लूथ्रिन, सल्फॉक्साफ्लोर, साइपरमेथ्रिन, बिफेथ्रिन, क्लोथियानिडिन, एस्फेनवालेरेट, फेनप्रोपेथ्रिन, आईडोक्साकार्ब, मेथोमाइल, डिनोटेफ्यूरान, लैम्ब्डा-साइहलोथ्रिन, मैलाथियान, नेलेड, फॉस्मेट, पाइरेथ्रिन, पाइरिडाबेन, थियामेथोक्सम	एसिटामिप्रिड, एजाडिरेक्टिन, कॉपर हाइड्रोक्साइड, ब्यूवेरिया बेसियाना, नोवालुरोन, बिफेनाजैट, ऑक्सीडेमेटन मिथाइल, क्लोरफेनेपायर, स्पिनोसैड	सल्फर, लाइमसल्फर, मैन्कोजेब, मेटलडिहाइड ब्यूटिरेट, मेटकोनाजोल, कैल्शियम पॉलीसल्फाइड, कैप्टान, क्लोरएंट्रानिलिप्रोले, क्लोरोथालोनिल, क्लोरफेंटाजिन, पैराक्वाट, पेन्थियोपाइराड, प्रोपार्गाइट, साइफ्लूफेनामिड, डिकोफोल, फेनबुकोनाजोल, फेनहेक्सामिड, फेनपायरोक्सिमेट, फ्लोक्सियामाइड, लहसुन, नीम तेल, कपास बीज तेल, जिबरेलिक एसिड, लौंग तेल, बैसिलस थुरिंजिएंसिस (बीटी)

स्रोतः न्यू इंग्लैंड एप्पल पेस्ट मैनेजमेंट गाइड (2023) ओरेगन स्टेट यूनिवर्सिटी बुलेटिन 591, कीटनाशकों से मधुमक्खी के जहर को कैसे कम करें।

निगरानी और रोग नियंत्रण कार्यक्रम: सरकारों को मधुमक्खी रोगों और कीटों के प्रसार का पता लगाने और उन्हें रोकने के लिए निगरानी प्रणाली स्थापित करनी चाहिए। मधुमक्खी पालकों को मधुमक्खी के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए पेशेवर सलाह और उपचार विकल्पों तक पहुँच होनी चाहिए। अन्य क्षेत्रों के साथ एकीकरण और रसायन मुक्त मधुमक्खी पालन विधियों को प्रोत्साहित करने से मधुमक्खी कालोनियों पर हानिकारक पदार्थों के प्रभाव को कम करने में मदद मिल सकती है।

फसलों का परागण: मधुमक्खी पालन की सबसे महत्वपूर्ण भूमिकाओं में से एक खाद्य फसलों का परागण है। मधुमक्खियां कई तरह के फलों, सब्जियों और मेवों की फसलों का परागण करती हैं, जो मानव आहार के लिए आवश्यक हैं। मधुमक्खियों जैसे परागणकों के बिना, इनमें से कई फसलें पैदा नहीं हो पातीं। उदाहरण के लिए, मधुमक्खियाँ सेब, स्ट्रॉबेरी, बादाम, ब्लूबेरी, खीरे और कई अन्य फसलों का परागण करती हैं। इससे स्थिर और विविध खाद्य आपूर्ति सुनिश्चित करने में मदद मिलती है। परागण को बढ़ाकर, मधुमक्खियां कई फसलों की उपज और गुणवत्ता बढ़ाती हैं। यह उन किसानों के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण है जो अपनी भूमि की उत्पादकता बढ़ाने के लिए इन परागणकों पर निर्भर हैं, जिससे बढ़ती वैश्विक आबादी के लिए पर्याप्त भोजन सुनिश्चित होता है।

जैव विविधता के लिए सहायक: मधुमक्खियों द्वारा परागण केवल खाद्य फसलों तक ही सीमित नहीं है। मधुमक्खियाँ उन पौधों को परागित करने में भी मदद करती हैं जो व्यापक पारिस्थितिकी तंत्र के लिए महत्वपूर्ण हैं, जैव विविधता का समर्थन करती हैं और पारिस्थितिक स्वास्थ्य को बढ़ावा देती हैं। मधुमक्खियां स्वस्थ पारिस्थितिकी तंत्र को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। जब वे पौधों को परागित करती हैं, तो वे पेड़ों, झाड़ियों और फूलों की कई प्रजातियों के प्रजनन को सुनिश्चित करती हैं, जिससे पर्यावरण के समग्र स्वास्थ्य में योगदान मिलता है। यह बदले में वन्यजीवों को भोजन और आश्रय प्रदान करके उनका समर्थन करती है।

संरक्षण प्रयास: मधुमक्खियों को पालने और मधुमक्खी के अनुकूल व्यवसाय की वकालत करके, मधुमक्खी पालक मधुमक्खी आबादी की रक्षा और संरक्षण में मदद करते हैं। इसमें जंगली फूल लगाना, हानिकारक कीटनाशकों से बचना और परागण स्वास्थ्य को बढ़ावा देने वाली नीतियों का समर्थन करना शामिल है। मधुमक्खी पालन लोगों को प्रकृति से जुड़ने, मधुमक्खियों के जीवन चक्र के बारे में जानने और पौधों, जानवरों और पर्यावरण के बीच जटिल संबंधों को समझने के लिए प्रोत्साहित करता है। यह संबंध अधिक पर्यावरणीय चेतना और प्राकृतिक दुनिया की रक्षा करने की इच्छा को बढ़ावा देता है। मधुमक्खी पालन अक्सर समुदाय की भावना को बढ़ावा देता है, क्योंकि मधुमक्खी पालक दूसरों के साथ ज्ञान, संसाधन और अनुभव साझा कर सकते हैं। इससे स्थिरता और पर्यावरण संरक्षण पर केंद्रित मजबूत स्थानीय नेटवर्क बन सकते हैं।

सारिणी-5: मधुमक्खियों के रोग और कीट

रोग और कीट	कारक एजेंट	लक्षण	रोक-थाम एवं उपचार
अमेरिकन फाउलब्रूड (जीवाण रोग)	पैनीबैसिलस लार्वा	धँसा हुआ, छिद्रित आवरणय दुर्गंध या भूरे, रेशेदार लार्वा अवशेषय कोशिकाओं में कठोर शल्क	एंटीबायोटिक्स (ऑक्सीटेट्रासाइक्लिन 250 मिग्रा. 750 लीटर पानी एक टेबल स्पून शहद मिश्रित घोल) का छिड़काव बेहतर नियंत्रण देगा, स्वच्छता बनाए रखें।
यूरोपियन फाउलब्रूड (जीवाण रोग)	मेलिसोकोकस प्लूटोनियस	मुड़े हुए, पीले रंग के लार्वा या खट्टी गंधय बिना ढके, मृत लार्वा	एंटीबायोटिक्स (ऑक्सीटेट्रासाइक्लिन 250 मिग्रा. 750 लीटर पानी एक टेबल स्पून शहद मिश्रित घोल) का छिड़काव बेहतर नियंत्रण देगा, स्वच्छता बनाए रखें।
नेसेमा	नोसेमा एपिस, नोसेमा सेराने	पेचिश (छत्ते पर भूरे धब्बे)या कम उम्र या कमजोर, सुस्त मधुमक्खियाँ।	छत्ते के फ्रेम को नए फ्रेम से बदलना, 60 प्रतिशत फॉर्मिक एसिड (एन. एपिस के लिए) से धूम्रीकरणय छत्ते को सूखा, हवादार बनाए रखें।
(माइक्रोस्पोरिडिया)	एस्कोस्फेरा एपिस	ब्रूड कोशिकाओं में ममीकृत, चाक जैसे सफेद लार्वा ब्रूड व्यवहार्यता में कमी।	छत्ते के वेंटिलेशन में सुधार या संक्रमित रानीयों को छत्ते से हटाएँ।

चाक ब्रूड	एस्परजिलस एसपीपी.	कठोर, हरे या काले रंग के ममीकृत लार्वाय ब्रूड की तेजी से मृत्यु।	संक्रमित छत्ते को हटाएँ या मजबूत कॉलोनियाँ बनाए रखें।
(कवक रोग)	सैकब्रूड वायरस	लार्वा प्यूपा बनने में विफल या काला, थैली जैसा दिखना या धब्बेदार ब्रूड।	संक्रमित छत्ते को हटाएँ या मजबूत कॉलोनियाँ बनाए रखें।
स्टोनब्रूड	वरोआ डिस्ट्रक्टर (परजीवी माइट)	विकृत पंख, धब्बेदार ब्रूड पैटर्न, कमजोर कॉलोनी, छोटा जीवनकाल।	रासायनिक (ऑक्सालिक/फॉर्मिक एसिड 60 प्रतिशत या एकीकृत कीट प्रबंधन (आई.पी.एम.)।
(कवक रोग)	गैलेरिया मेलोनेला (ग्रेटर वैक्स मॉथ), अक्रोइया ग्रिसेला (लेसर वैक्स मॉथ)	जाल, छत्ते में सुरंग, क्षतिग्रस्त ब्रूड में दुर्गंध।	संग्रहित छत्तों को एयर टाइट कंटेनर में रखें संक्रमित फ्रेम को हटा दें।

विविध वनस्पतियाँ और अनुकूल जलवायुरू हिमालय पर्वतों से लेकर उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों तक भारत के विविध परिदृश्य मधुमक्खियों के पनपने के लिए आदर्श वातावरण प्रदान करते हैं। पूरे वर्ष अलग-अलग फूलों वाले पौधों की उपलब्धता मधुमक्खियों के लिए मकरंद और पराग का निरंतर स्रोत सुनिश्चित करती है, जिससे कई मौसमों में शहद का उत्पादन संभव हो जाता है। सुंदरबन शहद, हिमालयी शहद और नीलगिरी शहद जैसी शहद की किस्में पहले से ही अपने अनूठे स्वाद और औषधीय गुणों के लिए प्रसिद्ध हैं। जैसे-जैसे शहद के स्वास्थ्य लाभों (जैसे-जीवाणुरोधी गुण, एंटीऑक्सिडेंट और प्राकृतिक स्वीटनर के रूप) के बारे में जागरूकता बढ़ती है, घरेलू स्तर पर शहद की माँग बढ़ रही है। भारतीय जैविक खाद्य बाजार तेजी से बढ़ रहा है, जिसमें शहद स्वास्थ्य के प्रति जागरूक उपभोक्ताओं के लिए एक प्रमुख उत्पाद है।

पारंपरिक खेती का पूरक: मधुमक्खी पालन किसानों को बहुत अधिक भूमि की आवश्यकता के बिना आय का एक अतिरिक्त स्रोत प्रदान करता है। इसे मौजूदा कृषि प्रणालियों में एकीकृत किया जा सकता है, परागण के माध्यम से फसल उत्पादकता को बढ़ाया जा सकता है और शहद और अन्य मधुमक्खी उत्पाद (जैसे-मधुमक्खी पराग, रॉयल जेली, मोम) प्रदान किया जा सकता है। मधुमक्खी पालन का संचालन शुरू करने के लिए कई अन्य कृषि उपक्रमों की तुलना में अपेक्षाकृत कम प्रारंभिक निवेश की आवश्यकता होती है।

निर्यात के अवसर: भारत पहले से ही प्रमुख शहद उत्पादकों में से एक है, सही बुनियादी ढाँचे, प्रशिक्षण और गुणवत्ता नियंत्रण के साथ, भारतीय शहद अंतरराष्ट्रीय निर्यात मानकों को पूरा कर सकता है जिससे किसानों की आय बढ़ सकती है, लेकिन यह वैश्विक शहद व्यापार का केवल एक छोटा प्रतिशत है। उच्च गुणवत्ता वाले शहद, विशेष रूप से जैविक शहद की अंतर्राष्ट्रीय माँग बढ़ रही है। भारत अपनी अनूठी शहद किस्मों का लाभ उठा सकता है और निर्यात हिस्से को बढ़ा सकता है, खासकर प्राकृतिक खाद्य उत्पादों की बढ़ती वैश्विक मांग के साथ।

मधुमक्खी पालन सामाजिक, आर्थिक वृद्धि, पर्यावरण संरक्षण और खाद्य सुरक्षा के लिए अत्यधिक संभावनाएँ प्रदान करता है। यह न केवल स्थायी आजीविका के अवसर उपलब्ध कराता है, बल्कि परागण के माध्यम से कृषि उत्पादकता को भी बढ़ाता है, जिससे पारिस्थितिक संतुलन बना रहता है। सही नीतियों, निवेश और नवींन तकनीकी के साथ, यह क्षेत्र ग्रामीण विकास, आर्थिक सशक्तिकरण और जैव विविधता संरक्षण में क्रांतिकारी भूमिका निभा सकता है। वैश्विक बाजार में मधुमक्खी उत्पादों की बढ़ती मांग को देखते हुए, उद्योग के हितधारकों को स्थिरता, गुणवत्ता सुधार और नवोन्मेषी वैज्ञानिक अनुसंधान पर ध्यान केंद्रित करना होगा। भारत में मधुमक्खी पालन क्षेत्र सरकारी पहलों, स्वास्थ्य जागरूकता में वृद्धि और शहद एवं अन्य मधुमक्खी उत्पादों की बढ़ती मांग से प्रेरित होकर तेजी से विस्तार कर रहा है। हालाँकि, मधुमक्खी पालकों और उत्पादकों से संबंधित सटीक और विश्वसनीय तरीकों प्रामाणिक डेटा की कमी एक बड़ी चुनौती बनी हुई है। इस लिए व्यापक डेटा संग्रह और विश्लेषण तंत्र विकसित करना आवश्यक है, जिससे लक्षित नीतियाँ बनाई जा सकें और मधुमक्खी पालन उद्योग को और अधिक समर्थन और विस्तार मिल सके। भारत की विविध कृषि-जलवायु परिस्थितियाँ शहद उत्पादन और निर्यात के लिए अपार संभावनाएँ प्रस्तुत करती हैं। यदि इस क्षेत्र को तकनीकी प्रशिक्षण, अनुसंधान एवं विकास और बाजार संपर्क के माध्यम से और सशक्त किया जाये, तो मधुमक्खी पालन भारत में एक सशक्त ग्रामीण अर्थव्यवस्था और सतत कृषि विकास का आधार बन सकता है।

समेकित मत्स्य-वनस्पति पालन प्रणाली (एक्वापोनिक्स) में पत्तेदार सब्जियों की खेती

हरे कृष्ण, *मुर्तजा हसन, **अजित कुमार वर्मा, ***प्रतिभा साहु, **वेनिजा कैथी जॉन,
स्वाति शर्मा, राजीव कुमार, श्रेया पंवार, शुभम कुमार तिवारी, अनंत बहादुर एवं राजेश कुमार

भा.कृ.अनु.प.-भा.स. अनु. सं., वाराणसी, *भा.कृ.अनु.प.-भा. कृ. अनु. सं., नई दिल्ली,
**भा.कृ.अनु.प.-केंमा. शि. सं., मुंबई ***भा.कृ.अनु.प.-भा.ज. प्र. सं., भुवनेश्वर

भोजन, जल और आश्रय मानव जीवन के लिए अपरिहार्य हैं, लेकिन ये संसाधन सीमित हैं जिससे उपलब्ध भूमि पर दबाव बढ़ रहा है। वैश्विक जनसंख्या तेजी से बढ़ रही है और वर्ष 2050 तक इसके लगभग 9.7 अरब तक पहुँचने का अनुमान है। जहां एक ओर जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ रही है; वहीं कृषि भूमि क्षमता केवल 2 प्रतिशत बढ़ सकती है। एक अनुमान के अनुसार, वर्ष 2050 तक देश में उपभोक्ताओं की मांग को पूरा करने के लिए 342 मिलियन टन सब्जियों की आवश्यकता होगी जबकि वर्तमान में यह 205 मिलियन टन ही है। इस संदर्भ में, खाद्य सुरक्षा 21वीं शताब्दी की सबसे बड़ी कृषि चुनौतियों में से एक है। जलवायु परिवर्तन, पर्यावरण प्रदूषण और शहरीकरण के कारण उपजाऊ मिट्टी और स्वच्छ जल की उपलब्धता घट रही है जिससे पारंपरिक खेती जटिल हो रही है। रोगजनकों और कीटों के कारण फसल उत्पादन में कमी एक गंभीर समस्या है। ऐसी स्थिति में, कृषि को अधिक उत्पादक, टिकाऊ और सुरक्षित बनाने के लिए नवीन तकनीकों का उपयोग अनिवार्य है, विशेष रूप से उन क्षेत्रों में जहाँ जलवायु परिवर्तन और कठिन भौगोलिक परिस्थितियाँ अधिक प्रभाव डालती हैं। हाइड्रोपोनिक्स, विशेष रूप से ऊर्ध्वाधर खेती, एक प्रभावी समाधान के रूप में सामने आ रही है। यह तकनीक सीमित भूमि और जल का अधिकतम उपयोग करती है, समय और श्रम की बचत करती है तथा कीटों और प्राकृतिक आपदाओं से मुक्त नियंत्रित वातावरण में खेती को संभव बनाती है। सब्जियाँ प्रमुख नकदी फसलें हैं, जो किसानों की आय बढ़ाने के साथ-साथ पोषण स्तर में सुधार करती हैं। बढ़ती माँग को पूरा करने के लिए सब्जी उत्पादन को बढ़ाना आवश्यक है और इसमें हाइड्रोपोनिक खेती महत्वपूर्ण योगदान दे सकती है। हाइड्रोपोनिक्स एक आधुनिक मिट्टी-रहित खेती की तकनीक है, जो घरेलू उत्पादन को बढ़ाने और यूरोपीय सब्जियों के निर्यात से विदेशी मुद्रा अर्जन के नए अवसर प्रदान करती है।

भारत में मछली भोजन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है और इसके उपभोग की मात्रा विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न है। पश्चिम बंगाल, असम, ओडिशा, केरल, तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश जैसे राज्यों में मछली आहार का प्रमुख हिस्सा है। विश्व खाद्य एवं कृषि संगठन के अनुसार, भारत में प्रति व्यक्ति मछली की खपत लगभग 6-9 किग्रा. प्रति वर्ष है, जो वैश्विक औसत (20 किग्रा./वर्ष) से काफी कम है। देश के विभिन्न हिस्सों से मछलियों का निर्यात होता है, लेकिन समय-समय पर अंतर-राज्यीय निर्यात पर प्रतिबंध की खबरें सुर्खियों में रहती हैं। इसका कारण भंडारण और परिवहन के दौरान मछलियों को फोर्मलीन या कीटनाशकों जैसे हानिकारक रसायनों से उपचारित करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त, पारंपरिक मत्स्य पालन में कभी-कभी जैवनाशी (एंटीबायोटिक्स) और रसायनों का उपयोग होता है, जो मछली की गुणवत्ता को प्रभावित कर सकता है। ऐसी परिस्थितियों में, सुरक्षित कृषि उत्पादों के लिए एक्वापोनिक्स एक समाधान हो सकता है। यह एक्वाकल्चर (मत्स्य पालन) और हाइड्रोपोनिक्स (मृदा-रहित जलीय कृषि) का एकीकृत रूप है, यह एक नवाचारी और समगतिशील कृषि प्रणाली है, यह पुनःपरिसंचरण प्रणाली पर आधारित है जिसमें मछली और पौधों के बीच प्राकृतिक सहजीवन का उपयोग होता है, जो मछली पालन और मिट्टी-रहित पौधों की खेती को जोड़ता है। यह प्रणाली शहरी और संसाधन-सीमित क्षेत्रों के लिए विशेष रूप से उपयोगी है, जहाँ भूमि और जल की कमी है। यह स्थानीय खाद्य उत्पादन को बढ़ावा देती है, परिवहन लागत को कम करती है और संसाधनों का कुशल उपयोग सुनिश्चित करती है। मछलियों का अपशिष्ट पौधों के लिए पोषक तत्व प्रदान करता है, जबकि पौधे पानी को शुद्ध करके मछलियों के लिए उपयुक्त बनाते हैं। यह प्रणाली पारंपरिक कृषि की तुलना में अधिक प्रभावी और पर्यावरण-अनुकूल है, जो मिट्टी के कटाव, जल संकट और रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग जैसी समस्याओं का समाधान कर सकती है।

एक्वापोनिक्स में सब्जी उत्पादन के लाभ

संसाधन दक्षता: एक्वापोनिक्स में पारंपरिक मिट्टी-आधारित खेती की तुलना में 90 प्रतिशत तक कम पानी का उपयोग होता है, क्योंकि यह एक बंद पुनर्चक्रण प्रणाली पर काम करता है। पानी को बार-बार छाना (फ़िल्टर) और पुनः उपयोग

में लाया जाता है, जिससे जल की अपव्ययता न्यूनतम होती है। यह विशेष रूप से उन क्षेत्रों के लिए लाभकारी है जहाँ जल की कमी है। इसके अतिरिक्त, यह प्रणाली पारंपरिक खेती की तुलना में कम भूमि की आवश्यकता रखती है, जिससे संसाधनों का अधिकतम उपयोग संभव होता है।

उच्च उपज और तीव्र वृद्धिः एक्वापोनिक्स में पौधों को मछली के अपशिष्ट से निरंतर और संतुलित पोषक तत्व प्राप्त होते हैं, जो उनकी वृद्धि को तेज करते हैं। यह प्रणाली पौधों को इष्टतम परिस्थितियाँ प्रदान करती है, जैसे नियंत्रित तापमान, प्रकाश, और पोषक तत्वों की उपलब्धता, जिससे फसलों की उपज 20-30 प्रतिशत तक बढ़ सकती है। उदाहरण के लिए, पत्तेदार सब्जियाँ जैसे- पालक और सलाद पत्ता (लेट्यूस) कम समय में अधिक मात्रा में उगाई जा सकती हैं।

रसायन-मुक्त खेतीः एक्वापोनिक्स में मछली का प्राकृतिक अपशिष्ट पौधों के लिए पोषक तत्वों का प्राथमिक स्रोत होता है, जिससे कृत्रिम उर्वरकों और रासायनिक कीटनाशकों की आवश्यकता लगभग समाप्त हो जाती है। यह जैविक उत्पादन को बढ़ावा देता है जिसके परिणामस्वरूप उपभोक्ताओं को स्वास्थ्यवर्धक और रसायन-मुक्त पत्तेदार सब्जियाँ मिलती हैं। यह प्रणाली पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य दोनों के लिए लाभकारी है, क्योंकि यह रासायनिक अवशेषों के जोखिम को कम करती है।

समगतिशील अपशिष्ट प्रबंधनः एक्वापोनिक्स मछली पालन और सब्जी उत्पादन को एकीकृत करके अपशिष्ट प्रबंधन को टिकाऊ बनाता है। मछलियों द्वारा उत्पन्न अपशिष्ट, जो पारंपरिक मत्स्य पालन में पर्यावरण प्रदूषण का कारण बन सकता है, इस प्रणाली में पौधों के लिए पोषक तत्व के रूप में उपयोग होता है। पौधे इस अपशिष्ट को अवशोषित करके पानी को शुद्ध करते हैं, जो फिर मछलियों के लिए पुनः उपयोग में आता है। यह प्रक्रिया पर्यावरण प्रदूषण को कम करती है और संसाधनों का चक्रीय उपयोग सुनिश्चित करती है।

स्थान का कुशल उपयोगः एक्वापोनिक्स को ऊर्ध्वाधर खेती या अंतर्द्वारीय (इनडोर) प्रणालियों में सहजता से लागू किया जा सकता है, जो इसे शहरी क्षेत्रों के लिए आदर्श बनाता है। सीमित स्थान वाले शहरों में, जहाँ पारंपरिक खेती संभव नहीं है, एक्वापोनिक्स छोटे क्षेत्रों में अधिक उत्पादन की सुविधा देता है, उदाहरण के लिए, गोदामों, छतों या बेसमेंट में इस प्रणाली को स्थापित किया जा सकता है जिससे शहरी खाद्य उत्पादन में क्रांति लाई जा सकती है।

एक्वापोनिक्स में सफलतापूर्वक उगाई जाने वाली फसलें

- **पालकः** पोषक तत्वों की कम आवश्यकता और तेज वृद्धि के कारण लोकप्रिय तथा स्थानीय बाजारों में उच्च माँग।
- **चौलाईः** कठिन परिस्थितियों में भी अच्छी पादप वृद्धि। यह उच्च पोषण मूल्य प्रदान करता है।
- **पुदीनाः** कम रखरखाव और तेजी से बढ़ने वाली फसल, जिसका उपयोग पाक-विषयक (क्यूलिनेरी) और औषधीय उद्देश्यों में होता है।
- **धनियाः** उच्च माँग वाली फसल, जो एक्वापोनिक्स में आसानी से उगती है।
- **पाक-चोईः** पत्तेदार सब्जी, जो पोषक तत्वों के संतुलित स्तर पर अच्छी वृद्धि दिखाती है।
- **सलाद पत्ती (लेट्यूस):** एक्वापोनिक्स की सबसे लोकप्रिय फसल, क्योंकि यह कम समय में अधिक उपज देती है और वैश्विक बाजार में माँग रखती है।

खाद्य सुरक्षा में योगदानः एक्वापोनिक्स स्थानीय स्तर पर ताजे और पोषक सब्जियों का उत्पादन बढ़ाकर खाद्य सुरक्षा को सुदृढ़ करता है। यह आयातित खाद्य पदार्थों पर निर्भरता को कम करता है, जो विशेष रूप से उन क्षेत्रों में महत्वपूर्ण है जहाँ परिवहन लागत अधिक है या आपूर्ति श्रृंखला बाधित हो सकती है। इसके अतिरिक्त, यह प्रणाली वर्ष पर्यंत उत्पादन की सुविधा देती है, जिससे उपभोक्ताओं को ताजे और पौष्टिक सब्जियों की नियमित आपूर्ति सुनिश्चित होती है। यह पोषण स्तर को बेहतर बनाने और खाद्य-संकट से निपटने में भी सहायक है।

उपयुक्त फसलें व मछली प्रजातियाँ

एक्वापोनिक्स प्रणाली में ऐसी फसलें उगाना आदर्श है, जिनकी पोषक तत्वों की आवश्यकता कम से मध्यम हो और जो तेजी से बढ़ सकें। पत्तेदार हरी सब्जियाँ इस प्रणाली के लिए विशेष रूप से उपयुक्त हैं, क्योंकि वे मछली अपशिष्ट से प्राप्त पोषक तत्वों को आसानी से अवशोषित कर लेती हैं। इन फसलों की खेती के लिए 30 पौधे प्रति वर्ग मीटर का घनत्व आदर्श माना जाता है, जो स्थान का कुशल उपयोग सुनिश्चित करता है और अधिकतम उत्पादन देता है। पौधों का चयन बाजार की माँग और प्रणाली की क्षमता के आधार पर किया जाना चाहिए। भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान में किए गए

परिणाम बताते हैं कि प्रति उत्पादन चक्र में प्रति वर्ग मीटर क्षेत्रफल से पालक (1.07 किग्रा.), चौलाई (237.4 ग्राम), करेमू साग (1.15 किग्रा.), पुदीना (1.65 किग्रा.), सलाद पत्ता (2.42 किग्रा.) और पोक-चोई (1.46 किग्रा.) की अच्छी उपज प्राप्त कर सकते हैं।

एक्वापोनिक्स में मछली का चयन इस बात पर निर्भर करता है कि वे प्रणाली के वातावरण में अच्छी तरह जीवित रह सकें और पौधों के लिए पर्याप्त पोषक तत्व प्रदान करें। निम्नलिखित मछली प्रजातियाँ सामान्यताया उपयोग की जाती हैं:

तिलापिया: तिलापिया एक्वापोनिक्स के लिए अत्यंत उपयुक्त है क्योंकि यह मजबूत होती है, तेजी से बढ़ती है (6-9 महीनों में लगभग 500 ग्राम तक पहुँच जाती है), और 18-30 डिग्री सेन्टीग्रेड के बीच एवं 7.0 के उदासीन पीएच पर अच्छे से पनपती है। यह अच्छी मात्रा में अपशिष्ट उत्पन्न करती है, जो लेट्यूस या पत्तेदार सब्जियों के लिए पोषक तत्वों का स्रोत बनता है, परंतु इसके सीमित बाजार मूल्य के कारण एक्वापोनिक्स खेती से होने वाले लाभ में कमी हो सकती है।

ट्राउट: ट्राउट ठंडे पानी में पनपते हैं, जो उन्हें ठंडे जलवायु वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त बनाता है। ट्राउट तापमान के प्रति संवेदनशील होते हैं, इसलिए पानी का तापमान उनके अनुकूल सीमा में रखना आवश्यक है। इनकी गुणवत्ता उत्कृष्ट होती है। यदि पानी की गुणवत्ता अच्छी हो, तो ट्राउट आमतौर पर व्याधियों के प्रति प्रतिरोधी होते हैं। तिलापिया की तुलना में ट्राउट की वृद्धि धीमी होती है जिससे इसे तैयार होने में अधिक समय लगता है। साथ ही, ट्राउट को उच्च ऑक्सीजन की जरूरत होती है, इसलिए सिस्टम में उत्कृष्ट वातन सुनिश्चित करना आवश्यक है।

पंगासियस: यह मछली भी तेजी से बढ़ती है और भारतीय बाजारों में मछली पालन के लिए उपयुक्त है। इसे कम रखरखाव की आवश्यकता होती है। यह 18-32 डिग्री सेन्टीग्रेड और उदासीन पीएच के लिए अनुकूल है एवं तेजी से बढ़ता है और विभिन्न जल स्थितियों को सहन कर सकता है जिससे यह एक्वापोनिक्स के लिए उपयुक्त है और पौधों की वृद्धि को प्रभावी ढंग से समर्थन देता है।

चन्ना (स्नेकहेड मछली): उच्च मूल्य वाली मछली, जो प्रीमियम बाजारों में माँग रखती है। यह 25-30 डिग्री सेन्टीग्रेड के बीच गर्म पानी को पसंद करती है और इसे अपनी मांसाहारी प्रकृति के कारण उच्च-प्रोटीन आहार की आवश्यकता होती है। यद्यपि, इसकी परभक्षण (कैनिबलिज्म) प्रवृत्ति चुनौतियाँ पैदा कर सकती है। परभक्षण प्रवृत्ति से निपटने के लिए इसे निश्चित समय अंतराल पर चारा खाने के लिए अभ्यस्त करें और निश्चित किए गए समय अंतराल पर चारा नियमित रूप से अवश्य दें।

मछली स्टॉकिंग घनत्व: एक्वापोनिक्स प्रणाली में मछलियों का स्टॉकिंग घनत्व निम्न (1-5 किग्रा. प्रति घन मीटर) अथवा उच्च (10-20 किग्रा. प्रति घन मीटर) हो सकता है, जो मछलियों के स्वास्थ्य और पानी की गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए आवश्यक है। निम्न स्टॉकिंग घनत्व का मुख्य लाभ यह है कि ऐसी प्रणालियों में मछलियाँ खुले और कम भीड़ वाले वातावरण में रहती हैं, जिससे उनका तनाव भी कम होता है।

मछली पालन के लिए महत्वपूर्ण प्रबंधन पक्ष

एक्वापोनिक्स में मछलियों के स्वास्थ्य और प्रणाली की सफलता के लिए निम्नलिखित कारकों का सावधानीपूर्वक प्रबंधन आवश्यक है:

स्वच्छता और उपचार: नई मछलियों को प्रणाली में सम्मिलित करने से पहले पोटैशियम परमैंगनेट (5 मिग्रा. प्रति लीटर) से उपचारित करना आवश्यक है ताकि रोगजनकों का प्रवेश रोका जा सके। यह प्रक्रिया मछलियों को स्वस्थ रखने और प्रणाली की स्वच्छता सुनिश्चित करने में मदद करती है।

उचित अनुकूलन: मछलियों को प्रणाली में डालने से पहले उनके वातावरण (जल का तापमान, पीएच, आदि) के साथ धीरे-धीरे अनुकूलन कराना आवश्यक है ताकि तनाव और मृत्यु दर कम हो। अनुकूलन हेतु एस्कोर्बिक अम्ल का प्रयोग लाभकारी माना गया है क्योंकि यह तनाव कम करने में सहायता करता है।

आहार प्रबंधन: मछलियों को उनके शरीर के वजन का 3-5 प्रतिशत आहार प्रतिदिन देना चाहिए। उच्च गुणवत्ता वाला, संतुलित आहार मछलियों की वृद्धि और अपशिष्ट उत्पादन को अनुकूलित करता है, जो पौधों के लिए पोषक तत्वों का स्रोत है। 43 प्रतिशत प्रोटीनयुक्त चारा चन्ना मछ्ली के अच्छा माना गया है। प्रारंभ में, सभी मछलियों को उनके शरीर के वजन का 5 प्रतिशत आहार प्रतिदिन देना चाहिए। जैसे-जैसे मछलियाँ वयस्क होती हैं, इस दर को धीरे-धीरे 3 प्रतिशत तक कम करना चाहिए। यह समायोजन छोटे अंतरालों में थोड़ा-थोड़ा चारा देकर किया जाता है, ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि मछलियाँ पूरा आहार खा रही हैं या नहीं। इस आधार पर आहार की आवश्यकता की गणना की जाती है जिससे अपशिष्ट उत्पादन संतुलित रहता है और पौधों की वृद्धि के लिए पर्याप्त पोषक तत्व उपलब्ध होते हैं। मछलियों को दिन में

2–3 बार 30 मिनट तक भोजन करने देना चाहिए और फिर बचा हुआ आहार हटा देना चाहिए। अधिक भोजन देने से टैंकों में अपशिष्ट जमा हो जाता है जिससे ऑक्सीजन की कमी, बीमारियाँ और पौधों व मछलियों पर दबाव उत्पन्न होता है। खासकर बिना फिल्टर वाले सिस्टम में जल की गुणवत्ता की निगरानी ज़रूरी है; यदि अमोनिया या नाइट्राइट अधिक हों तो आहार घटा दें।

परभक्षण (कैनिबलिज्म) नियंत्रणः चन्ना प्रजाति में परभक्षण की प्रवृत्ति होती है, जहाँ मछलियाँ एक-दूसरे को खा सकती हैं। इसे नियंत्रित करने के लिए मछलियों को समान आकार में रखना, पर्याप्त आहार उचित समयान्तराल पर देना और स्टॉकिंग घनत्व को संतुलित करना आवश्यक है।

जल के भौतिक-रासायनिक गुणों का प्रबंधनः एक्वापोनिक्स सिस्टम में इष्टतम स्थिति बनाए रखने के लिए तापमान 25-32 डिग्री सेटीग्रेड के बीच होना चाहिए, जो मछलियों और पौधों दोनों के लिए अनुकूल है। अमोनिया का स्तर 1 पी.पी.एम. से कम रखना जरूरी है, क्योंकि उच्च स्तर मछलियों के लिए विषाक्त हो सकता है। नाइट्रेट का स्तर 150 पी.पी.एम. से कम होना चाहिए, जो पौधों के लिए पोषक तत्व प्रदान करता है, लेकिन अधिक होने पर हानिकारक हो सकता है। पी.एच. मान 7-8 के बीच संतुलित रखा जाना चाहिए, जो मछलियों और पौधों दोनों के लिए उपयुक्त है। घुलित ऑक्सीजन 5 पी.पी.एम. से अधिक होनी चाहिए, ताकि मछलियों की श्वसन आवश्यकताएँ पूरी हों। इसी प्रकार विद्युत चालकता 1500 माइक्रोसीमेंस/वर्ग सेमी. से कम रखनी चाहिए। इन मापदंडों को नियमित रूप से निगरानी करने और समायोजित करने के लिए उचित उपकरण (मल्टी-पैरामीटर्स प्रोब) और तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता होती है।

एक्वापोनिक्स में मछलियों की संभावित व्याधियाँ

एक्वापोनिक्स प्रणाली में मछलियों के स्वास्थ्य को रोग, परजीवी, कवक और जीवाणु जैसी समस्याएँ प्रभावित कर सकती हैं, जो टैंक में तेजी से फैलकर मछलियों पर बुरा प्रभाव डाल सकती हैं। नई मछलियाँ या ताजा पानी डालने पर रोग या तनाव की संभावना बढ़ जाती है, क्योंकि नई मछलियाँ पहले से ही रोगग्रसित हो सकती हैं। अतः बचाव ही रोक-थाम का सबसे अच्छा उपाय है और इसके लिए मछलियों की नियमित जाँच आवश्यक है। बाहरी लक्षणों में त्वचा, पंखों या स्केल्स पर अल्सर, रंगहीन धब्बे, सफेद या काले धब्बे, पंखों का सड़ना, पंखों पर विकृति, मुड़ी रीढ़, विकृत पंजे, सूजा हुआ रूप, रुई जैसे घाव या उभरी हुई आँखें (एक्सोफ्थाल्मिया) सम्मिलित हैं। व्यवहार में बदलाव जैसे- सुस्ती, भोजन के प्रति अनिच्छा, खाने की आदतों या तैरने के तरीके में बदलाव, पानी में असामान्य स्थिति (सिर या पूंछ नीचे), उछाल बनाए रखने में कठिनाई या सतह पर हाँफना भी स्वास्थ्य समस्याओं के संकेत हैं। फूला हुआ दिखना या उठे हुए शल्क (स्केल्स) भी चिंता का विषय हैं। ई.यू.एस., एरोमोनास संक्रमण, कॉलम्नारिस रोग/कॉटन वूल रोग/ माउथ फंगस, मीनपंख गलन (फिन रॉट) एक्वापोनिक्स के कुछ प्रमुख रोग हैं। रोगों के प्रसार की रोक-थाम के लिए नई मछलियों की जाँच, पानी की गुणवत्ता बनाए रखना, उपकरणों और भोजन की स्वच्छता सुनिश्चित करना एवं मछलियों की नियमित निगरानी आवश्यक है ताकि प्रारम्भिक लक्षणों का पता लगाकर संभावित हानि से बचा जा सके।

एक्वापोनिक्स में पत्तेदार सब्जी उत्पादन की प्रक्रिया

मछली टैंक में मछलियों का पालन और अपशिष्ट उत्पादनः एक्वापोनिक्स प्रणाली का आधार मछली टैंक है, जहाँ नियंत्रित वातावरण में मछलियों (जैसे-तिलापिया, चन्ना इत्यादि) का पालन किया जाता है। मछलियाँ भोजन करती हैं और इस प्रक्रिया में मल, मूत्र और अन्य अपशिष्ट के रूप में अमोनिया युक्त अपशिष्ट उत्पन्न करती हैं। यह अपशिष्ट एक्वापोनिक्स प्रणाली का प्राथमिक पोषण स्रोत है। अमोनिया, जो मछलियों के लिए विषैला हो सकता है, एक्वापोनिक्स में पौधों के लिए पोषक तत्वों का स्रोत बन जाता है।

जैव निस्पंदन (बायोफिल्ट्रेशन) द्वारा अपशिष्ट का पोषक तत्वों में रूपांतरणः मछलियों द्वारा उत्सर्जित अमोनिया युक्त पानी को बायोफिल्टर (जैविक निस्पंदन इकाई) में भेजा जाता है। यहाँ लाभकारी जीवाणु, जैसे- नाइट्रोसोमोनास और नाइट्रोबैक्टर, सक्रिय होते हैं। नाइट्रोसोमोनास जीवाणु अमोनिया को नाइट्राइट्स में परिवर्तित करते हैं जबकि नाइट्रोबैक्टर जीवाणु नाइट्राइट्स को नाइट्रेट्स में बदल देते हैं, जो पौधों के लिए एक महत्वपूर्ण पोषक तत्व है। यह नाइट्रिफिकेशन प्रक्रिया विषैले अमोनिया को पौधों के लिए उपयोगी रूप में बदल देती है और मछलियों के लिए पानी को सुरक्षित बनाए रखती है। परंतु ध्यान देने योग्य तथ्य ये हैं कि बायोफिल्टर में पर्याप्त सतह क्षेत्र हो ताकि जीवाणु की कॉलोनी विकसित हो सके, ऑक्सीजन की उपलब्धता बनी रहे क्योंकि नाइट्रिफिकेशन प्रक्रिया सतत चलती रहे। इस प्रक्रिया को पूर्ण होने में कुछ सप्ताह लग सकते हैं, जब तक जीवाणुओं की कॉलोनी पूरी तरह स्थापित नहीं हो जाती।

पोषक तत्वों के अवशोषण और जल शुद्धिकरण द्वारा पौधों की वृद्धिः जैव निस्पंदन से नाइट्रेट्स युक्त पानी पौधों की जड़ों तक पहुँचता है, जो हाइड्रोपोनिक बेड्स (जैसे-ग्रो बेड्स, फ्लोटिंग राफ्ट्स, या न्यूट्रिएंट फिल्म टेक्निक) में उगाए जा रहे हैं। पौधे (जैसे-पालक, सलाद पत्ता, बेसिल, चौलाई या अन्य पत्तेदार सब्जियाँ) इस पानी से नाइट्रेट्स और अन्य पोषक तत्वों (जैसे-पोटैशियम, फॉस्फोरस) को अवशोषित करते हैं। पौधे न केवल इन पोषक तत्वों का उपयोग करके तेजी से बढ़ते हैं, अपितु पानी को शुद्ध भी करते हैं, क्योंकि वे नाइट्रेट्स और अन्य अपशिष्ट को हटा देते हैं।

जल पुनर्चक्रण की सतत और आत्मनिर्भर प्रणालीः पौधों द्वारा शुद्ध किया गया पानी पुनः मछली टैंक में वापस भेजा जाता है। यह पानी अब मछलियों के लिए सुरक्षित होता है, क्योंकि इसमें अमोनिया और नाइट्राइट्स की मात्रा कम हो चुकी होती है। यह चक्रीय प्रक्रिया पानी की बचत करती है (पारंपरिक खेती की तुलना में 90प्रतिशत तक कम पानी की आवश्यकता) और एक आत्मनिर्भर प्रणाली बनाती है, जहाँ मछलियाँ और पौधे एक-दूसरे के लिए लाभकारी होते हैं। ध्यान रहे कि पानी के प्रवाह को संतुलित करना आवश्यक है ताकि मछलियों और पौधों दोनों को पर्याप्त पोषण और ऑक्सीजन मिले, समय-समय पर पानी की गुणवत्ता (पीएच, नाइट्रेट्स, ऑक्सीजन) की जाँच आवश्यक है व यदि आवश्यक हो, तो अतिरिक्त पोषक तत्व (जैसे-लौह तत्व) को प्रणाली में पूरक के रूप में दिया जा सकता है।

चुनौतियाँ और समाधानः एक्वापोनिक्स प्रणाली स्थापित करने और संचालित करने में कई चुनौतियाँ आती हैं, लेकिन उनके समाधान भी उपलब्ध हैं। इसकी प्रारंभिक लागत अधिक हो सकती है, जिसे छोटे स्तर पर प्रारम्भ करके और धीरे-धीरे विस्तार करके कम किया जा सकता है। प्रणाली को संतुलित रखने के लिए तकनीकी ज्ञान आवश्यक है, जिसके लिए प्रशिक्षण लेना और विशेषज्ञों से सलाह लेना उपयोगी हो सकता है। मछलियों और पौधों में रोग फैलने की समस्या से बचने के लिए नियमित निगरानी और जैविक उपचारों का उपयोग किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, उपभोक्ताओं और किसानों में एक्वापोनिक्स के लाभों के बारे में जागरूकता की कमी और पंप व वायु संचरण के लिए बिजली की निर्भरता एक चुनौती है। इस समस्या से निपटने के लिए साधारण डिज़ाइन, जैसे बैरल एक्वापोनिक्स, से शुरुआत की जा सकती है। अनुसंधान संस्थानों और गैर-सरकारी संगठनों द्वारा प्रशिक्षण कार्यक्रम, प्रदर्शनियाँ और सेमिनार आयोजित कर स्थानीय स्तर पर जागरूकता बढ़ाई जा सकती है। साथ ही, सौर ऊर्जा से संचालित पंपों का उपयोग करके ऊर्जा लागत को कम किया जा सकता है।

नर्सरी प्रबंधन

नर्सरी प्रबंधन एक्वापोनिक्स प्रणालियों का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, क्योंकि यह पौधों के स्वस्थ विकास की नींव रखता है। नर्सरी प्रबंधन में पौधों को अंकुरण से लेकर परिपक्वता तक ले जाने की प्रक्रिया सम्मिलित होती है, जिसके लिए सही सब्सट्रेट (वृद्धि माध्यम), पोषक तत्व, और तकनीकी प्रबंधन की आवश्यकता होती है। यहाँ इस प्रक्रिया का विस्तृत विवरण हैः

1. निष्क्रिय सब्सट्रेट का उपयोग

एक्वापोनिक्स में पौधों को मृदा (मिट्टी) के बिना उगाया जाता है। इसके लिए निष्क्रिय सब्सट्रेट का उपयोग किया जाता है, जो पौधों को भौतिक समर्थन प्रदान करता है और पोषक तत्वों को जड़ों तक पहुँचाने में सहायता करता है। सलाद पत्ते जैसे पत्तेदार पौधों के लिए जालीदार पॉट्स (नेट पॉट्स) का उपयोग किया जाता है, जिनमें कोकोपीट या रॉकवूल भरा जाता है। ये पॉट्स बाद में एनएफटी या राफ्ट सिस्टम में आसानी से स्थानांतरित हो जाते हैं।

2. अंकुरण प्रक्रिया

छोटे स्तर पर सैकड़ों पौधों को अंकुरित करने के लिए प्लास्टिक ट्रे का उपयोग किया जाता है। इन ट्रे में कोकोपीट या अन्य सब्सट्रेट भरा जाता है, और बीजों को सावधानीपूर्वक बोया जाता है। अंकुरण के दौरान, ट्रे को नियमित रूप से पोषक तत्वों से युक्त घोल से सिक्त किया जाता है। यह घोल पौधों के लिए आवश्यक पोषक तत्व (नाइट्रोजन, फॉस्फोरस,

एक्वापोनिक्स हेतु सामान्य सब्सट्रेट

- **कोकोपीटः** यह सबसे लोकप्रिय सब्सट्रेट है, क्योंकि यह हल्का, पानी धारण करने की अच्छी क्षमता वाला, और पर्यावरण-अनुकूल होता है।
- **रॉकवूलः** यह विशेष रूप से हाइड्रोपोनिक्स में उपयोग किया जाता है, क्योंकि यह जड़ों को अच्छा समर्थन और वायु संचरण प्रदान करता है।
- **वर्मीक्यूलाइट और पर्लाइटः** ये पानी और पोषक तत्वों को बनाए रखने में मदद करते हैं।
- **क्ले पेलेट्स (हाइड्रोटन):** ये हल्के और पुनः उपयोग योग्य होते हैं, जो जड़ों को ऑक्सीजन प्रदान करते हैं।

पोटैशियम, आदि) प्रदान करता है। अतिरिक्त घोल को निकासित (ड्रेन) किया जाता है ताकि जड़ों में जलभराव न हो। अंकुरण के लिए उपयुक्त तापमान (20-25 डिग्री सेन्टीग्रेड), आर्द्रता (60-80प्रतिशत), और प्रकाश (प्राकृतिक या कृत्रिम, जैसे एलईडी ग्रो लाइट्स) का ध्यान रखा जाता है। जब पौधे पर्याप्त रूप से विकसित हो जाते हैं (सामान्यतया 2-4 सप्ताह में), उन्हें उनकी अंतिम प्रणाली (जैसे- एनएफटी, मीडियम बेड या राफ्ट) में स्थानांतरित किया जाता है।

3. नर्सरी प्रबंधन के लिए महत्वपूर्ण बिंदु

स्वच्छता: बीज, सब्सट्रेट और ट्रे को रोगमुक्त रखने के लिए स्वच्छता का विशेष ध्यान रखा जाता है।

पानी की गुणवत्ता: एक्वापोनिक्स में मछलियों से प्राप्त नाइट्रेट्स युक्त पानी का उपयोग होता है। हाइड्रोपोनिक्स में, पोषक घोल की संरचना को नियमित रूप से जाँचा जाता है (पीएच 5.5-6.5 और वैद्युत चालकता 1.5-2.5 मिली. सीमेंस प्रति सेमी के मध्य)।

निगरानी: अंकुरण दर, पौधों की वृद्धि और रोगों की नियमित जाँच आवश्यक है।

प्रकाश और वायु संचरण: पौधों को स्वस्थ रखने के लिए पर्याप्त प्रकाश और वायु संचरण सुनिश्चित करना आवश्यक है।

भारतीय संदर्भ में, एक्वापोनिक्स छोटे किसानों अथवा कृषि-उद्यमियों के लिए एक महत्वपूर्ण तकनीक हो सकती है, जो जल और भूमि की सीमित उपलब्धता के बावजूद उच्च उत्पादकता प्राप्त करना चाहते हैं। यह प्रणाली न केवल पोषण सुरक्षा को मजबूत करती है, बल्कि आर्थिक रूप से भी किसानों के लिए लाभकारी सिद्ध हो सकती है। भारत में एक्वापोनिक्स एक उभरती हुई तकनीक है, जो जल और भूमि की कमी, शहरीकरण, और जैविक खेती की बढ़ती माँग को देखते हुए विशेष रूप से प्रासंगिक है। भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी; भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली; भारतीय जल प्रबंधन संस्थान, भुवनेश्वर और केंद्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई जैसे संस्थान एक्वापोनिक्स पर शोध कर रहे हैं। ये संस्थान भारतीय जलवायु की परिस्थितियों के अनुकूल तकनीकों का विकास कर रहे हैं। सरकार द्वारा सब्सिडी, प्रशिक्षण और जागरूकता अभियानों के माध्यम से एक्वापोनिक्स को बढ़ावा दिया जा सकता है। उदाहरण के लिए, राष्ट्रीय बागवानी मिशन और मत्स्य पालन योजनाएँ इस तकनीक को अपनाने में सहायता प्रदान कर सकती हैं। तकनीकी सहायता के लिए, कृषि विश्वविद्यालयों और अनुसंधान केंद्रों के साथ सहयोग बढ़ाया जा सकता है। अतः सरकार, अनुसंधान संस्थानों और कृषकों के समन्वित प्रयासों से एक्वापोनिक्स को भारत में बागवानी और मत्स्य पालन के भविष्य के रूप में विकसित किया जा सकता है।

एक्वापोनिक्स द्वारा पालक उत्पादन

रसायन-मुक्त पाक-चोई का एक्वापोनिक्स में उत्पादन

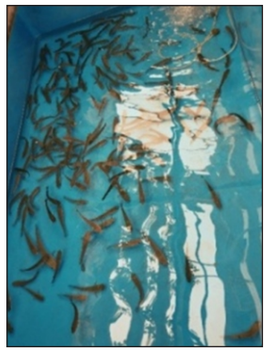

चन्ना मछली आधारित एक्वापोनिक्स प्रणाली

> यदि आप इस बात की चिंता न करें कि आपके काम का श्रेय किसे मिलने वाला है तो आप आश्चर्यजनक कार्य कर सकते हैं
>
> **– हैरी एस. ट्रूमेन**

काशी अनमोल : मिर्च की किस्म का आर्थिक मूल्यांकन

गोविन्द पाल, *अभिषेक कुमार पाल एवं कुलदीप श्रीवास्तव

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी *यू.वि.वि., प्रयागराज

प्रमुख व्यावसायिक सब्जी फसलों में मिर्च एक महत्वपूर्ण सब्जी है जो रोजगार के अवसर पैदा करने और जीवन स्तर में सुधार के साथ ग्रामीण क्षेत्रों में लागों की आय में वृद्धि करती है। भारत में सामान्यतः सब्जी और विशेष रूप से मिर्च छोटे और सीमांत किसानों द्वारा उगाई जाती है जिनके लिए यह आय का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। भारतीय भोजन में मिर्च का महत्वपूर्ण स्थान है और इसका सेवन प्रतिदिन किसी न किसी रूप में किया जाता है। दुनिया भर में मिर्च की 400 से भी अधिक किस्में पाई जाती है। उपयुक्त जलवायु, मिट्टी, सिचाई सुविधा, किसानों के कौशल और अनुभव के कारण भारत मिर्च उत्पादन के लिए बहुत प्रसिद्ध है एवं देश में इसकी खेती की अपार संभावनाएं हैं। मिर्च में उच्च मात्रा में विटामिन 'सी' और अन्य विटामिन जैसे विटामिन 'ए', 'बी6', 'के' और खनिज जैसे- कैल्शियम, मैग्नीशियम, फोलेट, पोटैशियम, थायमिन, आयरन, कॉपर आदि पाये जाते हैं। मिर्च में कैप्साइसिन मुख्य बायोएक्टिव यौगिक है जो इसको तीखा स्वाद प्रदान करता है। इसमें उपलब्ध आवश्यक सूक्ष्म और मैक्रोन्यूट्रिएंट्स पोषण की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। विश्व एवं खाद्य संगठन के अनुसार विश्व में वर्ष 2020-23 के दौरान कुल 20.65 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में हरी मिर्च की खेती की गयी जिससे कुल 383.10 लाख टन मिर्च का उत्पादन हुआ। वैश्विक स्तर पर मिर्च की औसत उत्पादकता 18.55 टन/हेक्टेयर थी। वैश्विक स्तर पर चीन मिर्च उत्पादन में प्रथम स्थान पर है व कुल वैश्विक उत्पादन का लगभग 46.15 प्रतिशत उत्पादन करता है। पिछले दस वर्षों (2013-14 से 2022-23) के दौरान भारत में मिर्च के अन्तर्गत क्षेत्र, उत्पादन एवं उत्पादकता को सारिणी-1 में दर्शाया गया है। वर्ष 2013-14 के दौरान देश में मिर्च के अन्तर्गत कुल क्षेत्रफल 140 हजार हेक्टेयर, कुल उत्पादन 1687 हजार टन एवं औसत उत्पादकता 12.05 टन प्रति हेक्टेयर था जो वर्ष 2022-23 के दौरान मिर्च के अन्तर्गत कुल क्षेत्रफल 413 हजार हेक्टेयर, कुल उत्पादन 4496 हजार टन एवं औसत उत्पादकता 10.89 टन प्रति हेक्टेयर हो गयी।

वर्ष 2022-23 के दौरान भारत में मिर्च के प्रमुख उत्पादक राज्यों व उनके योगदान को सारिणी-2 में दर्शाया गया है। सारिणी से स्पष्ट है कि वर्ष 2022-23 के दौरान मध्य प्रदेश मिर्च का सबसे बड़ा उत्पादक राज्य था व देश के कुल मिर्च उत्पादन में 22.01 प्रतिशत योगदान था। मिर्च के अन्य प्रमुख उत्पादक राज्यों में कर्नाटक (13.69 प्रतिशत), बिहार (10.70 प्रतिशत), आन्ध्र प्रदेश (10.01 प्रतिशत) एवं तमिलनाडु (9.09 प्रतिशत) हैं।

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी के द्वारा वर्ष 2006 में मिर्च की काशी अनमोल किस्म विकसित की गयी। इस किस्म को पंजाब, उत्तर प्रदेश एवं

सारिणी-1: भारत में मिर्च के अन्तर्गत क्षेत्रफल, उत्पादन एवं उत्पादकता

क्र.सं.	वर्ष	क्षेत्रफल (000हे.)	उत्पादन (000टन)	उत्पादकता (टन/हें.)
1.	2013-14	140	1687	12.05
2.	2014-15	181	1998	11.04
3.	2015-16	292	2955	10.12
4.	2016-17	316	3634	11.50
5.	2017-18	309	3592	11.62
6.	2018-19	377	3783	10.03
7.	2019-20	387	4119	10.64
8.	2020-21	411	4363	10.62
9.	2021-22	427	4700	11.01
10.	2022-23	413	4496	10.89

सारिणी-2: भारत में वर्ष 2022-23 के दौरान मिर्च के प्रमुख उत्पादक राज्य व उनका योगदान

क्र.सं.	राज्य	उत्पादन (000टन)	कुल उत्पादन में योगदान (प्रतिशत)	क्र.सं.	राज्य	उत्पादन (000टन)	कुल उत्पादन में योगदान (प्रतिशत)
1.	मध्य प्रदेश	989	22.01	6.	महाराष्ट्र	351	7.80
2.	कर्नाटक	615	13.69	7.	झारखण्ड	267	5.93
3.	बिहार	481	10.70	8.	पं. बंगाल	261	5.81
4.	आन्ध्र प्रदेश	450	10.01	9.	छत्तीसगढ़	239	5.31
5.	तमिलनाडु	409	9.09	10.	अन्य राज्य	434	9.65

झारखंड राज्यों में खेती के लिए अनुशंसित किया गया था। इसका पौधा झाड़ीनुमा, छोटा एवं फल आकर्षक हरे रंग का होता है। इस किस्म की पहली तुड़ाई रोपाई के 55 दिनों बाद शुरू होती है एवं फसल की 120 दिन की अवधि में लगभग 200 कुन्तल उपज प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती है। रबी मौसम में गेहूँ लेने वाले किसानो के लिए यह किस्म बहुत उपयुक्त है। इन सभी गुणात्मक और उपज लाभों के साथ संस्थान द्वारा यह किस्म जारी की गयी जिसे पूरे देश में बड़ी संख्या में किसानों द्वारा व्यापक रुप से अपनाया गया एवं इसकी खेती की गयी। अतः उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए मिर्च की काशी अनमोल के आर्थिक प्रभाव का मूल्यांकन किया गया।

संस्थान से प्रजनक बीज एवं सत्यापित बीज की बिक्री के आधार पर मिर्च की काशी अनमोल किस्म के तहत क्षेत्र की गणना की गयी। वर्ष 2005-06 से 2021-22 के दौरान इस किस्म के तहत कुल क्षेत्रफल 163696 हे. था जिसका प्रसार 26 राज्यों के 165 जिलों में था। देश में कुल मिर्च एवं काशी अनमोल किस्म के अन्तर्गत क्षेत्रफल को सारिणी-3 में दर्शाया गया है। देश में मिर्च के अन्तर्गत औसत वार्षिक क्षेत्रफल लगभग 391667 हेक्टेयर था जबकि काशी अनमोल किस्म के अन्तर्गत औसत वार्षिक क्षेत्रफल लगभग 9629.17 हेक्टेयर था। यह देश के कुल मिर्च क्षेत्रफल का लगभग 2.46 प्रतिशत था।

आर्थिक अधिशेष मॉडल के आधार पर मिर्च के काशी अनमोल किस्म के आर्थिक प्रभाव मूल्यांकन को सारिणी-4 में दर्शाया गया है। सारिणी से स्पष्ट है कि काशी अनमोल किस्म से कुल आर्थिक अधिशेष रु. 30.88 करोड़ का था जिसमें उत्पादक अधिशेष रु. 11.94 करोड़ एवं उपभोक्ता अधिशेष रु. 18.94 करोड़ था। कुल आर्थिक अधिशेष में उत्पादक एवं उपभोक्ता अधिशेष का अनुपात 39.61 था। किस्म के विकास में लाभ-लागत अनुपात 81.22 था जबकि प्राप्ति की

सारिणी-3: देश में मिर्च के अन्तर्गत औसत क्षेत्रफल

क्र.सं.	विवरण	क्षेत्रफल
1.	देश में मिर्च के अन्तर्गत औसत वार्षिक क्षेत्रफल (त्रिवार्षिक समापन 2020-21)	391667 हे.
2.	देश में काशी अनमोल किस्म के अन्तर्गत औसत वार्षिक क्षेत्रफल	9629.17 हे.
3.	देश के कुल मिर्च क्षेत्रफल में काशी अनमोल किस्म का योगदान	2.46 प्रतिशत

सारिणी-4: मिर्च के काशी अनमोल किस्म का आर्थिक प्रभाव का मूल्यांकन

क्र.सं.	लागत-लाभ विवरण	(रु. करोड़)
1.	शुद्ध वर्तमान मूल्य	30.50
2.	शुद्ध वर्तमान लाभ	30.88
3.	शुद्ध वर्तमान लागत	0.38
4.	प्राप्ति की आन्तरिक दर	79 प्रतिशत
5.	लाभ-लागत अनुपात	81.22
	आर्थिक अधिशेष का वितरण	(रु. करोड़)
1.	उत्पादन अधिशेष	11.94
2.	उपभोक्ता अधिशेष	18.94
3.	कुल आर्थिक अधिशेष	30.88

सारिणी-5: मिर्च की खेती में लागत एवं लाभ (रु./हेक्टेयर)

क्र.सं.	विवरण	लागत/आय (रु.)	क्र.सं.	विवरण	लागत/आय (रु.)
1.	चल लागत	185818	5.	शुद्ध आय	277971
2.	अचल लागत	35711	6.	लाभ-लागत अनुपात	2.26
3.	सकल लागत	221529	7.	उत्पादन लागत (रू. प्रति किग्रा.)	11.98
4.	सकल आय	499500			

आन्तरिक दर 79 प्रतिशत थी।

मिर्च की काशी अनमोल किस्म की खेती में कुल लागत एवं लाभ की गणना के लिए वाराणसी एवं मिर्जापुर जिले के किसानों से प्राथमिक आकडों एवं सूचनाओं को एकत्रित किया गया जिसके सारांश को सारिणी-5 में दर्शाया गया है। मिर्च की काशी अनमोल किस्म की खेती में सकल लागत रु. 221529.00 प्रति हेक्टेयर थी जिसमें चल एवं अचल लागत का अनुपात लगभग 84:16 था। काशी अनमोल की खेती से शुद्ध आय रु. 277971 प्रति हेक्टेयर थी व लाभ-लागत अनुपात 2.26 था। मिर्च के काशी अनमोल किस्म की उत्पादन लागत रु. 11.98 प्रति किलो थी।

मिर्च की काशी अनमोल किस्म की खेती से किसानों की आय में वृद्धि के साथ-साथ रोजगार में भी वृद्धि हुई। इस किस्म के अंगीकरण से उत्पादक एवं उपभोक्ता दोनो को लाभ मिला है। काशी अनमोल किस्म के आर्थिक प्रभाव मूल्यांकन से यह भी स्पष्ट होता है कि काशी अनमोल किस्म के विकास के लिए किया गया निवेश अत्यधिक लाभकारी था साथ ही वह नीति निर्माताओं को अनुसंधान निवेश के समर्थन का प्रमाण प्रदान करता है।

यह चरित्र था जिसने हमें बिस्तर से बाहर निकाला, संकल्प जिसने कर्म करने को धकेला और अनुशासन जिसने हमें आगे चलने में समर्थ किया।

-जिग जिगलर

कृषि में रोबोटिक्स

शुभम कुमार तिवारी, शशि शेखर, नीतीश सिंह, *अभिषेक सिंह, शरद शर्मा, डी. आर. भारद्वाज एवं हरे कृष्ण

भा.कृ.अनु.प.-भा.स.अनु.सं., वाराणसी, *स्नात. महा., गाजीपुर

प्रभावी ढंग से कृषि करने एवं समय बचाने के लिये आज आधुनिक तकनीकों की आवश्यकता है। इस कड़ी में कृषि के समुचित प्रबंधन और उत्पादन में रोबोटिक्स का महत्व लगातार बढ़ता जा रहा है। प्राथमिक उद्देश्यों के लिए कृषि रोबोटों का अध्ययन और निर्माण किया गया है, जिसमें कटाई, रासायनिक छिड़काव, फल तुड़ाई और फसल निगरानी शामिल हैं। मानवरहित संवेदन और मशीनरी प्रणालियों के उपयोग के कारण, इस तरह के रोबोट कई स्थितियों में मानव श्रम का स्थान ले रहे हैं। यह कहा जा सकता है कि रोबोट बहु-कार्य संपादन में सक्षम, संचालन में विश्वसनीय हैं और असामान्य परिचालन परिस्थितियों के प्रति अनुकूल हैं। कृषि रोबोटिक प्रणालियों पर अध्ययन के लिए कई सटीक कृषि उपकरणों को एक मॉडल संरचना डिज़ाइन के साथ जोड़ा गया था। सी.आर.ओ.पी.एस., आई.एस.ए.ए.सी.-2 और मिशिगन हॉर्टीबॉट जैसे नामों वाले कुछ प्रोटोटाइप, ऑस्ट्रेलिया का एगबॉट, फ़िनलैंड का डेमेटर, भारत का एग्रीबॉट और कई अन्य यूरोपीय संघ द्वारा बनाए गए थे। कृषि रोबोटों के निर्माण में विज़न, जी.पी.एस., लेज़र और सेंसर-आधारित नेविगेशन नियंत्रण प्रणालियों सहित कई स्थानीयकरण विधियों का उपयोग किया जाता है। कृषि में वर्तमान रुझान उपकरणों और प्रौद्योगिकी के उपयोग के माध्यम से उत्पादन बढ़ाने के लिए स्व-चालन की ओर है। स्वायत्त रोबोटिक्स पर अधिकांश शोध नियंत्रित वातावरण में किया गया है, जैसे-चेरी टमाटर, खीरे, मशरूम और अन्य फलों को रोबोट द्वारा तुड़ाई किया जाता है। हालाँकि, इन प्लेटफार्मों के विकास में दो कठिनाइयाँ है- एक इलेक्ट्रॉनिक वास्तुकला विकसित करना जो अनेक इलेक्ट्रॉनिक घटकों को एकीकृत कर सके और दूसरा एक कृषि वातावरण के लिए उपयुक्त भौतिक संरचना का निर्माण करना। एक इलेक्ट्रॉनिक वास्तुकला के लिए मज़बूत और भरोसेमंद, रख-रखाव में तेज़ व आसान, मॉड्यूलर और अनुकूलनीय होना ताकि भविष्य में विस्तार और नये उपकरणों के संयोजन के लिए अनुमति मिल सके। कृषि के क्षेत्र में, कई अलग-अलग प्रकार के रोबोट उपयोग में हैं और नई प्रौद्योगिकियाँ हमेशा विकसित हो रही हैं। इन सभी में से निम्नलिखित प्रकार के कृषि रोबोट लोकप्रिय हुए हैं:

- **आयरन ऑक्स लेट्यूस रोबोट:** यह रोबोट एक तरफ से दूसरी तरफ जाने के लिए एक आयताकार फ्रेम का उपयोग करता है और इसे ग्रीनहाउस में काम करने के लिए बनाया गया है। प्रत्येक पौधे को रोबोट द्वारा तीन आयामों में दर्शाया जाता है इसकी भुजा पर लगे एक स्टीरियो कैमरे का उपयोग करके, भुजा पर लगा ग्रिपर विशेष रूप से फलियों में फिट होने के लिए बनाया गया है।

- **एम.आई.टी. रोबोट गार्डनर:** मैसाचुसेट्स इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी के छात्रों ने एक मोबाइल रोबोट बनाया है जो मिट्टी की नमी के स्तर को नियंत्रित कर सकता है और पके फलों का चयन करता है। प्रत्येक पौधे में सेंसर का एक नेटवर्क होता है जो मिट्टी की नमी की निगरानी करता है और रोबोट को पानी लाने का संकेत देता है। रोबोट और प्लांट सेंसर के बीच वायरलेस संचार मौजूद रहता है।

- **हॉर्टीबॉट:** किसानों को खर-पतवारों से छुटकारा में मदद करने वाले उपकरण को हॉर्टीबॉट कहा जाता है। यह रोबोट 25 विभिन्न प्रकार की खर-पतवार की पहचान कर सकता है और पर्यावरण के अनुकूल उपाकरण की मदद से उन्हें हटाने का काम करता है।

- **एग्रीबॉट II :** यह एक रोबोट है जिससे किसानों को उर्वरकों, कीटनाशकों, शाकनाशियों और सिंचाई प्रणालियों के उपयोग के बारे में निर्णय लेने में सहायता के लिए बनाया गया है।

- **हैम्स्टर बॉट:** हैम्स्टर बॉट नामक यह स्वायत्त रोबोट फसलों को खतरे में डाले बिना उन पर घूमता है। इस रोबोट के अंदर मिट्टी के तापमान, संरचना, नमी और पौधों के स्वास्थ्य को मापने वाले कई सेंसर लगे हैं।
- **रोबोट:** रोबोट को कई तरह की परिस्थितियों में काम

करने के लिए बनाया गया है। तेजी से बढ़ रही फसल के कारण ऊँचाई पर लगे प्रतिबंधों को हटाना एक ऐसी गतिविधि है जिसमें मक्के की पंक्तियों के बीच घूमना शामिल है। मक्के में खाद डालने और जानकारी इकट्ठा करने के लिए रोबोट समूहों में काम कर सकता है।

- **स्व-चालित रोबोट ट्रैक्टरः**
यह स्व-चालित ट्रैक्टर उत्कृष्ट सटीकता के साथ कई तरह की गतिविधियाँ कर सकता है। असमान और अप्रत्याशित जमीन पर ट्रैक्टर की दिशा बदलने से एक बड़ी चुनौती का सामना करना पड़ता है। इन समस्याओं से छुटकारा के लिए न तो परिष्कृत कंप्यूटर और न ही सिर्फ़ सेंसर पर्याप्त हैं। यह रोबोट एक ऐसे प्रोग्राम का उपयोग करता है जो जमीन के अनुसार अपनी दिशा समायोजित कर सकता है।

- **छिड़काव रोबोटः** स्व-चालित छिड़काव के लिए डिजाइन किया गया एक अन्य ग्रीनहाउस उपकरण छिड़काव रोबोट है। यह रोबोट ग्रीनहाउस में 30 सेमी. चौड़ी पाइप रेल प्रणाली के माध्यम से चलता है। इसका उपयोग गुलाब, जरबेरा, एंथुरियम, एल्स्ट्रोएमरिया और आर्किड के साथ-साथ टमाटर, खीरा, मिर्च और बैंगन में भी किया जा सकता है।

- **ट्राकुरः** ट्राकुर (कोहरा) नामक एक रोबोट का उपयोग ग्रीनहाउस में कीटनाशकों का छिड़काव करने के लिए किया जाता है। यह रोबोट एक केबल का उपयोग करता है जो नेविगेशन के लिए एक विद्युत चुम्बकीय संकेत, एल्गोरिदम और जी.पी.एस. डेटा उत्पन्न करता है।

- **विन बॉटः** इस रोबोट में कई सेंसर होते हैं जो आकड़ें एकत्र कर सकते हैं और वाइन निर्माताओं को अंगूर के बाग की उपज निर्धारित करने में मदद कर सकते हैं। विनबॉट नामक यह रोबोट 3डी. डेटा और अंगूर के बाग की तस्वीरें एकत्र करने और उनका मूल्यांकन करने के लिए क्लाउड नेटवर्क का उपयोग करता है।

- **मधुमक्खी बॉटः** यह छोटा उड़ने वाला रोबोट परागण के लिए उपयोग किया जाता है और इसे मधुमक्खियों के मॉडल पर बनाया गया है।

- **नर्सरी बॉटः** नर्सरी बॉट सामान्यतः गमलों में लगे पौधों को स्व-चालित रूप से हिलाने का समाधान है। यह रोबोट पहियों, ग्रिपर आर्म्स, ट्रे और सेंसर का उपयोग करके पौधों को वांछित क्षेत्र में ले जाता है।

- **लेडीबर्डः** लेडीबर्ड के पास ऐसे तरीके और उपकरण हैं जिनसे यह अपने आप काम कर सकता है। रोबोट का उपयोग विभिन्न सब्जियों की निगरानी, मानचित्रण, वर्गीकरण और पता लगाने के लिए किया जाता है।

- **वाइन रोबोटः** यह रोबोट, जो केवल एक प्रोटोटाइप है, अत्याधुनिक सेंसर और कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग करके बेलों को नियंत्रित करता है। पानी की गुणवत्ता, उत्पादकता, सब्जियों की वृद्धि या अंगूर की मात्रा का आंकड़ा रोबोट द्वारा प्रदान किया जाता है।

- **प्रो-पैकिंग रोबोटः** फलों या सब्जियों के कार्टन इस रोबोट द्वारा भरा जायेगा। एक कैमरा जिसे छँटी हुई वस्तुओं के बीच अंतर करने के लिए कॉन्फ़िगर किया गया है यह मशीनरी का एक हिस्सा है। भविष्य में कृषि में रोबोटिक्स और स्व-चालन द्वारा खाद्य सुरक्षा को काफी हद तक बनाए रखा जाएगा। स्थापित प्रणाली द्वारा प्रदान की गई उन्नत तकनीक के कारण, किसान अब रोबोटिक्स उपकरणों के उपयोग की बदौलत कृषि कार्यों को जल्दी पूरा करने में सक्षम हैं।

चूँकि कृषि में रोबोटिक प्रणालियों का विकास आम तौर पर कार्यों को पूरा करने में मानव श्रम के व्यवहार की नकल करने पर केंद्रित है, इसलिए रोपण, निरीक्षण, छिड़काव और कटाई जैसे कार्य न्यूनतम प्रयास के साथ कुशलतापूर्वक किए जा रहे हैं। भविष्य में खाद्य सुरक्षा को बनाए रखने के लिए उच्च स्तर के कृषि उत्पादन के प्राथमिक लक्ष्य के साथ एक विश्वसनीय और प्रभावी कृषि रोबोटिक प्रणाली का निर्माण भविष्य में एक व्यवस्थित स्वायत्त कृषि रोबोटिक प्रणाली को डिज़ाइन करके पूरा किया जा सकता है।

बदलती जलवायु में सब्जी कीट प्रबंधन

सूरज सोनी, हर्षित गुप्ता एवं उमेश चंद्रा
आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

वर्तमान कीट अपनी सीमाओं को नये क्षेत्रों में विस्तारित करेंगे और विभिन्न प्रकार के नये कीट दिखाई देंगे। ये सभी जलवायु से होने वाले परिवर्तन, एकीकृत कीट प्रबंधन पर आधारित स्थायी कृषि कार्यक्रमों के लिए चुनौतियाँ और अवसर प्रस्तुत करते हैं। कीड़े ठंडे खून वाले जीव हैं। उनके शरीर का तापमान लगभग पर्यावरण के समान है। इसलिए तापमान संभवतः कीटों के व्यवहार, वितरण, विकास, आस्तित्व और प्रजनन को प्रभावित करने वाला सबसे महत्वपूर्ण पर्यावरणीय कारक है। कुछ शोधकर्ताओं का मानना है कि कीड़ों पर तापमान का प्रभाव काफी हद तक अन्य पर्यावरणीय कारकों के प्रभावों को प्रभावित करता है। अन्य शोधकर्ताओं ने पाया है कि वैश्विक जलवायु परिवर्तन के कारण कीटों पर नमी और कार्बन डाइऑक्साइड के प्रभाव संभावित रूप से महत्वपूर्ण हो सकते हैं। जलवायु परिवर्तन की घटनाओं में वृद्धि, नमी की स्थिति मे परिवर्तन, तापमान और कार्बन डाइऑक्साइड में वृद्धि के माध्यम से कृषि प्रणाली पर कीट दबाव बढ़ना अपेक्षित हैं।

- मौजूदा कीटों का नये क्षेत्रों में विस्तार और नए कीटों द्वारा आक्रमण।
- कीटों की विकास दर में वृद्धि जिसके कारण प्रति मौसम में अधिक कीट जीवन चक्र।
- कीटों और प्राकृतिक शत्रुओं के अस्थायी और भौगोलिक सिंक्रोनाइजेशन का विघटन जो प्रकोप के जोखिम को बढ़ाते हैं।
- विदेशी कीटों की प्रजातियों से नुकसान की संभावना में वृद्धि।
- गैर-रासायनिक तरीकों और जैविक नियंत्रण सहित वर्तमान कीट प्रबंधन के विकल्पों का कम होना।

प्रमुख घटक

- तापमान में वृद्धि (ग्लोबल वार्मिंग)
- वर्षा में अनियमितता
- नमी और आर्द्रता में बदलाव
- मौसमी चक्रों में गड़बड़ी
- कार्बन डाइऑक्साइड और ग्रीनहाउस गैसों का बढ़ना

सब्जी फसलों की कीटों के प्रति संवेदनशीलता: सब्जी फसलें अपनी कोमलता, पोषक तत्वों की अधिकता और बढ़ते मौसमों में निरंतर खेती के कारण कीटों के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होती हैं। यह संवेदनशीलता फसल की प्रजाति, उसकी वृद्धि अवस्था, मौसमी परिस्थितियों और खेत प्रबंधन पद्धतियों पर निर्भर करती है। नीचे सब्जी फसलों की कीटों के प्रति संवेदनशीलता को समझाने के लिए मुख्य बिंदु दिए गए हैं । पौधों की कोमल संरचना और पोषण मूल्य सब्जियों के पत्ते, फूल, फल और तने अधिक कोमल होते हैं जिससे चूषक कीट (जैसे-सफेद मक्खी, थ्रिप्स, एफिड) और चर्वण कीट (जैसे-तना छेदक, पत्ती लपेटक, फल छेदक) तेजी से इन पर आक्रमण करते हैं। उच्च नाइट्रोजन स्तर वाले पौधे कीटों को अधिक आकर्षित करते हैं।

तापमान का प्रभाव

जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप तापमान में वृद्धि कई जटिल तरीकों से कीटों की आबादी को प्रभावित कर सकती है। बढ़ा हुआ तापमान संभावित रूप से कीटों के अस्तित्व, उनके विकास, भौगोलिक सीमा और जनसंख्या के आकार को प्रभावित कर सकता है। तापमान कीटों के शरीर क्रिया विज्ञान और विकास को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित कर सकता है। यह अनुमान लगाया गया है कि 2 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान में वृद्धि के कारण कीटों के 1-5 अतिरिक्त जीवन चक्र हो सकते हैं। कीट और उनके प्राकृतिक शत्रु तापमान में बदलाव के लिए अलग तरह से प्रतिक्रिया कर सकते हैं। तापमान कुछ कीट प्रजातियों के लिंग अनुपात को बदल सकता है जैसे थ्रिप्स में संभावित रूप से प्रजनन दर का प्रभावित होना। कीट जो अपने जीवन के महत्वपूर्ण हिस्सों को मिट्टी में व्यतीत करते हैं, वे तापमान में बदलाव से धीरे-धीरे प्रभावित होते हैं, क्योंकि मिट्टी एक इन्सुलेट माध्यम प्रदान करती है। प्रति इकाई क्षेत्र में कीट प्रजातियों की विविधता उच्च अक्षांश और ऊँचाई के साथ घट जाती है जिसका अर्थ है कि तापमान बढ़ने से कीटों की प्रजातियों में शीतोष्ण जलवायु में अधिक वृद्धि हो सकती है। कुछ शोधकर्ताओं का निष्कर्ष है कि बढ़ते तापमान के साथ कीट प्रजातियों की विविधता और उनके खाने की तीव्रता ऐतिहासिक रूप से बढ़ गई है। जलवायु परिवर्तन से कीटों के भौगोलिक वितरण पर एक बड़ा प्रभाव पड़ेगा और कीटों के भौगोलिक वितरण का निर्धारण करने में

उच्च तापमान की तुलना में कम तापमान अक्सर महत्वपूर्ण होता है। तापमान बढ़ने से उच्च अक्षांशों पर भी कीट प्रजातियों में ओवरविंटर की अधिक क्षमता हो सकती है जिससे उनकी भौगोलिक सीमा बढ़ जाती है और अचानक कीटों का प्रकोप कुछ फसल प्रजातियों को लगभग मिटा सकता है। बदलती जलवायु परिस्थितियों में फसलों के वितरण में स्थानिक बदलाव भी एक भौगोलिक क्षेत्र में कीट के वितरण को प्रभावित कर सकते हैं। कुछ पौधों की प्रजातियाँ जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को सहन करने में असमर्थ हो सकती हैं जिसके परिणामस्वरूप प्रजातियाँ विलुप्त हो सकती हैं। जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप कीटों की अधिकता बढ़ेगी। कई कीड़े जैसे हेलिकोवर्पा प्रवासी हैं, इसलिए जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप नए क्षेत्रों में तेजी से विस्तार कर अधिक नुकसान कर सकते हैं। सफेदमक्खी आबादी काफी हद तक तापमान, वर्षा और आर्द्रता जैसे जलवायु कारकों द्वारा नियंत्रित की जाती है। उच्च आर्द्रता वाले उच्च तापमान का इस कीट के जनसंख्या निर्माण के साथ सकारात्मक संबंध है। गर्म और आर्द्र मौसम कीटों के जीवन चक्र को तेजी से पूरा करने में मदद करता है। जलवायु परिवर्तन के कारण कई नये कीटों का उद्भव हुआ है जो पहले स्थानीय रूप से मौजूद नहीं थे। इनका विवरण निम्नवत है:

- **छेदक कीट:** टमाटर की नई समस्या बनकर उभरा है।
- **मक्के की इल्ली:** मक्का और अन्य फसलों के साथ सब्जियों पर भी असर डालता है।

सब्जी फसलों को उनकी वानस्पति संरचना एवं उत्पादन समूह के अनुसार वर्गीकृत किया गया है। विभिन्न वर्गों की सब्जी फसलें जैसे-सोलेनेसी कुल में टमाटर, बैंगन, मिर्च, कद्दूवर्गीय सब्जियों में लौकी, कद्दू, खीरा, क्रूसीफेरी कुल में पत्तागोभी, फूलगोभी, दलहनी कुल में मटर, सेम आदि।

- **जीवन चक्र में बदलाव:** गर्मी और आर्द्रता की स्थिति में परिवर्तन कीटों के जीवन चक्र को कम कर देता है जिससे वे एक मौसम में अधिक पीढ़ियाँ उत्पन्न कर पाते हैं। जैसे टमाटर पिनवर्म पहले केवल 3-4 पीढ़ियाँ देता था, परंतु अब कई क्षेत्रों में इसकी 6-7 पीढ़ियाँ देखी जा रही हैं।
- **वितरण क्षेत्र का विस्तार:** तापमान में वृद्धि के कारण कुछ कीट अब उन क्षेत्रों में भी पनपने लगे हैं जहाँ पहले उनका अस्तित्व नहीं था। जैसे दक्षिण अमेरिका का टमाटर पिन वर्म अब भारत के कई उत्तरी राज्यों में फैल चुका है।
- **कीट-शत्रु संतुलन में बदलाव:** प्राकृतिक शत्रुओं जैसे-परभक्षी और परजीवी कीटों पर जलवायु परिवर्तन का प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है जिससे कीटों का नियंत्रण स्वाभाविक रूप से बाधित होता है।
- **कीटनाशकों की प्रभावशीलता में कमी:** अत्यधिक तापमान और असमय वर्षा के कारण कीटनाशकों का प्रभाव कम हो जाता है और कीटों में प्रतिरोध क्षमता विकसित होने लगती है।

सब्जी फसलों के उपज में 30-80 प्रतिशत तक की हानि संभव, किसानों की आय में गिरावट, कीटनाशकों की लागत में वृद्धि, रोगों का प्रसार कई कीट विषाणु वाहक होते हैं, निर्यात पर प्रभाव विशेषकर जी.ए.पी. वाले देशों में ।

समन्वित कीट प्रबंधन

सस्य क्रियाओं द्वारा कीट प्रबंधन

1. **ग्रीष्मकालीन जुताई:** गर्मी के मौसम में गहरी जुताई

सारिणी-1: फसलों में पाये जाने वाले प्रमुख कीटों

फसलवर्ग	प्रमुख कीट	संभावित क्षति
सोलेनेसी	टमाटर पिनवर्म	पत्तियों व फलों का विनाश
कुकुर्बिटेसी	फलमक्खी, लौकी की छेदक इल्ली	फल सड़न, बाजार मूल्य में गिरावट
क्रूसीफेरी	हीरक पृष्ठ पतंगा, माहू	पत्तियाँ खुरदरी हो जाती हैं, वृद्धि रुक जाती है
लेग्यूमिनोसी	फली छेदक, सफेद मक्खी	फूल व फलियों को नुकसान
सोलेनेसी	मिर्च का काला थ्रिप्स	पत्तियों से रस चूषकर, पत्तियों का मुड़ना, विकास रूकना एवं उपज कम होना।

सारिणी-2: प्रमुख उभरते कीट और उनका आर्थिक प्रभाव

कीट का नाम	फसल	प्रभाव	बढ़ावा देने वाले जलवायु कारक
अमेरिकन पिन छेदक	टमाटर	फल पत्तियों में सुरंग	उच्च तापमान, शुष्क मौसम
कुकुरविटेशी फसलों की पत्ती लपेटक	लौकी, परवल	पत्तियों को मोड़कर खाता	गर्म और आर्द्र वातावरण
हीरक पृष्ठ पतंगा	गोभी	पत्तियाँ खुरदरी, विकृति	नमी और मध्यम तापमान
सफेद मक्खी	सब्जियों में सामान्य	वायरस का वाहक	गर्म, शुष्क मौसम

करके सुषुप्ता अवस्था में पड़े कीड़ों को नष्ट करना एक प्रभावी नियंत्रण विधि है। फसल की कटाई के बाद खेत की गहरी जुताई करके फल मक्खी, कद्दू का लाल भृंग तथा कटुआ कीट के जीवन चक्र को नष्ट कर उनकी सक्रियता को कम किया जा सकता है।

2. अन्तः फसलीकरण: सब्जियों की फसल के बीच में अन्तः फसलीकरण की क्रिया के द्वारा भी कीटों के प्रकोप को कम किया जा सकता है। अन्तः फसलीकरण में लगाये गये भिन्न-भिन्न प्रकृति के पौधों द्वारा छोड़े जाने वाले जैव रसायन से कीटों के प्रौढ़ दूर भागते हैं तथा उनके द्वारा अंडा देने की क्रिया भी कम हो जाती है। इस प्रकार के पौध रोपण प्रक्रिया से परभक्षी एवं परजीवी कीटों की क्रियाशीलता को बढ़ाती है। टमाटर एवं गोभी की अन्तः फसलीकरण से इन दोनों सब्जियों में कीट अकेले की अपेक्षा कम लगते हैं।

3. फसल चक्र अपनाकर कीट नियंत्रण: किसी भी खेत में सब्जियों को लगाते समय उचित फसल-चक्र अपनाना चाहिए जिससे एक ही कुल की सब्जी को पुनः नहीं लगाना चाहिए। सब्जियों की बुवाई व रोपाई के समय में परिवर्तन कर लाल भृंग कीट, फल मक्खी, तना एवं फल छेदक कीट के प्रकोप को कम किया जा सकता है। पौधों की बुवाई व रोपाई ऐसे समय में करना चाहिए, जब पौधों की नाजुक अवस्थायें एवं हानिकारक कीटों की निष्क्रिय अवस्थायें समानान्तर हो।

4. अवरोधी एवं सहनशील किस्मों का उपयोग: किसी क्षेत्र के नाशीकीट एवं मित्र कीटों की विविधता एवं सघनता के आधार पर अवरोधी या सहनशील किस्मों का चुनाव समन्वित कीट प्रबंधन की महत्वपूर्ण कड़ी है।

5. कीटों को आकर्षित करने वाली फसलों की बुवाई: गोभीवर्गीय फसलों को हरी सूड़ी एवं पर्ण जालक कीट के नियंत्रण के लिए सरसों तथा टमाटर में लगने वाली फल छेदक कीट के रोक-थाम के लिए गेंदे के फसल को आकर्षक फसल के रूप में प्रयोग करना चाहिए।

6. यांत्रिक विधि से कीटों का नियंत्रण: कुछ कीट जिनको आसानी से देख जा सके उन्हें पकड़कर मार देना चाहिए। हड्डा बीटल, तम्बाकू की सूंड़ी के अंडे तथा तना व फल को भेदकर खाने वाली सूंड़ी (बैंगन व भिण्डी के फल छेदक कीट) को बहुत आसानी से देखकर कीट की विभिन्न अवस्थाओं को नष्ट कर देने से इनसे होने वाली क्षति से बचा जा सकता है। कीट नियंत्रण की इस विधि में लागत कम आती है एवं यह विधि सुरक्षित भी है।

7. सब्जी में जैविक विधि से कीट नियंत्रण: बहुत सारे परभक्षी व परजीवी कीट प्राकृतिक दशा में मित्र कीट के रूप में पाये जाते हैं जो हानिकारक कीटों के विभिन्न अवस्थाओं को क्षति पहुंचाते हैं। एक हेक्टेयर टमाटर की फसल को फल छेदक कीट से रोक-थाम के लिए 250000 ट्राइकोग्रामा परजीवी कीट का प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार क्राइसोपरला कारनिया नामक परभक्षी कीट को 50000 प्रति हेक्टेयर की दर से दस दिनों के अन्तराल पर तीन बार छोड़ें से सफेद मक्खी, हरा फुदका, माहू आदि से फसल को सुरक्षित रखा जा सकता है। कीटों के प्राकृतिक शत्रु को प्रयोगशाला में अधिक संख्या में उत्पादन कर उसे सफलतापूर्वक आवश्यकतानुसार फसलों पर छोड़कर विषैले रसायनों के उपयोग में कमी लायी जा सकती है। परजीवी और परभक्षी कीटों का संरक्षण, ट्राइकोग्रामा, क्रेसोपारला, ब्यूवेरिया, मेटा रायजीयम जैसे जैव उत्पादों का प्रयोग, फसल विविधीकरण एवं समय परिवर्तन एक ही समय पर एक ही फसल नहीं उगाना, बदलते मौसम के अनुसार फसल चक्र में लचीलापन।

8. व्यवहारिक नियंत्रण: इस विधि के अन्तर्गत प्रौढ़ कीटों को फेरोमोन का प्रयोग कर भ्रमित किया जाता है। सब्जियों में मुख्य रूप से बैंगन का तना व फल बेधक, तम्बाकू की सूंड़ी, टमाटर का फल बेधक, भिण्डी की तना और फल बेधक एवं फल मक्खी को फेरोमोन द्वारा आकर्षित कर नियंत्रण किया जा सकता है।

9. रसायनों का सुरक्षित एवं आवश्यक मात्रा का प्रयोग: विभिन्न कीटनाशियों का अलग-अलग प्रतीक्षाकाल होता है। इसलिये दवा छिड़कने के बाद प्रतिक्षाकाल के बाद फल की तुड़ाई करने से रासायनिक अवयवों के अवशेष नहीं रहते हैं।

'संघर्ष जितना कठिन होगा, जीत उतनी ही शानदार होगी।'

-सुभाष चंद्र बोस

सब्जियों का न्यूनतम प्रसंस्करण

श्रेया पंवार, स्वाति शर्मा, हरे कृष्ण एवं अनंत बहादुर

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

भारत में बागवानी फसलों का कृषि क्षेत्रफल सीमित है, फिर भी यह क्षेत्र भारतीय कृषि जी.डी.पी में लगभग 30 प्रतिशत का महत्वपूर्ण योगदान देता है, तथापि बागवानी फसलों में कटाई के बाद होने वाले नुकसान लगभग 25-40 प्रतिशत दर्ज किए गए हैं, जिसका प्रमुख कारण सब्जियों की कटाई के बाद अपर्याप्त प्रबंधन है। सब्जियाँ अत्यधिक नमी और मुलायम बनावट के कारण शीघ्र नष्ट होने वाले उत्पाद की श्रेणी में आती हैं। वहीं देश में फलों और सब्जियों का प्रसंस्करण हाल ही में लगभग 2.2 प्रतिशत है, क्योंकि भारत अभी भी सब्जी कटाई पश्चात् प्रबंधन से जूझ रहा है। नये नवाचार और न्यूनतम प्रसंस्करण जैसी तकनीक सब्जियों में कटाई-पश्चात होने वाले नुकसान को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। न्यूनतम प्रसंस्करण, प्राथमिक प्रसंस्करण की श्रेणी में एक उभरता हुआ क्षेत्र है जो अधिक सुविधा, स्वच्छता और कम श्रम के साथ ताज़ा उत्पाद उपलब्ध कराने पर केंद्रित है। न्यूनतम प्रसंस्करण, खाद्य उद्योग में सबसे तेज़ी से बढ़ते क्षेत्रों में से एक के रूप में उभरा है, क्योंकि उपभोक्ताओं के एक विशिष्ट वर्ग, जिन्हें 'नकदी में समृद्ध, समय में गरीब' माना जाता है, का उदय हुआ है। दूसरी ओर, वैश्वीकरण, बदलती जीवनशैली, आहार संबंधी आदतों, उपभोक्ता जागरूकता, क्रय शक्ति और कार्यबल में लोगों की बढ़ती संख्या को देखते हुए, अतिरिक्त सुविधा और सुरक्षा वाली उच्च मूल्य वाली सब्जियों की मांग में तेजी से वृद्धि हुई है। ऐसे में न्यूनतम प्रसंस्करण जैसी नवीन तकनीकें सब्जियों में कटाई के बाद होने वाले नुकसानों को कम करने में अहम भूमिका निभा सकती हैं। यह तकनीक प्राथमिक प्रसंस्करण की एक उभरती हुई शाखा है जिसका उद्देश्य ताजगी-युक्त उत्पाद प्रदान करना है, जो अधिक सुविधा, स्वच्छता और कम श्रम के साथ ताज़ा उत्पाद उपलब्ध कराने पर केंद्रित है। न्यूनतम प्रसंस्करण के दो मुख्य उद्देश्य होते हैं पहला, सब्जियों को कम से कम प्रक्रिया से गुजरने देना ताकि पोषक गुण, भौतिक-रासायनिक गुण तथा खाद्य सुरक्षा बनी रहे, साथ ही उपभोक्ताओं को अधिक सुविधा मिले। दूसरा उद्देश्य है उत्पाद की बाजार में स्थिरता बनाए रखना ताकि उसका सफल वितरण एवं विपणन सुनिश्चित किया जा सके। न्यूनतम प्रसंस्करण में मुख्यतः धुलाई, कटाई और पैकेजिंग की जाती है जिससे फलों और सब्जियों को रेडी-टू-कुक उत्पादों में परिवर्तित किया जाता है। ये उत्पाद सुपर-मार्केट्स एवं रेस्तरां श्रृंखलाओं में आसानी से उपलब्ध रहते हैं जिससे खाद्य अपव्यय में भी कमी आती है। बदलती जीवनशैली और क्रय शक्ति ने ऐसे व्यावहारिक समाधान की मांग को जन्म दिया है, जो स्वास्थ्यवर्धक और सुविधाजनक हों, साथ ही ताजगी जैसे लाभ भी प्रदान करें। न्यूनतम रूप से प्रसंस्कृत कटे हुए उत्पादों में दो प्रमुख समस्याएं देखी जाती हैं एंजाइमिक ब्राउनिंग और सूक्ष्मजीव जन्य सुरक्षा। ब्राउनिंग के लिए चार घटक आवश्यक होते हैंः ऑक्सीजन, एंजाइम, तांबा और सब्सट्रेट। इसलिए, किसी एक घटक को निष्क्रिय करने के लिए विभिन्न हस्तक्षेप अपनाए जाते हैं। यद्यपि सल्फाइट्स प्रभावी ब्राउनिंग अवरोधक होते हैं, परंतु इनकी सुरक्षा को लेकर चिंता के कारण इनका प्रयोग अनुशंसित नहीं है। इसके स्थान पर सिट्रिक एसिड, एस्कॉर्बिक एसिड तथा एथिलीन डायमीन टेट्राऐसिटिक एसिड जैसे यौगिकों का उपयोग किया जा रहा है। थर्मल विधियाँ पारंपरिक हैं, जिनका सिद्धांत यह है कि सूक्ष्मजीवों का निष्क्रियकरण तापमान और तापकाल पर निर्भर करता है। कोटिंग तकनीक एक अन्य हस्तक्षेप है, जो नमी, ऑक्सीजन प्रवेश, एथिलीन उत्पादन तथा वाष्पशील यौगिकों की हानि को कम करती है। काइटोसन कोटिंग विशेष रूप से प्रभावी पाई गई है। यह एक जैव बहुलक है जिसे यू.एस.एफ.डी.ए द्वारा 'सामान्यतः सुरक्षित के रूप में मान्यता प्राप्त' (जी.आर.ए.एस.) का दर्जा प्राप्त है। यह कोटिंग ऊतक की रोग प्रतिरोधक प्रतिक्रिया को प्रेरित कर कार्य करती है। हाल के वर्षों में गैर-अवशिष्ट भौतिक विधियाँ अधिक लोकप्रिय हो रही हैं, क्योंकि ये पर्यावरण के अनुकूल और उपयोग में सरल हैं। इनमें परा-बैंगनी प्रकाश एक प्रभावी तकनीक है, जो सूक्ष्मजीवों के डी.एनए की प्रतिकृति प्रक्रिया को बाधित करती है और अंततः उनकी मृत्यु का कारण बनती है।

यद्यपि ताजे कटे उत्पाद उपभोक्ताओं को सुविधा प्रदान करते हैं, परंतु कटाई की प्रक्रिया सब्जी की कोशिकाओं को बाह्य वातावरण के संपर्क में लाकर उत्पाद की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है। इससे सूक्ष्मजीवजन्य संदूषण, चयापचयी गतिविधि, जैव रासायनिक परिवर्तन और जल्दी खराब होने का जोखिम बढ़ जाता है। छीलना, कद्दूकस करना जैसी प्रक्रियाएँ

कोशिकाओं को क्षतिग्रस्त कर देती हैं जिससे ऑक्सीकरण एंजाइम बाहर निकल आते हैं। इन सब्जियों का पी.एच. सामान्यतः 5.8-6.0 के बीच होता है और कटे हुए सतह के साथ उच्च आर्द्रता सूक्ष्मजीवों की वृद्धि के लिए अनुकूल वातावरण उत्पन्न करती है। परिणामस्वरूप, भौतिक, रासायनिक और सूक्ष्मजीवजन्य परिवर्तन इन उत्पादों की रंगत, बनावट, स्वाद एवं शेल्फ लाइफ को प्रभावित करते हैं। इसी कारण, न्यूनतम रूप से प्रसंस्कृत सब्जियाँ सामान्यतः अपरिवर्तित रूप की तुलना में कम शेल्फ लाइफ रखती हैं। सूक्ष्मजीव जन्य स्थिरता उत्पाद की गुणवत्ता निर्धारण में एक महत्वपूर्ण घटक है। 10^7 CFU/g से अधिक सूक्ष्मजीवभार वाले न्यूनतम रूप से प्रसंस्कृत कटे हुए उत्पादों को अस्वीकार्य माना जाता है। इएर्ईंघ के अनुसार न्यूनतम प्रसंस्कृत सब्जियों की सूक्ष्मजीवी स्थिरता के लिए मानक हैं: $m = 10^6$ CFU/g, $M = 10^7$ CFU/g, n = 5 Deewj c = 2।

न्यूनतम प्रसंस्कृत सब्जी फसलों में तापमान में उतार-चढ़ाव सहित तापमान का दुरुपयोग प्रमुख समस्या है, जबकि शीतलन एक महत्वपूर्ण हस्तक्षेप है जो जीवाणुजनित रोगजनकों की वृद्धि को कम करता है क्योंकि वे 10 डिग्री सन्टीग्रेड से अधिक तापमान पर कटी हुई सब्जियों पर फैलते हैं। *क्लोस्ट्रीडियम बोटुलिनम* और *लिस्टेरिया मोनोसाइटोजेन्स* जैसे रोगजनक बैक्टीरिया 3 डिग्री सेन्टीग्रेड से अधिक तापमान पर विष उत्पन्न कर सकते हैं। इस प्रकार, न्यूनतम प्रसंस्कृत सब्जियों में तापमान विनियमन महत्वपूर्ण है और इसे अधिमानतः 2.4 डिग्री सेन्टीग्रेड पर बनाए रखा जाना चाहिए। न्यूनतम प्रसंस्करण एक नवीन प्रौद्योगिकी है जिसकी सफलता की दर एक एकीकृत दृष्टिकोण के रूप में इसके अपनाने पर निर्भर करती है जो न्यूनतम प्रसंस्कृत सब्जियों के कच्चे माल के चयन, हैंडलिंग, प्रसंस्करण, पैकेजिंग, भंडारण और वितरण के महत्व पर भी जोर देती है।

गाजर का न्यूनतम प्रसंस्करण

दूर कहीं रौशनी में मेरी सबसे ऊँची आकांक्षाएँ है। मैं शायद उन तक न पहुँच सकूँ, लेकिन मैं उन्हें जान सकती हूँ और उनका सौंदर्य देखती हूँ, उनमें विश्वास करती हूँ और जहाँ भी वे जाती हैं उनका पीछा करने की कोशिश करती हूँ।

- लौइसा मे अल्काट

अधिक आय के लिए स्वीट कॉर्न एवं बेबी कॉर्न की व्यवसायिक खेती

अभिनय, सुरेन्द्र नारायण सिंह, संदीप कुमार, नीरज सिंह एवं के.के. गौतम

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

मक्के के प्रजातियों में 'बेबी कॉर्न' और 'स्वीट कॉर्न' ज्यादा लोकप्रिय हैं जिससे तैयार अनेकों उत्पाद व्यवसायिक रूप से बाजार में अपना स्थान बना चुके हैं। ये उत्पाद पोषण और व्यावसायिक दृष्टि से अत्यंत लाभकारी हैं। इससे अचार तथा सलाद भी बनाया जाता है। इसकी खेती करके किसान कम समय व कम लागत में अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। स्वीट कॉर्न के एक मध्यम आकार के कॉर्न में लगभग 77-100 कैलोरी, 3 ग्राम प्रोटीन और 15 ग्राम कार्बोहाइड्रेट होते हैं जिसमें लगभग 5 ग्राम शर्करा शामिल है। इसमें थोड़ी मात्रा में विटामिन 'बी', मैग्नीशियम और पोटैशियम भी उपलब्ध होती है। इसके अतिरिक्त, स्वीट कॉर्न ल्यूटिन और ज़ेक्सैंथिन जैसे एंटीऑक्सीडेंट का स्रोत है। बेबी कॉर्न कम कैलोरी वाली सब्ज़ी है जो खाद्य रेशा (फाइबर), विटामिन और खनिजों का अच्छा स्रोत है। इसके 100 ग्राम में लगभग 96 कैलोरी, 3.4 ग्राम प्रोटीन, 21 ग्राम कार्बोहाइड्रेट, 2.4 ग्राम खाद्य रेशा (फाइबर) और 1.5 ग्राम वसा होती है। यह विटामिन 'ए' और 'सी', फोलेट एवं पोटैशियम से भी भरपूर होता है।

खेत में बेबी कॉर्न की कटाई का चरण

बेबी कॉर्न की पैकिंग

प्रमुख किस्में

स्वीट कॉर्न की उन्नतशील किस्में

काशी परी, एच.एम.-4, वी.एल. बेबी कॉर्न -1, एच.क्यू.पी.एम. -1, जी.-5406, जी.-5414

बेबी कॉर्न की उन्नतशील किस्में

माधुरी, शुगर-75, विन ऑरेंज, गोल्डेन हनी, सुपर हनी, पूसा एक्स्ट्रा अर्ली (संकर), मक्का संकर-23 (संकर)।

सस्य क्रियायें

बेबी कार्न एवं स्वीट कार्न गर्म और आर्द्र जलवायु की फसल है। बलुई दोमट या दोमट मिट्टी जिसमें जल निकासी अच्छी हो एवं पी.एच. मान 5.5–7.5 के बीच में हो। अंतिम जुताई के पहले गोबर खाद 8–10 टन/हे., नाइट्रोजन 120 किग्रा., फास्फोरस 60 किग्रा., पोटाश 40 किग्रा. प्रयोग करते हैं। जायद की बुवाई (फरवरी–मार्च), खरीफ (जून–जुलाई), रबी (सितंबर–अक्टूबर)। बुवाई में प्रति हेक्टेयर बीज दर बेबी कॉर्न 20-25 किग्रा. एवं स्वीट कॉर्न 8-10 किग्रा.। बुवाई के पहले बीज को कार्बेन्डाजिम 2.5 ग्राम/किग्रा. की दर से उपचारित करते हैं। बीज की बुवाई पंक्ति से पंक्ति-60 सेमी., पौधे से पौधे-20 सेमी. पर करते हैं।

सिंचाई

पहली सिंचाई बुवाई के तुरंत बाद करें, फिर हर 7–10 दिनों पर। कुल 6–8 सिंचाइयाँ आवश्यक होती हैं।

खर-पतवार प्रबंधन

स्वीट कार्न एवं बेबीकार्न की पहली निराई 20–25 दिनों बाद एवं दूसरी निराई 40–45 दिनों बाद एट्राज़ीन 1.0 किग्रा./हेक्टेयर बुवाई के तुरंत बाद छिड़कें।

रोग एवं कीट नियंत्रण

रोगः स्वीट कार्न एवं बेबीकार्न में झुलसन, मृदुरोमिल आसिता एवं रस्ट रोग प्रकोप होता है

प्रबंधनः स्वीट कार्न एवं बेबीकार्न में मैन्कोजेब 0.2 प्रतिशत का छिड़काव 8-10 दिनों के अन्तराल पर करके इस रोग की रोक-थाम की जाती है।

कीटः स्वीट कार्न एवं बेबीकार्न में तना छेदक तथा फॉल आर्मी वर्म का प्रकोप अत्यधिक देखा जाता है।

प्रबंधनः स्वीट कार्न एवं बेबीकार्न में नीम तेल या क्लोरेंट्रानिलिप्रोल (कोराजन) का छिड़काव (0.4 मिली./लीटर पानी) करके इस कीट का प्रबंधन किया जाता है।

कटाई और उत्पादन

बेबी कॉर्न 50–60 दिनों में परागण के 2–3 दिन बाद तुड़ाई, 10–15 कुन्तल बेबी कॉर्न + 50–60 कुन्तल हरा चारा एवं स्वीट कॉर्न 70–80 दिनों में दूधिया अवस्था में कटाई तथा 15–20 कुन्तल भुट्टा (कोब्स/हे.) प्राप्त होता है।

प्रसंस्करण (प्रोसेसिंग)

स्थानीय बाजार में स्वीट कॉर्न (छिलका उतरा हुआ) को बेचने के लिये छोटे–छोटे पोलिबैग में पैकिंग किया जा सकता है । इसे अधिक समय तक संरक्षित रखने के लिये काँच (शीशा) की पैकिंग सबसे अच्छी होती है। काँच के पैकिंग में 52 प्रतिशत बेबी कॉर्न और 48 प्रतिशत नमक का घोल होता है। बेबी कॉर्न को डिब्बा में बंद करके दूर के बाजार या अन्तर्राष्ट्रीय बाज़ारों में बेचा जा सकता है । डिब्बाबंदी की विधि निम्न फ्लो डाईग्राम में प्रदर्शित हैः

छिलका उतरा हुआ स्वीट कॉर्न -> सफाई करना -> उबालना -> सुखाना -> ग्रेडिंग करना -> डिब्बा में डालना -> नमक का घोल डालना -> वायुरुद्ध करना -> डिब्बा बंद करना -> ठंडा करना -> गुणवत्ता की जाँच करना।

बाजार और लाभ

- फसल विविधिकरण
- किसान भाइयों, ग्रामीण महिलाओं एवं नवयुवकों को रोजगार के अवसर प्रदान करना
- अल्प अवधि में अधिकतम लाभ कमाना
- निर्यात द्वारा विदेशी मुद्रा का अर्जन तथा व्यापार में बढ़ावा
- पशुपालन को बढ़ावा देना
- मानव आहार संसाधन उद्योग (फूड प्रोसेसिंग इंडस्ट्री) को बढ़ावा देना तथा सस्य अन्तराल (इंटक्रोपिंग) द्वारा अधिक आय अर्जित करना

आर्थिक लाभ

एक एकड़ स्वीट कॉर्न को पैदा करने में लगभग 8,000-10,000 रू. खर्च आता है। हरे चारे को मिलाकर कुल आमदनी लगभग 38,000-40,000 रू. / एकड़ होता है । अतः किसान भाइयों को स्वीट कॉर्न के उत्पादन से शुद्ध आमदनी लगभग 30,000 रू. / एकड़ होता है। एक साल में 3-4 स्वीट कॉर्न की फसल ली जा सकती है। इस प्रकार एक वर्ष में एक एकड़ से लगभग 90,000 रू. शुद्ध आमदनी प्राप्त की जा सकती है । अतिरिक्त लाभ लेने के लिये स्वीट कॉर्न के साथ अन्तः फसल ली जा सकती है।

सुझाव

बेबी कार्न में परागकणों के नर फूलों के निकलने से पहले नर पुष्पक्रम को पौधे से हटा देते हैं। यह प्रक्रिया बेबीकार्न की खेती में अत्यन्त आवश्यक होती है। पलवार (मल्चिंग) और ड्रिप सिंचाई से गुणवत्ता और उपज बढ़ेगी। अंतरवर्तीय फसल (जैसे मूँग) से आय और मिट्टी उर्वरता बढ़ती है। जैविक कीटनाशी से लागत घटेगी और उत्पादन शुद्ध रहेगा। बेबी कॉर्न और स्वीट कॉर्न की वैज्ञानिक खेती किसानों के लिए एक लाभकारी और आधुनिक विकल्प है। यदि उचित किस्म, समय और प्रबंधन अपनाया जाए, तो यह फसल आर्थिक दृष्टि से अत्यंत सफल साबित हो सकती है।

बड़ी कामयाबी हासिल करने वाले लोग अपना समय व्यर्थ, जटिल या विनाशाकारी विचारों में उलझकर नष्ट नहीं करते। वे रचनात्मक तरीके से सोचते हैं, क्योंकि वे जानते हैं कि उनके सोचने का तरीका ही उनकी कामयाबी की राह तैयार करेगा।

-सेमौर एप्सटीन

रामनगर जाइण्ट बैंगन की वैज्ञानिक खेती

*मिस्बाह फिरदौस, **शिवराज कुमार वर्मा एवं *आनंद कुमार सिंह

*कृ.वि.सं., काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी, **उ.प्र.कॉ., वाराणसी

बैंगन की प्रचलित स्थानीय किस्म 'रामनगर जाइण्ट' वाराणसी में ज्यादा लोकप्रिय है जिसे ''रामनगरी भंटा'' के नाम से जाना जाता है। गहरे हरे चौड़े पत्ते वाले पौधों में हल्के हरे रंग के बड़े गोल फल लगते हैं जो धीरे-धीरे पीले रंग में बदल जाते हैं। सामान्यतः प्रति पौध 3-4 फल होते हैं जिसके प्रत्येक फल का वजन 0.8-2.5 किग्रा. होता है। स्थानीय लोगों द्वारा उच्च गुणवत्ता के कारण चोखा (भर्ता) तैयार करने के लिए किया जाता है और उपभोक्ता में इसकी अत्यधिक मांग है। फलों का उपयोग खाना पकाने, भूनने, तलने और यहां तक कि बारबेक्यू करने के विभिन्न तरीकों में किया जाता है। वर्तमान में इसकी खेती रामनगर, वाराणसी और चंदौली में 100 हेक्टेयर में की जा रही है। रामनगर इसकी खेती के लिए अत्यधिक उपयुक्त है, 31 मार्च 2023 को जारी किया गया जीआई टैग 3 नवंबर 2030 तक वैध है। रामनगर भंटा स्वाद, गुणवत्ता, चिकनाई, रंग, वजन और आकार के लिए प्रसिद्ध है। इसमें उच्च पोषण मूल्य है और यह विटामिन और खनिजों से भरपूर है। बैंगन का आकार बहुत बड़ा होता है जो कभी-कभी 2.0-2.5 किग्रा. या इससे भी अधिक वजन का हो जाता है। परिपक्वता के समय फल का रंग धीरे-धीरे हरे से पीले रंग में बदल जाता है।

पोषक गुणवत्ताः इसमें आयुर्वेदिक औषधीय गुण हैं जो मधुमेह के रोगियों के लिए अच्छा है और यकृत (लीवर) की शिकायतों से पीड़ित लोगों के लिए एक उत्कृष्ट उपाय है। इसमें कम कैलोरी मान और उच्च पोषक मूल्य होता है यानी प्रोटीन, खाद्य रेशा विटामिन से भरपूर; विटामिन 'ए', विटामिन 'बी1', विटामिन 'बी2' और कैल्शियम और आयरन जैसे खनिज।

बीज एवं नर्सरी प्रबंधनः बीज दर 375-500 ग्राम प्रति हेक्टेयर तक होती है। नर्सरी प्रक्रिया जुलाई-अगस्त और बीजों की रोपाई सितंबर-अक्टूबर में शुरू होती है। बीज को नर्सरी बेड में बोया जाता है और चार सप्ताह के बाद जब बीज 7-10 सेमी. लंबा हो जाता है तो मुख्य खेत में प्रत्यारोपित किया जाता है। पौधों की वृद्धि और खेती के मौसम के आधार पर एक हेक्टेयर के लिए 300-500 ग्राम बीज की आवश्यकता होती है।

मिट्टी की तैयारी और उर्वरक प्रबंधनः मिट्टी को 3-4 जुताई करके भुरभुरा बना लेना चाहिए। अंतिम जुताई के समय खाद को मिट्टी में मिला देना चाहिए। लगभग 6-8 महीने तक पौध वृद्धि पुष्पन एवं फलत होता रहता है, रोपाई से पहले लगभग 25-30 टन अच्छी तरह से विघटित खाद को मिट्टी में मिला दिया जाता है। नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश 100, 80, 60 किग्रा. प्रति हेक्टेयर आमतौर पर लगाया जाता है, नाइट्रोजन की आधी मात्रा नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश पूरी मात्रा रोपाई के समय डाली जाती है जबकि नत्रजन की शेष मात्रा 30 दिनों में मिट्टी की स्थिति के आधार पर दो या तीन बार डाली जा सकती है।

खर-पतवार प्रबंधनः पौध रोपण से पहले 1 किग्रा./हेक्टेयर की दर से पेन्डीमेथालिन शामिल छिड़काव एवं रोपाई के 6 सप्ताह बाद एक हाथ से निराई करना या रोपाई के 3 दिनों बाद 0.5 किग्रा./हेक्टेयर की दर से ऑक्सीफ्लोरफेन का पूर्व-उद्भव प्रयोग और इसके बाद रोपाई के 30 दिनों बाद एक हाथ से निराई करना । पोस्ट क्विज़ालोफॉप-पी-एथिल का 1किग्रा./हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

सिंचाई प्रबंधनः मैदानी इलाकों में गर्मियों के दौरान हर चौथे या पांचवें दिन सिंचाई की आवश्यकता होती है जबकि सर्दियों में यह 10-15 दिनों के अंतराल पर होनी चाहिए। सर्दियों के दौरान, पाले से होने वाली क्षति से फसल को होने वाले नुकसान से बचने के लिए मिट्टी को नम रखने का ध्यान रखना चाहिए।

तुडाई और उपजः रामनगर भंटा के फलों को पूर्ण आकार प्राप्त करने के बाद अपरिपक्व अवस्था में काटा जाता है, लेकिन इसकी चमकदार उपस्थिति खोने से पहले। आमतौर पर, फलों को उनके डंठल सहित हाथ से थोड़ा मोड़कर काटा जाता है। प्रत्येक तुड़ाई में 2-3 फल मिलते हैं। यह लैंडरेस किस्म प्रति हेक्टेयर 200-500 कुंतल तक उत्पादन देती है।

भंडारणः सामान्य परिस्थितियों में फलों को 7-20 डिग्री सेन्टीग्रेड के तापमान पर 85-90 प्रतिशत आर.एच. पर भंडारित किया जा सकता है, फलों को गर्मियों में 1-2 दिन और सर्दियों में 3-4 दिनों के लिए भंडारित किया जा सकता है। इन भंटा फलों को लगभग 10-15 दिनों तक संग्रहीत किया जा सकता है।

मानव आहार में करेला का महत्व

स्वाति शर्मा, श्रेया पंवार एवं अनंत बहादुर
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

करेला एक उष्ण कटिबंधीय लता है। यह बहुत स्वास्थ्य वर्धक होती है किन्तु कडुवा स्वाद के कारण अधिकांश लोगों को पसंद नहीं आती है। इस पौधे में कुल मिलाकर 60 से अधिक फाइटो-औषधियाँ होती हैं जो कैंसर और मधुमेह सहित 30 से अधिक रोगों के विरुद्ध सक्रिय व उपयोगी पाई गई हैं। वर्तमान में, करेले से पृथक किये गए जैव सक्रिय यौगिकों को कार्यात्मक खाद्य और पेय पदार्थों में शामिल करने की दिशा में एक नया क्षितिज खुल रहा है। नैनो एनकैपसुलेशन और नवीन हरित निष्कर्षण विधियों का उपयोग कर निकाले गए यौगिकों की उपज, गुणवत्ता में सुधार लाने और खाद्य उत्पादों में शामिल करते समय उनकी स्थिरता बढाने के लिए शोध किया जा रहा है। प्रस्तुत लेख में करेले के पौधे के पोषण सम्बन्धी पहलुओं, विभिन्न जैव सक्रिय यौगिकों और महत्वपूर्ण न्यूट्रास्युटिकल गुणों पर प्रकाश डालने का एक प्रयास किया गया है। करेला के फलों को एशिया में विभिन्न खाद्य व्यंजनों में उपयोग किया जाता है. हलके कडवे स्वाद के लिए फलों को अन्य सब्जियों के साथ विशेष रूप से पकाया जाता है। हालाँकि भारतीय व्यंजनों में, कड़वाहट कम करने के लिए फलों का उपयोग मुख्य रूप से ब्लांच करके, आधा उबालने या नमक के पानी में भिगोने के बाद किया जाता है। फलों के अलावा, इसकी जड़ों, पत्तियों और लताओं का उपयोग दांत दर्द, दस्त और फोड़े-फुंसियों के लिए एक निवारक के रूप में किया जाता है। इससे तैयार विभिन्न उत्पाद जैसे-सूखे टुकड़ों से बनी चिप्स, पेय पदार्थ स्वास्थ्य वर्धक गुणों के कारण औषधि के रूप में लोकप्रियता हासिल कर रही है। शोधों से यह पता चला है कि करेले में इन्सुलिन जैसा तत्व पाया जाता है, जिसे अक्सर पादप इन्सुलिन कहा जाता है। इसका रक्त और मूत्र में ग्लूकोज की मात्रा कम करने में सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इसमें कोलेस्ट्रोल रोधी, कैंसर रोधी, मनोभ्रंश रोधी, जीवाणु रोधी और कवक रोधी, ऑक्सिकारक रोधी और सूजन रोधी गुण भी पाए जाते हैं। हालाँकि करेला अपने कडवे स्वाद के कारण अक्सर पसंद नहीं किया जाने वाला फल है। इसी कारण इसमें कई प्रमुख पोषक तत्वों का स्रोत होने के बावजूद भी यह अक्सर बच्चों द्वारा नहीं खाया जाता है, जबकि इसमें उच्च खनिज और विटामिन सामग्री के कारण, अन्य कद्दूवर्गीय सब्जियों जैसे-स्क्वैश, कद्दू, खीर और तोरी की तुलना में इसका पोषण मूल्य अधिक होता है। फल विटामिन 'ए', विटामिन 'ई', थायमिन, राइबोफ्लेविन, नियासिन, फोलेट और विटामिन 'सी' जैसे विटामिनों से भरपूर होता है। इसी प्रकार इसमें पोटैशियम, आयरन, कैल्शियम, मैग्नीशियम, फॉस्फोरस और जिन्क भी प्रचुर मात्रा में होता है। इसमें आहारीय फाइबर भी अच्छी मात्रा में होता है। करेले के पौधे के विभिन्न भागों में पाए जाने वाले कुछ जैव यौगिक सारिणी-1 में दिए गए हैं। विटामिन 'सी' इस पौधे में प्रचुर मात्रा में पाए जाने वाले यौगिकों में से एक है. करेले के बीज भी गुणवत्ता वाले प्रोटीन का एक समृद्ध स्रोत हैं और वे छोटी उम्र के बच्चों के लिए ऍफ़एओ/डब्लूएचओ द्वारा निर्धारित एमिनो एसिड आवश्यकताओं को पूरा करते हैं. करेले के बीजों में 35-40 प्रतिशत तेल होता है जिसके फैटी एसिड प्रोफाइल में मोनो अनसैचुरेटेड फैटी एसिड (3.33 प्रतिशत), संतृप्त फैटी एसिड (36.71 प्रतिशत) और पोली अनसैचुरेटेडफैटी एसिड (59.96 प्रतिशत) होते हैं। करेला के बीजों में संयुग्मित अल्फा- लिनोलेनिक एसिड होता है और उनका अच्छे स्रोतों में से एक हैं। करेले के जैव यौगिकों में फेनोलिक, कैरोटीनोइड, करक्यूबीटेन ट्राईटरपेनोइडस, सैपोनिन आदि होते हैं। यही करेले के न्यूट्रास्युटिकल्स गुणों के लिए उत्तरदायी होते हैं, जो पोषण मूल्य में तो बहुत कम योगदान देते हैं।

मधुमेह रोधी क्रियाविधि: मधुमेह एक उपापचयी रोग है जो इन्सुलिन स्राव, क्रिया या दोनों में दोषों के कारण होने वाले हाइपरग्लाइसीमिया से चिन्हित होता है। करेला के फलों का उपयोग एक पारंपरिक औषधि के रूप में प्राचीन काल से वैकल्पिक और पूरक चिकित्सा में मधुमेह के प्रबंधन के लिए किया जाता रहा है। करेले से जुड़े यौगिकों और मधुमेह रोधी क्रिया विधि की पहचान के लिए व्यापक शोध किया गया है।

कैंसर रोधी गुण: पिछले कुछ दशकों में करेले के कैंसर रोधी गुणों को उजागर करने और स्थापित करने के लिए कई प्रारंभिक परिक्षण किये गए हैं। अध्ययनों से पता चला है कि करेले में मौजूद जैव सक्रिय तत्व गर्भाशय कैंसर, यकृत कैंसर, कारसीनोमा, ल्युकेमिया आदि के नियंत्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यद्यपि कार्सिनोमा के विरुद्ध इसकी सक्रियता का पता

लगाने के लिए इन विट्रो और इन विवो में कई परिक्षण किये गए हैं, फिर भी करेले के कैंसर रोधी प्रभावों को स्थापित करने के लिए कैंसर रोगियों पर व्यवस्थित नैदानिक परीक्षणों की आवश्यकता है। स्तन और गर्भाशय ग्रीवा के कैंसर का प्रतिनिधित्व करने वाली कोशिकाओं पर हुए शोध में करेले के अर्क का उपयोग करने से पता चला कि यह प्रभावी है। यह प्रभाव उच्च फेनोलिक्स एसिड की मात्रा की वजह से पाया गया। मानव कैंसर कोशिकाओं में करेले के फलों और बीजों के अर्क के कैंसर रोधी प्रभाव की जांच और तुलना की गई जिनमें फेफड़े का कैंसर, स्तन कैंसर, ल्युकेमिया और टी-कोशिका थी। करेले के फलों और बीजों के इथेनोल और एसीटोन अर्क के साथ संवर्धित किया गया। प्रयोग में एसीटोन और इथेनोलिक बीज और फलों के अर्क में इथेनोलिक सबसे अधिक ट्यूमर-रोधी गतिविधि प्रदर्शित किये।

ऑक्सिकारक रोधी: ऑक्सीडेटिव तनाव, उच्च रक्चाप, मधु मेह, मोटापा आदि सहित विभिन्न जीवन शैली रोगों के विकास का मुख्य कारण है। ऑक्सीडेटीव तनाव के विरुद्ध करेले और इसके विशिष्ट यौगिकों के प्रभाव पर शोध किये जा रहे हैं, जिनमें से अधिकाँश शोधों से पता चलता है कि करेले में संभावित ओक्सीकारक रोधी गुण होते हैं। अन्य कई सब्जियों की तुलना में करेले की ओक्सीकारक रोधी क्षमता अधिक पाई गई है। करेले के पूरे फल के गूदे, अर्क, बीज पाउडर, पत्तियों और तने की ओक्सीकारक रोधी गतिविधि को स्थापित करने के लिए विभिन्न इन विट्रो अध्ययन किये गए हैं। करेले के पोलीसैकेराइड की उचित खुराक खिलाये गए चूहों पर किये गए एक इन विवो अध्ययन से पता चला है कि वे इन विवो में उत्पादित फ्री- रैडीकल्स को हटा सकते हैं. मुक्त कण श्रृंखला प्रतिक्रिया को रोक सकते हैं और ओक्सिकारक रोधी और बुढापे को देरी और रोकने की प्रक्रियाओं में एक निश्चित भूमिका निभा सकते हैं। यह ऑक्सिकारक रोधी और इस प्रक्रिया को संतुलित करने और क्षति से कोशिकाओं की रक्षा करने में सहायक पाया गया है।

मनोभ्रंश रोधी गतिविधि: मस्तिष्क के कई रोगों में कोशिकाओं पर प्रभाव पड़ता है और इससे गलत संचार होने से गति, स्मृति, वाणी और बुद्धि पर अपरिवर्तनीय प्रभाव पड़ता है। ये रोग अधिकांशतः उपचार योग्य नहीं होते हैं और कुछ चयापचय या विषाक्त तनाव के कारण कुछ न्युरोंस के क्रामिक रूप से क्षरण द्वारा होते हैं। तंत्रिका अपक्षीय रोगों के कुछ उदाहरण हैं मनोभ्रंश, पार्किन्संस रोग, मोटर न्यूरोन रोग इत्यादि। मनोभ्रंश शब्द का प्रयोग तंत्रिका अपक्षीय विकारों के एक समूह को दर्शाने के लिए किया जाता है जो मस्तिष्क की स्मृति धारण क्षमता को प्रभावित करते हैं। विभिन्न न्यूरो सुरक्षा प्रभाव देने वाले करेले के पृथक यौगिकों की मनोभ्रंश रोधी गति विधि को स्थापित करने के लिए विभिन्न प्री-क्लिनिकल परीक्षण किये जा रहे हैं। चैरेंटिन एक स्टेरोइडल ग्लाइकोसाइड है जो सिग्मा स्टेरोलग्लूकोसाइड और बीटा साईटोस्टेरोल ग्लूकोसाइड के मिश्रण के रूप में पाया जाता है। स्मृति क्षीणता रोगों के सम्बन्ध में करेले के प्रभाव को स्थापित करने वाले इन विवो अध्ययन कम हैं। हालाँकि चूहों में हुए कुछ शोध कार्यों मे लिपिड परओक्सीडेशन को बाधित करके और मस्तिष्क में एसीटाइलकॉलिन एस्टेरेज़ गतिविधि को कम करने में करेले के अर्क को प्रभावी पाया गया है। व्यवहार सम्बन्धी परीक्षण भी किये गए हैं जिनसे नियंत्रण समूह की तुलना में सभी इथेनोल अर्क उपचारित समूहों में सामान्य कमी देखी गई, जबकि दवा से उपचारित चूहों में स्मृति हानि प्रमुख पाई गई। करेले के पेस्ट की प्रति किग्रा. 5-2000 मिग्रा. की खुराक देकर स्मृतिलोप के विपरीत प्रभावशाली असर देखा गया। एल्जाईमर रोग के विरुद्ध न्यूरो को सुरक्षा देने वाले प्रभाव भी देखे गये।

हाइपोलिपिडेमिक और हाइपोटेंसिव गतिविधि: हाइपरलिपिडेमिया एक ऐसी स्थिति है जिसमें रक्त में लिपिड जैसे-कोलेस्टेरोल और ट्राई ग्लिसराइडस का स्तर असामान्य रूप से बढ़ जाता है, जो मुख्य रूप से हानिकारक भोजन, तनाव, और मोटापे के कारण होता है। इसे ह्रदय रोगों का एक संभावित जोखिम कारक माना जाता है। इसके लिए करेले के जैव सक्रिय यौगिकों की भूमिका का पता लगाने के लिए शोध चल रहे हैं। करेले के रस को हाइपोलिपिडेमिक कारक के रूप में उपयोग करने की संभावना की जांच की गई है। चूहों को उच्च वसा वाला आहार दिया गया और करेले के रस को हाइपोलिपिडेमिक प्रभाव की तुलना एक हाइपोलिपिडेमिक दवा से की गई। करेले का रस पिलाने वाले समूह में सीरम में कुल कोलेस्टेरोल, कम घनत्व वाले लिपोप्रोटीन कोलेस्टेरोल और ट्राईग्लिसराइडस में कमी देखी गई जो दवा के समान थी। सूखे छिलके, गूदे और बीजों के पाउडर के इथेनोलिक अर्क के हाइपोलिपिडेमिक प्रभाव की तुलना की गई और निष्कर्ष मिला कि करेले के बीज, चूहे में किये गए जांच के आधार पर करेले के घटक हाइपोलिपिडिमिया को नियंत्रित करने में सहायक हो सकते हैं। ऐसे ही एक अन्य तुलनात्मक अध्ययन से पता चला कि जब चूहों को करेले के छिलके, गूदे और पूरे फल का पावडर खिलाया गया तो करेले के पूरे फल के पाउडर में

सारिणी-1: करेले में पाए जाने वाले जैव सक्रिय यौगिक

वर्ग	जैव यौगिक	पौधे का भाग
फेनोलिकस	कैटेकिन, एपीकैटेकिन, गैलिक एसिड, जेनटिसिक एसिड, क्लोरोजेनिक एसिड, टैनिक एसिड, टैनिन्स	फल पत्तियां तना
कैरोटीनोइडस	ल्युटीन, अल्फा और बीटा कैरोटीन, जेयासैन्थिन, बीटा क्रिप्टोसैन्थिन, लाईकोपीन	फल और पत्तियाँ
कुकुरबीटेन ट्राई टरपीनोइडस	चैरेंटिन, कुगुआसिंस ए-एस, मोमोरडीसीन घ, घ्घ एवं घ्घ्घ, कैराविलाजेनिन ए, बी सी, डी इ, सैपोनिंस (ट्राई टरपीनोइडस ग्लाइसाईडस), गोयासैपोनिंस, सैपोजेनिंस	फल और पत्तियाँ
फाईटोस्टेरोल्स	डीकोर्नोन, क्लेरोस्टेरोल, एर्गोस्टेरोल परऑक्साइड, स्टिग्मास्टेरोल, कैम्पेस्टेरोल, बीटा सीटोस्टेरोल	फल

हाइपोलिपिडेमिक गतिविधि सबसे ज्यादा पाई गई। उच्च घनत्व वाले लिपोप्रोटीन में भी मामूली वृद्धि देखी गई। करेले के उच्च रक्तचाप रोधी प्रभाव को स्थापित करने के लिए विशेष रूप से अध्ययन किये गए है। करेले में फेनोलिक यौगिकों की मौजूदगी और उच्च रक्तचाप रोधी गतिविधि में वृद्धि के बीच सकारात्मक सम्बन्ध पाये गये हैं। एंजियोटेनसिन परिवर्तित एंजाइम अवरोध गतिविधि की जांच करके उच्च रक्तचाप के खिलाफ करेले के पत्तों के अर्क और इसके अंशों के प्रभाव की जांच की गई। शोध में मिले परिणाम के आधार पर निष्कर्ष मिला कि करेले के पत्तों के 80 प्रतिशत इथेनोलिक अर्क से एंजियोटेंसिन परिवर्तित एंजाइम के खिलाफ उच्चतम अवरोध गतिविधि मिली और उसी अंश ने उच्चतम फ्लेवोनोइड और टैनिन थे।

रोगाणु रोधी और कृमिनाशक गुण: करेला अपनी रोगानुरोधी गतिविधियों के कारण विभिन्न त्वचा और पेट की बीमारियों के लिए प्रभावी औषधि मानी गई है। करेले के पत्तियों का इथेनोल अर्क इ.कोलाई, एस औरीअस, बैसीलस सबटिलीस, स्युडोमोनास, सैलमोनेला टाइफी, क्लबसीएला निमोनिया के प्रसार के विरुद्ध प्रभावी पाया गया है। यह अवरोधक गतिविधि फ्लेवोनोइड, सैपोनिन, टैनिन, एन्थराकुईनोन और टरपीनोइड की उपस्थिति के कारण पाई गई। यह भी पाया गया कि रोगानुरोधी गतिविधि विलायक पर भी निर्भर थी जिसमें एथेनोल अर्क जलीय अर्क की तुलना में बेहतर पाया गया। पीसे हुए करेले के फल और बीज के गूदे के इथेनोलिक अर्क में स्टेफिलोकोकस औरीयस, सैलमोनेला टाइफी, स्यूडोमोनास एरूगीनोसा और एस कोलाई तथा फफूंदजनित पेनीसिलीयम एक्सपैनसम और एस्परजिलस नाइजर के विरुद्ध रोगाणु रोधी क्रियाशीलता पाई गई। करेले के पत्तों के अर्क में एरोमोनास हाईड्रोफिला के विरुद्ध भी सक्रियता पायी गयी है जो ताज़े पानी की मछलियों को प्रभावित करने वाला सबसे आम बैक्टीरिया है।

एनकैपसुलेशण का महत्त्व: एनकैपसुलेशण एक ऐसी तकनीक है जिसमें किसी एक पदार्थ की बाहरी झिल्ली या कोटिंग किसी अन्य पदार्थ पर बनाई जाती है, जिसका उपयोग जैव सक्रिय वाष्पशील और आसानी से विघटित होने वाले यौगिकों को जैव रसायनिक और तापीय क्षरण से बचाने या परिरक्षण के लिए किया जाता है। यह तकनीक करेले के विभिन्न जैव सक्रिय यौगिकों की स्थिरता में सुधार कर सकती है जिन्हें विभिन्न कार्यात्मक खाद्य पदार्थों या पेय पदार्थों में उपयोग किया जा सकता है। जलीय करेले के अर्क को एन्केपसुलेट करने के लिए माल्टोडेक्सट्रिन और गम अरेबिक के साथ छिड़काव ड्राइंग कर निर्जलीकृत किया जा सकता है। करेला स्वास्थ्य की दृष्टि से एक अत्यंत उपयोगी फल है जिसमें पौष्टिक और कार्यात्मक गुण तो होते हैं, लेकिन इसके कड़वे स्वाद के कारण इसका उपयोग सीमित है। कई शोधों ने करेला और पौधे के विभिन्न भागों के जैव सक्रिय यौगिकों की पहचान की है। इन विट्रो और इन विवो अध्ययनों में भी मधुमेह रोधी, कैंसर रोधी, हाईपोकोलेस्ट्रोलेमिक, मनोभ्रंश रोधी जैसे जैव सक्रिय गुणों की व्यापक जाँच की गई है. नैनो कैपसूलीकरण और हरित निष्कर्षण विधियों जैसी विभिन्न नविन तकनीकें करेले से कार्यात्मक खाद्य उत्पादों के रूप में उपयोग की संभावनाओं को बढाती है जिससे मूल्य संवर्धन की संभावनाएं भी बढ़ जाती है। खाद्य और दवा उद्योगों में करेले और इससे पहचाने गए फाईटोकेमीक्लस के अनुप्रयोगों का अभी व्यापक रूप से पता लगाया जाना बाकी है। करेले के सेवन के दीर्घकालिक प्रभावों का अध्ययन नहीं किया गया है और इसके अलावा इनकी जैव सक्रियताएं अधिकांशतः इन विट्रो और इन विवो में साबित हुई हैं। मानव प्रणालियों पर इन गुणों के कुशल और प्रभावी सकारात्मक प्रभावों को जानने के लिए और अधिक परीक्षणों की आवश्यकता है।

भिण्डी की बीज उत्पादन तकनीकी

सौरभ सिंह, प्रदीप कर्मकार, विद्या सागर, बृजेश कुमार मौर्या, *हिमांशु सिंह, राजन सिंह, सुनील कुमार सिंह एवं राघवेन्द्र प्रताप सिंह

भा.कृ.अनु.प.-भा.स.अनु. सं., वाराणसी, *बां.कृ. एवं. प्रौ. वि.वि., बांदा

भिण्डी एक प्रमुख सब्जी फसल है जिसकी अधिकांश खेती (99 प्रतिशत) एशिया और अफ्रीका के विभिन्न विकासशील देशों में की जाती है। विश्व में इसका उत्पादन वर्ष 2030 तक लगभग 9.96 मिलियन टन होने का अनुमान है। भारत भिण्डी उत्पादन में प्रथम स्थान पर है जहाँ पर 0.54 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल से लगभग 7.28 मिलियन टन उत्पादित होती है जो वैश्विक उत्पादन में 72 प्रतिशत का योगदान देता है। इसके प्रमुख उत्पादक राज्य गुजरात, पश्चिम बंगाल, बिहार, मध्य प्रदेश, ओडिशा, छत्तीसगढ़, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु और असम हैं जबकि प्रति हेक्टेयर उत्पादकता में जम्मू और कश्मीर प्रथम स्थान पर हैं, तत्पश्चात् झारखंड और आंध्र प्रदेश का स्थान आता है। विश्व बाजार का लगभग 75 प्रतिशत भारत और 12 प्रतिशत नाइजीरिया से प्राप्त होता है। वर्षा आधारित और सिंचित दशा में उगायी जाने वाली सबसे लोकप्रिय और पोषकीय सब्जी है जिसका उपभोग ताजा, हरे और सूखे के रूप में किया जाता है। भारत दुनिया भर के 20 से अधिक देशों में भिण्डी के बीज का निर्यात करता है। भिण्डी बीज बाजार का 80 प्रतिशत से अधिक हिस्सा भारत में है जो संकर बीज उत्पादन तकनीक के माध्यम से प्राप्त किया जाता है। एक अनुमान के मुताबिक वर्ष 2030 तक भिण्डी की वैश्विक बीज आवश्यकता 300 मिलियन डॉलर के मूल्य के साथ 600 मीट्रिक टन तक पहुँचने की उम्मीद है। उत्तर भारत में इसकी खेती मुख्य रूप से वसंत-ग्रीष्म (मार्च-जून) और खरीफ (जुलाई-सितम्बर) मौसम के दौरान की जाती है जबकि

समशीतोष्ण क्षेत्रों में इसकी खेती गर्मियों के दौरान की जाती है। फलों को अपरिपक्व अवस्था में तोड़ा जाता है और पकाकर सब्जी के रूप में प्रयोग किया जाता है। इसमें विटामिन, कैल्शियम, पोटैशियम और अन्य खनिजों का एक महत्वपूर्ण स्रोत माना जाता है जिनकी अक्सर विकासशील देशों के आहार में कमी होती है और यह जननांग-मूत्र संबंधी विकारों, शुक्राणुजन और पुरानी पेचिश को रोकने के लिये बहुत उपयोगी है। पौधा अधिकतर मजबूत, सीधा/शाखाओं वाला, अच्छी तरह से विकसित मूसला जड़ प्रणाली व वार्षिक जड़ी-बूटी वाला होता है। पुष्पकोश आमतौर पर गैर-लोबदार, नलिका सदृश संरचना होती है जिस पर दलपुंज के साथ 5 बड़ी पंखुड़ियाँ होती है जो एक या दोनों तरफ बैंगनी लाल रंग की होती है। पुष्प आमतौर पर कक्षीय के साथ एकांतरित होते हैं। पहली बार पुष्पन आमतौर पर 5वीं से 7वीं गांठ पर दिखाई देता हैं। बुआई से लेकर फूल आने और फल लगने तक लगभग 40-50 दिन लगता है एवं सामान्यतः 5-6 दिनों में फल खाने योग्य हो जाते हैं।

भिण्डी में संकर बीज उत्पादन

भिण्डी एक पर-परागित फसल है किन्तु स्व-परागण वाली फसलों के लिए अनुकूलित प्रजनन विधियों को विभिन्न प्रकार के किस्मों के विकास के लिये नियोजित किया जा सकता है। आमतौर पर अपनाई जाने वाली विधियाँ पौधे का परिचय, शुद्ध रेखा चयन, प्रतीप संकरण तकनीक का उपयोग करके संकरण, उत्परिवर्तन और बहुगुणिता संकरण इत्यादि है। भारत में वंशावली चयन के बाद अंतरवर्गीय संकरण से व्यापक रूप से खेती की जाने वाली अधिक उपज देने वाली पीली शिरा, मोजैक वायरस (पीतशिरा मोजैक विषाणु) के प्रति सहिष्णु किस्म पूसा सावनी का उत्पादन हुआ। हालाँकि, यह किस्म मैदानी इलाकों जहाँ वाई.वी.एम.वी. के प्रति संवेदनशील हो गई है, लेकिन जहाँ पीतशिरा मोजैक विषाणु का प्रकोप नहीं है वहाँ यह अच्छा प्रदर्शन कर रही है। इसी प्रकार, चयन 2 जो एक अंतरजातीय संकरित किस्म है। पंजाब पद्मिनी, परभणी क्रांति, पी-7, अर्का अनामिका और अर्का अभय के विकास में अंतरविशिष्ट संकरण का पालन किया गया है।

संकर बीज उत्पादन का विस्तार

भिण्डी में अंतर-किस्मीय संकर, हाल ही में उपयोग में लायी गयी है। भिण्डी के एक संकर पौध मे निम्नलिखित विशेषतायें होनी चाहिए, शाखाएँ ऊपर की ओर व सीधी हो, फल देने वाली गांठों की संख्या अधिक हो, पहले फलने वाली गांठ नीचे की ओर स्थित हो, गहरी लोब वाली पत्तियाँ, जल्दी उगने व गहरे हरे रंग का फल हो तथा महत्वपूर्ण कीट व बीमारियों के प्रति सहनशील हो। हेटरोसिस प्रजनन के माध्यम से उपज में 50-70 प्रतिशत तक सुधार पाया गया है और इनके फलों की संख्या, पौधे की ऊँचाई, फलों का वजन व आकार तथा उपज में योगदान देने वाली सबसे प्रभावी कारक माना गया है, तत्पश्चात् प्रतिरोधी संकरों के माध्यम से उपज में सुधार करना और प्रतिकूल परिस्थितियों में इसकी स्थिरता सुनिश्चित करना हेटेरोसिस प्रजनन का प्रमुख उद्देश्य है। रूपात्मक या जैव रसायनिक (शर्करा, फिनॉल, एल्कैलायड और फाइटोएलेक्सिन) प्रक्रियाओं के माध्यम से एक या एक से अधिक कीटों (जैसिड, माहूँ और प्ररोह व फल छेदक कीट) व रोगों (पीत शिरा मोजैक, पत्ती सिकुड़न रोग आदि) के प्रतिरोध का संयोजन संकरण के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण विषय-वस्तु होती है। इनके कई जैविक तनावों का प्रकोप होता है जो फल उत्पादन में गंभीर समस्यायें उत्पन्न करती है। जैसे- रोग (पीतशिरा मोजैक विषाणु व भिण्डी पर्णकुंचन विषाणु, पत्ती धब्बा आदि) और कीट (जैसिड, सफेद मक्खी, प्ररोह और फल छेदक आदि) प्रमुख है। इनमें पीत शिरा मोजैक और पर्ण कुंचन वायरस बहुत गंभीर हैं जो उपज में 50-90 प्रतिशत तक नुकसान पहुँचाते हैं। भिण्डी में नपुंसक की समस्याओं के कारण उसके जंगली से प्रतिरोधों के स्थानांतरण में बाधा होती है। भिण्डी के सुधार में *ए. कैली* और *ए. टेट्राफ़ायलस* का उपयोग किया जाता है। एफ1 संकरण में कुछ अंकुरण बीज पैदा किये गये और प्रतीप संकरण की एक श्रृंखला के माध्यम से क्रमशः *ए. कैली* और *ए. टेट्राफ़ायलस* से भिण्डी की परंपरागत किस्मों जैसे-परभनी क्रांति और अर्का अनामिका में एक लक्षण रहित वाहक प्रकार जो पित्तशिरा मोजैक विषाणु के प्रति सहनशीलता हो का स्थानांतरण सम्भव हुआ। भिण्डी में उन्नत किस्म के नर-मादा प्रजनकों के बीच वंशावली चयन या प्रतीप संकरण के द्वारा संकरण सबसे आम प्रजनन क्रिया है।

संकरण

उभयलिंगी फूल से पुंकेसर को हटाने को विपुंसीकरण कहा जाता है। अगले दिन खुली हुयी कलियों में से मादा प्रजनक को चुना जाता है और हाथ व चिमटी की सहायता से नर प्रजनक अंग को उसके दलपुंज के साथ फूलों से अलग कर दिया जाता है। पर-परागण से बचने के लिए इन विपुंसित कलियों को रूई के फाहों से ढक दिया जाता है। यह कार्य प्रतिदिन अपरान्हन् 3:00-5:00 के बीच किया जाता है। नर जनक से मादा जनक तक परागकणों के स्थानांतरण को परागण कहा जाता है। फूलों के हाथ द्वारा परागण के लिए सुबह में खुली हुयी कलियों से नर जनक का परागकण उपयोग किया जाता है। एक नर फूल का उपयोग 4-10 मादा कलियों को परागित करने के लिये किया जाता है और परागित फूल को परागण के उपरान्त बटर पेपर बैग से ढक दिया जाता है। परागण सुबह 8:00-11:00 बजे के बीच किया जाता है। परागण फूल आने की शुरूआत से 8 सप्ताह की अवधि तक किया जाता है। परागण क्रिया की समाप्ति के बाद दिखाई देने वाली कलियों और फूलों को परागित किये गये फलों के बेहतर विकास की सुविधा के लिए और संकर में स्व-बीजों से बचने के लिये हाथों से हटा दिया जाता है। जब वर्तिकाग्र ग्रहणशीलता और पराग व्यवहार्यता एक आदर्श संयोग बनता है तब सबसे अधिक उत्पादक एवं वांछनीय संकर बीज प्राप्त होता है। संकर बीज उत्पादन में परागण की सफलता दर 30-50 प्रतिशत तक होती है। वर्तिकाग्र पर जल्दी जमा होने वाले पराग गैर-ग्रहणशील वर्तिकाग्र के कारण खराब बीज जमाव का कारण बन सकते हैं और यही स्थिति तब होती है जब पराग वर्तिकाग्र के सूखने और पराग की व्यवहार्यता के नुकसान के कारण वर्तिकाग्र पर बहुत देर से जमा होते हैं। मादा प्रजनक के ग्रहणशील वर्तिकाग्र पर बहुत देर से जमा होने वाले नर परागों की मात्रा भी एफ1 संकर बीज की मात्रा तय करती है। यही कारण है कि भिण्डी के मादा जनक में बीज जमाव व अच्छी वृद्धि प्राप्त करने के लिये परागण का समय और मादा व नर पुष्प के संकरण के बीच के अनुपात को अनुकूलित किया जाना आवश्यक होता है। संकर बीज उत्पादन के लिये मादा और नर जनक को समान्यता 8:1 के अनुपात में लगाया जाता है। किस्मों के लिये कम से कम चार चरण का चयन करते हैं:

1. वानस्पतिक चरण में
2. फूल आने के समय में
3. फूल खिलने और फल लगने की अवस्था में
4. फल पकने की अवस्था में

- **रोगिंग प्रक्रिया:** अवांछित पौधों को हटाना (रोगिंग) पौधों के गुण जैसे- फल का रंग, लकीरों की संख्या और फल की लम्बाई आदि पर आधारित होनी चाहिए। मोजैक से प्रभावित एवं खराब पौधों को खेत से तुरन्त हटा देना चाहिए।

- **फलों की कटाई:** फलों की कटाई फल पूरी तरह के सूख जाने के उपरान्त करना चाहिए और फल सूखने पर भूरे रंग की हो जाती है। उन्हें हाथों से या दराती की सहायता से काट लेनी चाहिए।
- **बीज प्रसंस्करण:** फली की कटाई के बाद फली को सुखाया जाता है और छड़ी से मढ़ाई करते हैं। इसके बाद बीजों को निम्नवत चरणों से रख-रखाव करते हैः

1. बीजों को पौधों के ढ़ेर से अलग किया जाता है।
2. बीजों को 10 प्रतिशत नमी तक धूप में सुखाया जाता है।
3. बीजों को पानी में डालकर उनकी गुणवत्ता को देखते हैं। अच्छे बीज डूब जाते हैं, जबकि खराब बीज तैरते हैं।
4. डूबे हुए बीजों के सुखाकर कैप्टान या थीरम से उपचारित किया जाता है।

बीज उत्पादन के चरण

- **प्रजनक बीज:** इसके द्वारा उत्पादित बीज की गुणवत्ता अधिक होती है।
- **आधार बीज:** यह प्रजनक बीज से उत्पादित शुद्ध बीज है।
- **प्रमाणित बीज:** प्रमाणित बीज का प्रयोग किसानों के लिए करते हैं।
- **दूरी:** आनुवांशिक रूप से शुद्ध बीज के उत्पादन के लिए प्रजनक बीज की दूरी 400 मीटर रखते हैं और प्रमाणित बीज के उत्पादन के लिए 200 मीटर की दूरी पर रख कर बीज की बुआई करना चाहिए।
- **फसल प्रबंधन:** भिण्डी के संकर उत्पादन के लिये प्रजनक बीज के चयन और उनके बीच पर्याप्त आनुवांशिक विविधता महत्वपूर्ण है। मुख्यतः 50 प्रतिशत फूल आने के समय, पौध की ऊँचाई, फली का वजन और प्रति फली बीज की संख्या, भिण्डी संकर उत्पादन के लिए प्रति पौधे पत्तियों की संख्या और 100 बीज वजन का चयन उपयुक्त मानक है।

सही या गलत कुछ भी नहीं है – यह तो सिर्फ सोच का खेल है, पूरी ईमानदारी से जो व्यक्ति अपना जीविकोपार्जन करता है, उससे बढ़कर दूसरा कोई महात्मा नहीं है।

– लिन यूतांग

कलमबंध (ग्राफ़्टेड) टमाटर की खेती

भानु प्रकाश सिंह , मनीष कुमार सिंह, श्वेता सोनी, *हरिओम सिंह एवं अजीत सिंह

बां. कृ. एवं प्रा. वि.वि., बांदा, *सै. हि. कृ., प्रा. और वि.वि.वि., प्रयागराज

सब्जियों में टमाटर की लोकप्रियता से भली-भाँति परिचित है। देश में लगभग 849.0 हजार हेक्टेयर क्षेत्रफल से लगभग 204.5 लाख टन टमाटर उत्पादित किया जाता है। इसके फल से विटामिन 'सी' (16-65 मिग्रा./100 ग्राम), कैरोटीनॉयड्स (1.04- 3.14 मिग्रा./100 ग्राम) लाइकोपीन (0.64-17.18 माइक्रोग्राम/ ग्राम) के साथ ही साथ अन्य पोषक तत्व भी प्रचुर मात्रा में प्राप्त होते है। टमाटर मे लाइकोपीन नामक वर्णक पाया जाता है, जो की एक महत्वपूर्ण प्रतिऑक्सिकारक है। बुंदेलखंड भारत का एक ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है, जो उत्तर प्रदेश के दक्षिणी भाग तथा मध्य प्रदेश के उत्तरी भाग में विस्तृत है। इसकी भौगोलिक सीमायें उत्तर में यमुना नदी, दक्षिण में विंध्य पर्वत श्रृंखला, पश्चिम में सिंध एवं चंबल नदियाँ तथा पूर्व में बघेलखंड का पठार निर्धारित करती हैं। इस क्षेत्र की जलवायु उपोष्णकटिबंधीय है, जिसमें ग्रीष्म ऋतु के दौरान तापमान प्रायः 45 डिग्री सेन्टीग्रेड से अधिक हो जाता है तथा लू का प्रकोप सामान्य है। मानसून प्रायः जून से सितंबर के मध्य सक्रिय रहता है, किंतु वर्षा का वितरण अत्याधिक असमान है। हाल के वर्षों में जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप अनियमित वर्षा एवं तापमान वृद्धि ने न केवल खाद्यान्न उत्पादन, बल्कि सब्जियों की खेती तथा ग्रामीण आजीविका पर भी प्रतिकूल प्रभाव डाला है जिससे क्षेत्र के कृषक गंभीर संकट का सामना कर रहे हैं। इन प्रतिकूल परिस्थितियों में ग्राफ्टिंग तकनीक टमाटर की खेती के लिए संभावित रूप से प्रभावी विकल्प सिद्ध हो सकती है। बुंदेलखंड में पाई जाने वाली टमाटर की जंगली प्रजातियाँ स्थानीय पर्यावरणीय दशाओं के प्रति सहनशीलता प्रदर्शित करती हैं। यदि इन जंगली प्रजातियों का उपयोग मूलवृंत के रूप में तथा उच्च उत्पादकता वाली वाणिज्यिक प्रजातियों का उपयोग प्रांकुर के रूप में किया जाए, तो ग्राफ्टेड टमाटर पौधों का विकास संभव है। इस तकनीक के माध्यम से न केवल टमाटर की उत्पादकता और गुणवत्ता में उल्लेखनीय वृद्धि हो सकती है, बल्कि क्षेत्रीय स्तर पर खेती की स्थिरता एवं किसानों की आय में भी सार्थक सुधार संभव है।

ग्राफ़्टेड पौधेः एक ही परिवार के दो पौधों को जोड़कर एक ग्राफ़्टेड पौध तैयार किया जाता है। जिस पौध को जड़ के रूप में उपयोग किया जाता है उसे मूलवृंत (रूट स्टॉक) तथा जिसे तने के रूप में उपयोग किया जाता है उसे प्रांकुर कहते हैं। टमाटर और बैंगन दोनों के पौधों को रूटस्टॉक के रूप में उपयोग किया जा सकता है।

सामग्री व विधिः सर्वप्रथम रूट स्टॉक एवं साइऑन का चयन किया जाता है। चयनित फसलों अथवा किस्मों की बुवाई जुलाई के अंतिम सप्ताह में मिट्टी, रेत, वर्मीकम्पोस्ट और कोकोपीट (2:1:1:1) के मिश्रण से भरे हुए 7×9 सेमी.× आकार के छोटे प्लास्टिक के गिलासों में 1.5-2.0 सेमी. गहराई पर की जाती है। इसके एक सप्ताह के बाद लगभग 50 पौधों की क्षमता वाले छोटे गमलों में सायन के लिए चयनित किस्मों के बीज की बुवाई की जाती है। दोनों पौधों की 25

सारिणी-1: टमाटर के प्रमुख मूलवृंत

क्रमांक	मूलवृंत	विशेषता
1	*सोलनम पिंपिनेलिफोलियम*	जीवाणु जनित उकठा व्याधि के प्रति सहनशील
2	*सोलनम पेनेली*	उकठा व्याधि के प्रति सहनशील
3	*सोलनम चिलेंस*	उकठा व्याधि के प्रति सहनशील
4	*सोलनम चेसमैनिया*	यह भूमि मे उपस्थित नमक के प्रति सहनशील

सारिणी-2: बैंगन के मूलवृंत

क्रमांक	मूलवृंत	विशेषतायें
1	*सोलनम टोरवम*	जैविक एवं अजैविक तनाव के प्रति सहनशील
2	आईसी- 111056	जलभराव के प्रति सहनशील
3	सूर्या	अधिक तापमान के प्रति सहनशील

दिनों तक प्रतिदिन हल्की सिंचाई की जाती है। 4-5 सप्ताह के रूट स्टॉक पर 3-4 सप्ताह के प्रांकुर को प्रत्यारोपित किया जाता है। ग्राफ़्टेड पौधे तैयार करने के लिए स्प्लिस या साइड ग्राफ्टिंग विधि का अनुसरण किया जाता है। इस विधि में रूटस्टॉक एवं सायन दोनों के किनारों पर 45 डिग्री तिरछा कट बनाये जाते हैं जिससे उनका जुड़ाव आसानी से हो सके। अब एक सिलिकॉन ग्राफ्टिंग क्लिप के सहारे उन्हें एक साथ जोड़ दिया जाता है। इसके बाद इन पौधों को यथाशीघ्र उपचार कक्ष में स्थानांतरित कर दिया जाता है। जहाँ अधिकतम तापमान 30 डिग्री सेन्टीग्रेड तथा सापेक्षिक आर्द्रता 80-85 प्रतिशत के बीच बनाये रखा जाता हैं। सामान्यतः 10-12 दिनों में मूलवृंत व प्रांकुर आपस में जुड़ जाते हैं। अब तैयार पौधों को धीरे-धीरे ग्राफ्टिंग कक्ष से खुले वातावरण में अनुकूलन के लिए स्थानांतरित करते हैं। जब ग्राफ़्टेड पौधे खुले वातावरण के अनुकूल हो जाते है, तब उन्हे मुख्य प्रक्षेत्र में रोपित कर दिया जाता हैं।

जलवायु एवं मृदा: टमाटर की खेती लिए 20-24 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान उपयुक्त माना जाता है। प्रायः यह देखा गया है कि यदि तापक्रम 27 डिग्री सेन्टीग्रेड से ऊपर बढ़ता है, तब लाइकोपीन का उत्पादन अपेक्षाकृत कम हो जाता है। खेती के लिए 6-7 पी.एच. मान वाली बलुई दोमट मृदा जिसमें जल निकास की सुविधा हो उपयुक्त मानी जाती है।

खेत की तैयारी: खेत की पहली जुताई मिट्टी पलट हल से इसके बाद आवश्यकतानुसार 2-4 बार आड़ी-तिरछी जुताई हैरो या कल्टीवेटर से करके मृदा भुरभुरी बना लेना चाहिए।

खाद और उर्वरक: खाद और उर्वरक की मात्रा प्रक्षेत्र की उपजाऊ क्षमता पर निर्भर करती है। अतः मृदा जाँच की संस्तुति के अनुसार ही खाद एवं उर्वरकों का उपयोग किया जाना चाहिए। समान्यतया टमाटर की अच्छी उपज हेतु लगभग 20-25 टन सड़ी हुई गोबर की खाद अथवा कम्पोस्ट के साथ 90-100 किग्रा. नत्रजन, 60-70 किग्रा. स्फुर तथा 50-60 किग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर उपयोग किया जाना चाहिए। नत्रजन की एक तिहाई तथा गोबर की खाद/कम्पोस्ट, स्फुर व म्यूरेट ऑफ पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा खेती की तैयारी के समय अन्तिम जुताई से पहले खेत में उपयोग किया जाना चाहिए। नत्रजन की शेष मात्रा को दो बराबर भागों में बाँटकर रोपाई के 25-30 तथा 45-50 दिनों बाद उपयोग किया जाना चाहिए। 25-30 किग्रा./हे. बोरेक्स के उपयोग से टमाटर के फल की गुणवत्ता में सुधार किया जा सकता हैं। यदि जिंक के कमी का लक्षण प्रतीत हो रहा हो तों 5 प्रतिशत जिंक सल्फेट का पर्णीय छिड़काव भी किया जाना चाहिए।

सिंचाई: टमाटर की पौध माँग के आधार पर सिंचाई किये जाने का प्राविधान है। पौध रोपण के समय से लेकर पौधों की सफल स्थापना तक सुबह-शाम हल्की सिंचाई करते हैं। इसके प्रत्येक दो पक्तियों के बाद नाली बनाकर उसमें आवश्यकतानुसार सिंचाई किया जाता हैं। इस फसल में आधुनिक सिंचाई तकनीक यथा टपक सिंचाई बहुत ही लाभप्रद सिद्ध हो रही है। इससे न केवल सिंचाई जल की बचत होती है, अपितु संतुलित नमी से कारण पौधों का स्वास्थ्य भी अच्छा बना रहता है। गर्मी के मौसम में 3-4 दिनों के अंतराल पर वहीं सर्दियों में 10-15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई की जानी चाहिए, सर्दियों मे फलों के पकते समय सिंचाई नहीं करनी चाहिए।

अन्तः सस्य क्रियायें: फसल की अच्छी बढ़वार के लिए निराई-गुड़ाई का विशेष योगदान रहता है। इससे न केवल खर-पतवारों की संख्या घनत्व को कम किया जा सकता है, अपितु पौधों के जड़ क्षेत्र में समुचित वायु संचार भी बनाये रखने में सफल रहते हैं। पौधों के पास मिट्टी चढ़ाते समय इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि मिट्टी मूलवृंत और सायन के जुड़ाव स्थान के नीचे ही रहे अन्यथा सायन से वायुवीय जड़ निकलने से रूट स्टॉक के प्रभाव में कमी आंकलित किया गया है।

फलों की तुड़ाई: टमाटर के फलों की तुड़ाई इसके उपयोग तथा बाजार की दूरी निर्भर करती है। टमाटर की तुड़ाई के विभिन्न अवस्थायें इस प्रकार हैः

सारिणी-3: टमाटर में लगने वाले कीट/ व्याधियाँ एवं उनका प्रबंधन

क्र. सं.	कीट/व्याधि का नाम	कारक	संक्रमण की अवस्था	आर्थिक क्षति का स्तर	संस्तुत रसायन
1	अगेती झुलसा रोग	*अल्टेरनारिया सोलानी*	अगेती झुलसा रोग का संक्रमण पौधों के विकास के किसी भी चरण में पत्ते, फल और तने पर दिखाई दे सकते हैं।	>5 प्रतिशत	एज़ोक्सीस्ट्रोबिन 23 प्रतिशत एस.सी. 1000 मिली./1000 लीटर जल,कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 50 डब्लू. पी. 2.5 ग्राम/750-1000 लीटर जल

2	पिछेती झुलसा रोग	*फाइटोफ्थोरा इन्फेस्टैन्स*	पिछेती झुलसा रोग का संक्रमण पौधों के विकास के किसी भी चरण में पत्ते, फल और तने पर दिखाई दे सकते हैं।	>5 प्रतिशत	एज़ोक्सीस्ट्रोबिन 23प्रतिशत एस.सी.
3	डैम्पिंग ऑफ और जड़ सड़न रोग	*पीथियम अल्टीमेटम, राइजोक्टोमा सोलम तथा फाइटोफ्थोरा पैरासिटिका*	इस रोग का सर्वाधिक संक्रमण पौधशाला में होता है।	>5 प्रतिशत	1000 मिली./1000 लीटर जल,
4	जीवाणु जनित उकठा रोग	*स्यूडोमोनास सोलेनासिरम*		>5 प्रतिशत	कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 50 डब्लू.पी. 2.5 ग्राम/ 750-1000 लीटर जल।
5	पर्ण कुंचन विषाणु	यह विषाणु, सफेद मक्खी से फैलता है		1 निम्फ/ पत्ती	कैप्टान 75 प्रतिशत डब्लू एस से बीजोपचार, 20-30 ग्राम/1 किग्रा. बीज।
6	टमाटर फल छेदक कीट	*हेलिकोवर्पा आर्मिजेरा*	फल आने की अवस्था पर संक्रमण	2 प्रतिशत फल क्षतिग्रस्त	

1. **परिपक्व हराः** पूर्णतया विकसित हरे फलों की तुड़ाई बाजार दूर होने की स्थिति में किया जाता है। इस अवस्था के टमाटर में अपेक्षाकृत अधिक समय तक ताजगी बनी रहती है।
2. **गुलाबी होने की अवस्थाः** स्थानीय बाजार में विक्रय हेतु इस अवस्था पर में टमाटर की तुड़ाई की जाती है।
3. **आधा पकाः** ताजा उपयोग हेतु टमाटर की तुड़ाई इस अवस्था में की जाती है। इस अवस्था के टमाटर का स्वाद सबसे अच्छा होता हैं।
4. **लाल पकाः** बीज उत्पादन के उद्देश्य से इस अवस्था में टमाटर की तुड़ाई की जाती है। इस अवस्था में पोषक तत्व की मात्रा अधिक होती है।
5. **अधिक पका हुआः** इस अवस्था में टमाटर डिब्बाबंदी या रस निकालने के लिए किया जाता है।

उपजः ग्राफ्टेड टमाटर की औसत उपज प्रायः 3.3 किग्रा. प्रति पौध आंकलित की गई है जो सामान्य (नॉन-ग्राफ्टेड) टमाटर की तुलना में लगभग 11.0-32.5 प्रतिशत अधिक है।

पौध सुरक्षा

वर्तमान में भा.कृ.अनु.प -भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी द्वारा टमाटर एवं बैंगन के विभिन्न मूलवृंत (रूटस्टॉक्स) की पहचान की गई है तथा कुछ रूटस्टॉक्स को विकसित भी किया गया है। इन रूटस्टॉक्स पर टमाटर की विभिन्न किस्मों को ग्राफ्ट कर तैयार किये गये पौधों को बुन्देलखण्ड क्षेत्र की टमाटर खेती में सम्मिलित करने से किसानों को मृदा जनित रोग, सूखा सहनशीलता की कमी तथा उत्पादन में गिरावट जैसी प्रमुख समस्याओं से निजात दिलायी जा सकती है। इसके माध्यम से इस क्षेत्र में टमाटर की उपज में उल्लेखनीय वृद्धि संभव है।

आलसी सुखी नहीं हो सकता, निद्रालु ज्ञानी नहीं हो सकता, ममत्व रखने वाला वैराग्यवान नहीं हो सकता और हिंसक दयालु नहीं हो सकता ।

– भगवान महावीर

गतांक से आगे.....

हिन्दी : विज्ञान और तकनीक की संचारक भाषा

आत्मानंद त्रिपाठी

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

14 सितम्बर 1949 को संघ की राजभाषा (राष्ट्र भाषा) के रूप में हिंदी एवं अनुच्छेद 343 के अन्तर्गत लिपि के रूप में देवनागरी को संविधान सभा द्वारा स्वीकार किया गया। हिन्दी को संविधान में राजभाषा एवं देवनागरी को राजलिपि के रूप में स्थान दिलाने में राजर्षि टण्डन जी का अमिट योगदान रहा है। इन्हें राष्ट्रीयता की भक्ति ने हिन्दी की ओर आकर्षित किया। सन् 1910 में राजर्षि ने हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रथम अधिवेशन की अध्यक्षता किया था। टण्डन जी के प्रतिभाशाली व्यक्तित्व के लिये उन्हे राजर्षि की विभूति से और सन् 1961 में 'भारत रत्न' से सम्मानित किया गया। अपनी भाषा में अभिव्यक्ति आसान व प्रभावी होती है। अपनी भाषा को अपनाने से दैनिक व संवैधानिक दायित्वों का निर्वहन करना आसान हो जाता है। भाषा मानव संस्कृति का आधार है। हमारे देश की राजभाषा हिन्दी है, अतः हिन्दी में ज्ञान-विज्ञान का लेखन कर विज्ञान और तकनीकी को जनमानस तक पहुँचाने के दायित्व को पूर्ण करने का प्रयास करना चाहिये। हिन्दी विश्व की तीसरी सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा है। इस परिदृश्य में विज्ञान व तकनीकी के संचार में योगदान देने वाली हिन्दी भाषा में प्रकाशित विभिन्न पत्रिकाओं का अध्ययन करना आवश्यक है जिसमें हिन्दी की विज्ञान पत्रिकाओं के समक्ष आने वाली चुनौतियों को जाना जा सके एवं उनकी समस्याओं का समाधान निकाला जा सके। विज्ञान-संचार एक वैज्ञानिक-सामाजिक उत्तरदायित्व है। राजभाषा में विज्ञान-संचार के प्रोत्साहन हेतु देशव्यापी कार्यक्रमों व पुरस्कार योजनाओं का शुभारम्भ किया गया है। हमारे संविधान में आधारभूत दायित्वों के अन्तर्गत नागरिकों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करने का प्रावधान है जिससे देश में विज्ञान को लोकप्रिय बनाने हेतु लोगों में जागरूकता लाई जा सके।

हम लोग सन् 1953 से हिंदी दिवस मनाते आ रहे है पर व्यवहारिक रूप से हिंदी वहीं की वहीं रह गयी। संविधान के अनुच्छेद 6 में वर्णित भाषाओं में से हिंदी 40 प्रतिशत जनमानस द्वारा बोली जाती है। हिंदी राजभाषा है, राजसत्ता की भाषा नहीं है। यह सरलता व सहजता की भाषा है जो इसे सूचना प्रौद्योगिकी व वेब के अनुकूल बनाती है। यह जनमानस, ज्ञान-विज्ञान, संविधान, व्यापार व बाजार एवं सभी मातृभाषाओं को साथ लेकर चलने वाली भाषा है। जब तक हिन्दी को कार्यालय एवं अनुवाद की भाषा की अवधारणा के रूप में मानेंगे तब तक हिंदी की दशा यही रहेगी। आजादी के अमृत महोत्सव के वर्ष में वीर नरमद की भूमि सूरत (गुजरात) में द्वितीय राजभाषा हिन्दी सम्मेलन-2 का आयोजन वर्ष 2022 में किया गया। यह सम्मेलन संकल्प लेने की अभ्यर्थना थी जो राजभाषा का विकास करेगा। शासन, प्रशासन, अनुसंधान, शिक्षा में स्वभाषा का प्रयोग होने पर ही जनमानस को लाभ मिलेगा। वीर नरमद ने अपनी भाषाओं की महत्ता को प्रतिपादित किया था उन्होने स्वप्न देखा था कि इस देश का शासन हिन्दी में चलना चाहिये। हिन्दी आम जन की भाषा है, राष्ट्र की भाषा है, हमारे मन की भाषा है। महात्मा गाँधी जी ने कहा था 'राष्ट्रभाषा हिन्दी के बिना राष्ट्र गूँगा है''। यदि मुझे अकेला छोड़ दिया जाये तो मैं सूत कातने और राजभाषा को समृद्ध करने का काम करूँगा।

लोकमान्य तिलक ने कहा था कि ''स्वराज मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है।'' स्वराज में शासन, सत्ता परिवर्तन के साथ-साथ, स्वभाषा, स्वधर्म के लिये भी परिकल्पना की। आज चिकित्सा विज्ञान, अभियांत्रिकी व कृषि विज्ञान की पढ़ाई का पाठयक्रम और विषय सामग्री भी हिन्दी में तैयार की जा रही है। जो देश स्वभाषा को खो देते हैं वो अपनी मौलिकता को खो देते हैं। अतः मौलिक चिन्तन हेतु घर एवं समाज में स्वभाषा में बात करें। हिन्दी राजभाषा सभी भाषाओं की सखी है। जनभाषा से ही आर्थिक उन्नति एवं बदलाव संभव हो सकता है। दयानन्द, टैगोर, मालवीय जी, आचार्य केशव, वीर सरवरकर, सी. राजगोपालचारी, लाला लाजपतराय आदि ने हिन्दी में ही कार्य करने की बात कहते थे। भाषा की समृद्धि ही स्वतंत्रता का बीज है। देश का शासन भाषा से ही बदला जा सकता है। आर्य समाज के संस्थापक दयानंद सरस्वती ने वेदों के ज्ञान को जनसंचारी बनाने हेतु 'सत्यार्थ प्रकाश' की रचना हिन्दी में ही किया था। भारत के गृहमंत्री माननीय श्री अमित शाह जी ने 'हिन्दी शब्द सिंधु' नामक वृहद् शब्दकोष का विमोचन किया है। यह शब्दकोष भारतीय भाषाओं को एक साथ वट वृक्ष के रूप में प्रस्तुत करने का आरम्भ है। इसके अलावा स्वदेशी साफ्टवेयर, कण्ठस्थ 2.0 का लोकार्पण किया गया। यह

विश्वस्तरीय अनुवादक टूल है जो राजभाषा को डिजिटल एवं खोजपरक बनाने में सहायक होगा।

विज्ञान से दुनिया की व्याख्या होती है। प्रो. मेघनाद साहा ने कहा था कि विज्ञान मानव का सेवक है अर्थात् विज्ञान को मानवता की सेवा और देश के आर्थिक विकास के लिये काम में आना चाहिये। हमें अपने शोध को जनमानस की भाषा में व्यक्त करना चाहिये नहीं तो वह औपचारिक शोध और विज्ञान का सेवक बनकर रह जायेगा। सूचना प्रौद्योगिकी के इस युग में परिवर्तन की चाल इतनी तेज है कि हमारी कल्पना शक्ति भी उसके साथ नही चल सकती। आज के कागज, कलम रहित स्पर्श युग में हिन्दी के प्रचार प्रसार के लिये इसे और अधिक आधुनिक बनाने की आवश्यकता है।

हिन्दी की वैज्ञानिक सत्ता

भारतेन्दु जी के शब्दों में 'हिंदी बढ़ेंगी तो सभी भाषायें बढ़ेंगी, निज भाषाओं और मातृ भाषाओं का भी विकास होगा'। वैश्विक शिक्षा पद्धति अंग्रेजी में होने के कारण अंग्रेजी की महत्ता बढ़ती गई। यदि पठन-पाठन की सामग्री हिंदी में उपलब्ध हो जाये तो हिंदी का स्तर ऊँचा हो सकेगा। हिंदी एक भाषा नहीं बल्कि एक संस्कृति है जो सम्पर्क भाषा एवं दायित्वों को निभाने का कार्य करती है। कहा गया है कि पराधीनता में कभी भी सुख की प्राप्ति नही होती है (पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीं), अपने धर्म में रहते हुये मर जाना भी दूसरे के धर्म से कम भयावह व श्रेष्ठ होता है अर्थात् राष्ट्रभाषा में काम करना ही श्रेयस्कर होगा (निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।। बिन निज भाषा के मिटै न हिय को सूल)। जो राष्ट्रप्रेमी है उसे राष्ट्रभाषा प्रेमी होना चाहिये। यह गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने 'हिंदी भवन' की विश्वभारती शांति निकेतन में स्थापना करके दिखाया। पद्म श्री फादर कामिल बुल्के ने रामचरित मानस का अनुवाद अंग्रेजी में किया एवं हिंदी शब्द कोष की रचना किया। प्राध्यापक दाई क्यू ने हिंदी उपन्यास 'गोदान' को जापानी भाषा में अनुवादित किया और सरल हिंदी व्याकरण की रचना किया। विश्व हिंदी सम्मेलन की शुरूआत सन् 1976 में की गई। राष्ट्र संघ में भारत के पूर्व प्रधानमंत्री, भारत रत्न स्वर्गीय अटल बिहारी वाजपेयी जी ने हिंदी में अपना उद्बोधन दिया था '' राष्ट्र संघ के मंच से हिंद की जयकार।। हिन्द हिन्दी में बोला देख स्वभाषा प्रेम'। जापान दुनिया का एक ऐसा देश है जहाँ पर उच्च शिक्षा एवं प्रशासन की भाषा जापानी है। वहाँ पर ज्ञान-विज्ञान की ऐसी व्यवस्था बन गई है जिसमें जापानी भाषा-भाषी एवं सभी नागरिक शामिल हो सकते हैं। विद्यार्थी एवं विद्वान तकनीकी के विकास और विज्ञान की उन्नति में योगदान दे रहे हैं। इसी प्रकार की व्यवस्था यदि हिंदी के साथ भी हो जाये तो देश के सभी नागरिक इसमें शामिल हो सकते हैं।

हीन भावना छोड़कर कर हिंदी में काम।। यह भाषा ही नही। यह हम सब की पहचान। हिन्दी की सत्ता पाने और सत्ता को बनाये रखने में अतीत से लेकर वर्तमान तक गरिमामयी भूमिका रही है। देश को लोकशाही ने देश के जवानों, किसानों, वैज्ञानिकों एवं विज्ञान के प्रति सम्मान एवं गहन आस्था को राजभाषा हिन्दी के माध्यम से समय-समय पर अभिव्यक्त किया है। इसका जीवन्त उदाहरण यहाँ पर वर्णित करना आवश्यक है। वर्ष 1965 में भारत के लाल भारत रत्न श्री लाल बहादुर शास्त्री ने 'जय जवान-जय किसान' का नारा दिया था। वर्ष 1998 में भारतीय राजनीति के भीष्म पितामह भारत रत्न श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने इस नारे में एक नया आयाम 'जय विज्ञान' और वर्ष 2019 में राष्ट्रनायक श्री नरेन्द्र मोदी ने एक और नया आयाम 'जय अनुसंधान' जोड़ दिया। यह हिन्दी भाषा के सत्ता एवं महत्ता की गरिमा को प्रतिपादित करता है। यदि देश में जनमानस तक पहुँचना है तो उनकी भाषा में ही बात करनी होगी और यह भाषा हिन्दी के सिवाय और कोई भाषा नही हो सकती। जिस भाषा में वैज्ञानिक गण अपना शोध पत्र लिखते हैं उसी भाषा में किसानों और हितग्राहियों से बात करें तब उन्हे उनके द्वारा किये गये शोध की अहमियत का ज्ञान हो जायेगा। शोध व तकनीक से देश के नागरिकों व किसानों को लाभ दिलाने के लिये 'विज्ञान लोकसेवारतम्' की परिकल्पना को साकार करने के लिये हिन्दी विज्ञान के प्रभावी संचार की आवश्यकता है। अतीत में जब संसाधनों की कमी थी, तब अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के वैज्ञानिकों में प्रमथनाथ बोस (वर्ष1856-1934), आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र राय (वर्ष1861-1944), आचार्य जगदीशचन्द्र बोस (वर्ष1858-1937), मेघनाथ साहा (वर्ष1893-1956), आशुतोष मुखर्जी (वर्ष1864-1924), प्रशान्त चन्द्र महालनोबिस (वर्ष1893-1972), सुकुमार रे, डा. शान्तिस्वरूप भट्नागर (वर्ष1894-1956), डा. यशपाल (वर्ष1903-1976) ने जनमानस में वैज्ञानिक दृष्टिकोण को पल्लवित व पुष्पित करने के लिये कुशल विज्ञान संचारक के रूप में योगदान दिया था। भारतीय समाज सुधारकों और राष्ट्रीय शिक्षा विदों में गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर (वर्ष1861-1941) द्वारा 'शांतिनिकेतन' की स्थापना एवं वैज्ञानिक लेखन; महात्मा गाँधी जी (वर्ष1869-1948) द्वारा लिखित पुस्तक 'मेरा सत्य के साथ प्रयोग एवं डरबन, दक्षिण अफ्रीका में टालस्टाय फार्म' की स्थापना समगतिशील या टिकाऊ कृषि की दिशा में प्रयास और महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय (वर्ष1961-1946) की सुन्दर बगिया; काशी हिन्दू विश्वविद्यालय'' की स्थापना इनके वैज्ञानिक सोच को इंगित

करते हैं। केवल मशीनों के साथ प्रयोग करना विज्ञान का आधार नही है बल्कि ''वैज्ञानिक सोच'' वैज्ञानिकता का मूल आधार है।

हिन्दी और संगणक विज्ञान

आज हिन्दी केवल साहित्य की भाषा ही नही है बल्कि विज्ञान और तकनीक की भाषा भी बन गयी है। नई शिक्षा नीति-2020 में मातृभाषा में पठन-पाठन का कार्य करने का प्रावधान किया गया। हिन्दी आज चिकित्सा कृषि एवं अभियांत्रिकी की पढ़ाई की मुख्य भाषा के रूप में स्वीकार की जा रही है। कोई भी भाषा बिना तकनीक से जुड़े हुये विश्वव्यापी नही बन सकती है। इस काम को आसान करने के लिये हिन्दी भाषा विदों को वैज्ञानिकों एवं संगणक के शोधकर्ताओं के साथ मिलकर महाकोश (शब्दकोश) का निर्माण करना चाहिये। जिससे संगणक की सहायता से मशीनी अनुवाद को सार्थक बनाया जा सके। तकनीकी रूप से मशीनी अनुवाद में शब्द-शब्द के साथ, वाक्य-वाक्य के साथ सामंजस्य बन सके। यहाँ इस बात को बताना आवश्यक है कि माननीय प्रधानमंत्री जी ने वाराणसी तमिल संगमम् को हिन्दी भाषा में संबोधित किया परन्तु मशीनी रूप ने इसे पूर्णतया तमिल भाषा में अनुवादित करने में सफल रहा। भाषायी कठिनाइयों को दूर करने में संगणक की बहुत बड़ी उपादेयता है। हम हिन्दी के सेवक नही है बल्कि हिन्दी हमारी सेवक है क्योंकि इसके बिना हम राष्ट्रीय स्वाभिमान एवं सांस्कृतिक गौरव को नही बचा पायेगें। संगणक द्वारा हिन्दी के कार्य को आसान बनाने के लिये अनुवाद सार कंठस्थ 2.0 बनाया गया है जिसमें हिन्दी से अंग्रेजी में अनुवाद भी हो सके। हिन्दी भाषा के उत्थान के बिना पुनर्लेखन का कार्य सम्भव नही हो सकता है।

हिन्दी और विज्ञान संचारक

गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने समाज में वैज्ञानिक दृष्टिकोण को उन्नत करने के लिये सफल विज्ञान संचारक का कार्य किया था। एक कवि के रूप में 'गीताजञ्जलि' के लिये उन्हे साहित्य के नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया। गुरूदेव ने भारत, बंग्लादेश एवं श्रीलंका के राष्ट्रगानों की रचना भी किया था। भारत में संगीत की एक नयी विधा 'रवीन्द्र संगीत' की अवधारणा को स्थापित किया था। शिक्षा एवं विज्ञान के प्रसार के लिये उन्होने विश्व प्रसिद्ध विश्वविद्यालय 'शांति निकेतन' की बोलपुर, पश्चिम बंगाल में स्थापना किया था। साहित्य के अलावा विज्ञान के विषयों के अध्ययन के प्रति उनकी गहरी रूचि थी। गुरूदेव ने लड़कियों को शिक्षित करने के लिये दृढ़ संकल्पित थे। उनके विचारों में लड़कियाँ किसी भी देश के निर्माण में अहम् भूमिका निभाती है अतः उनमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण का सृजन करना वैज्ञानिक एवं सामाजिक दायित्व होना चाहिये। गुरूदेव ने 'तत्वबोधिनी'' एवं 'साधना' पत्रिका में विज्ञान एवं वैज्ञानिकता से संबंधित विविध आयामों पर लेखन का कार्य किया। उनके लेखन में सामाजिक उत्थान के लिये 'विज्ञान एवं मानवता के संयोजन'' का अनोखा दृष्टिकोण परिलक्षित होता है। अल्बर्ट आइंस्टीन ने गुरूदेव से कहा था कि बड़ी-बड़ी मशीनों के साथ प्रयोग करना विज्ञान एवं वैज्ञानिकता नही है, बल्कि वैज्ञानिक सोच विज्ञान एवं वैज्ञानिकता का आधार है। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने विज्ञान एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपनी प्रायोगिक पुस्तक 'सत्य के साथ प्रयोग'' में अति रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है। गाँधीजी ने दक्षिण अफ्रीका के डरबन में खेती के लिये 'फोनिक्स एवं टालस्टाय फार्म'' की स्थापना किया था। जिसका मुख्य उद्देश्य ग्रामोत्थान एवं ग्रामअभ्युदय के लिये समगतिशील/टिकाऊ कृषि की स्थापना करना था। गाँधी जी के विचारों में विश्वविद्यालयों में पाठ्यक्रम एवं पठन-पाठन इस प्रकार का है, वहाँ पढ़ने वाले छात्रों में कौशल का सृजन एवं संचार नही हो रहा है जिससे ग्रामअभ्युदय एवं ग्रामोत्थान के अवधारण का सपना साकार हो सके। गाँधी जी स्वच्छता को विज्ञान का आधार एवं भगवान के प्राप्ति की सीढ़ी मानते थे।

भारत रत्न महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय ने धर्म, कला, साहित्य, संगीत एवं विज्ञान के प्रसार हेतु भिक्षा पात्र से सर्वविद्या की राजधानी काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना किया था, जिसका मुख्य उद्देश्य केवल चिकित्सक, अभियंता, संगीतज्ञ, साहित्यकार, वैज्ञानिक, कानून विद एवं राजनेता बनाना ही नही था बल्कि उनमें चरित्र निर्माण करना भी था। इन सभी महान दार्शनिक शिक्षाविदों की मुख्य भूमिका शिक्षा का विकास करना था जिससे देश वैज्ञानिक दृष्टिकोण से सभी क्षेत्रों में आत्मनिर्भर हो सके और सनातन संस्कृति को अपनाते हुये अमर भारत की तीर्थयात्रा में चलता रहे। आधुनिक शिक्षा जगत के निर्माता महामना मालवीय जी का मानना था कि भारत में वैज्ञानिक चेतना का नवजागरण तभी सम्भव है जब वैज्ञानिक ज्ञान भारतीय भाषाओं में उपलब्ध हो। महामना मालवीय जी का कहना था कि भारतीय भाषाओं में हिन्दी सबसे ज्यादा संचारी भाषा है क्योंकि यह अन्य भाषाओं के बीच सेतु का कार्य करती है। अन्य भाषाएँ यदि नदियाँ हैं तो हिन्दी महानदी है। हिन्दी के प्रचार-प्रसार में मालवीय जी का योगदान महान है। गाँधी जी ने महान शिक्षा विद् महामना मालवीय जी के लिये कहा था कि 'उनका हिन्दी प्रचार-क्षेत्र भारतव्यापी है; उनका हिन्दी का ज्ञान उत्कृष्ट है।' महामना मालवीय जी ने हिन्दू विश्वविद्यालय में भारतीय समाज के मूल स्थापत्य वेद

(विज्ञान और तकनीक) और अर्थशास्त्र के हिन्दी में पठन-पाठन और प्राची के प्राचीन एवं प्रतीची के अर्वाचीन (आधुनिक) ज्ञान के एक साथ शिक्षण के लिये विज्ञान और तकनीक महाविद्यालय के स्थापना की अनुशंसा किया। इसके परिणामस्वरूप देश में पहले केन्द्रीय विश्वविद्यालय-काशी हिन्दू विश्वविद्यालय (बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय-बी.एच.यू.) की 4 फरवरी, 1916 को स्थापना की गई। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय लोगों द्वारा, लोगों के लिये स्थापित विश्वविद्यालय है। देश में औद्योगिक क्रांति लाने के लिये महामना ने विश्वविद्यालय में बनारस अभियांत्रिकी महाविद्यालय (बेनको) की स्थापना किया था। भारत रत्न आचार्य चन्द्रशेखर वेंकटरामन ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के 'विस्तार व्याख्यान माला' के आयोजन के उद्घाटन सत्र में कहा था कि हमें विदेशों से प्रेरणा लेने के बजाय अपने देश के अतीत के गरिमामयी ज्ञान-विज्ञान से प्रेरणा लेनी चाहिये। आज की ''नई शिक्षा नीति-2020'' में अपनी-अपनी मातृभाषा में पठन-पाठन की शिक्षा पद्धति महामना के स्वप्नों को साकार करने की दिशा में एक सकारात्मक प्रयास है। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का कुल गीत विश्व प्रसिद्ध रसायन शास्त्री शान्ति स्वरूप भटनागर ने हिन्दी में रचा ''मधुर मनोहर अतीव सुन्दर, यह सर्वविद्या की राजधानी'' जो हिन्दी भाषा की वैज्ञानिकता, सरलता, सहजता को व्यक्त करता है। हिन्दी के प्रति महान शिक्षा विद् महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय के समर्पण भावना से हम सभी देश के नागरिकों को प्रेरणा लेनी चाहिये। कार्यालय और दैनिक जीवन में राजभाषा हिन्दी में और अधिक कार्य कर संवैधानिक, सांविधिक और नैतिक दायित्वों के संकल्पों की सिद्धि प्राप्त करना चाहिये। हमारे संविधान में हमारे कर्तव्यों एवं दायित्वों के अन्तर्गत समाज में वैज्ञानिक दृष्टिकोण संचरण एवं विकास की संकल्पना को परिलक्षित किया है। विज्ञान मानव समाज एवं मानवता की सेवा अर्थात् 'मृत्योर्मामृतंगमय' (मृत्यु से अमरत्व की ओर ले जाने) का मूल आधार है। आज वैज्ञानिक अपने को प्रयोगशालाओं तक सीमित कर रखे हैं। देश के 85 प्रतिशत लोग 'सोशल मीडिया' एवं 60 प्रतिशत लोग 'इण्टरनेट का प्रतिदिन प्रयोग कर रहे हैं। इस 'स्पर्श युग में भी वैज्ञानिक विज्ञान संचारक के रूप् में अपनी भूमिका नहीं निभा पा रहे हैं। इसका कारण समय का अभाव या हिन्दी में संचार कौशल की कमी होना हो सकता है। अतः यह विचारणीय है कि विज्ञान का संचार कौन करेगा?

वर्तमान स्पर्श युग में कोई भी भाषा सूचना और संचार प्रौद्योगिकी के प्रयोग बिना जनसंचारी नही हो सकती है। अतः कम्प्यूटर, ई-मेल, वेबसाइट, अनुवाद टूल, मशीनी अनुवाद, स्मार्ट चैट बोट और वॉयस टाइपिंग आदि के प्रयोग से हिन्दी भाषा को और अधिक सामर्थ्यवान बनाना चाहिये।

दूसरा विश्व हिन्दी सम्मेलन मारीशस की राजधानी के पोर्ट लुईस में हुआ था। इस सम्मेलन में यह निर्णय लिया गया था कि संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्दी भाषी राष्ट्रों के प्रतिनिधि अपना संदेश हिन्दी में व्यक्त करें। यह कार्य इस सदी के राष्ट्रनायक एवं पूर्व प्रधानमंत्री भारत रत्न स्वर्गीय अटल बिहारी वाजपेयी जी ने किया था। सूचना प्रौद्योगिकी के युग में ई-टूल्स जैसे यूनिकोड, हिन्दी की- बोर्ड, लीला स्वयं हिन्दी शिक्षण साफ्टवेयर, श्रुतलेखन, ई-महाशब्दकोश आदि का प्रयोग राजभाषा के कार्यान्वयन व प्रचार-प्रसार में अवश्य करना चाहिये। संघ की राजभाषा नीति के समग्र क्रियान्वयन के लिये हमें हिन्दी में और अधिक कार्य करना चाहिये जिससे हम अपने संवैधानिक दायित्वों का निर्वहन कर सकें। ग्यारहवें विश्व हिन्दी सम्मेलन में यह उद्घोष किया गया कि हिन्दी भाषा का वर्चस्व साहित्य व विज्ञान जगत में बढ़ता जा रहा है। यह जनमानस से प्रभावी संवाद की भाषा है। हिन्दी के सशक्तीकरण हेतु प्रौद्योगिकीय पहलुओं का प्रयोग करना नितान्त आवश्यक है। हमें राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी को उच्चतम स्थान दिलाने के लिये कटिबद्ध होना होगा जिसकी वह अधिकारिणी है। हमें न केवल भारत अपितु पूरे विश्व में हिन्दी भाषा का प्रकाश फैलाने के लिये अपना योगदान देना होगा। शिक्षण के क्षेत्र में राजभाषा हिन्दी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। भाषा के बिना अच्छे शिक्षण की कल्पना सम्भव नही है क्योंकि भाषा अच्छे लेखन की सम्पदा होती है। यदि साहित्य समाज का दर्पण है तो भाषा मानव की संस्कृति है। हमारा देश बहुभाषी है परन्तु राजभाषा हिन्दी जन संप्रेषण के लिये सबसे अधिक प्रभावी माध्यम है। हिन्दी की शैली, सहज एवं स्वीकार्य है जिसे कोई मानक या बंधक रोक नही सकता है। यही हिन्दी को 'वेब-मीडिया' के अनुकूल बनाती है। बेल्जियम में जन्मे पेशे से इंजीनियर पद्मश्री फादर कामिल बुल्के के शब्दों में 'ज्ञान-विज्ञान के किसी भी विषय की सक्षम अभिव्यक्ति हिन्दी में सर्वथा सम्भव है और अंग्रेजी पर आश्रित रहने की धारणा एकदम निरर्थक है'।

हिन्दी और विज्ञान संचार

आजादी के अमृत महोत्सव के उपलक्ष्य में देशभर में 'विज्ञान सर्वत्र पूज्यते' एवं 'अन्नदाता देवो भव'' जैसे अद्वितीय विज्ञान उत्सवों का आयोजन किया गया। भारत भाषायी विविधता वाला देश है। देश में विज्ञान के संचार की मुख्य भाषा अंग्रेजी रही है जिसे हमारे देश का जनमानस न तो समझ पाता और न

ही लिख पाता है अतः राजभाषा में ज्ञान-विज्ञान का संचार अधिक जनसंचारी एवं ज्यादा प्रभावी होगा। भर्तृहरि शतक में लिखा गया है कि ज्ञान की पूजा सर्वत्र होती है। श्रीमद्भगवत् गीता में ज्ञान की महत्ता इस प्रकार प्रतिपादित की गयी है 'ज्ञानेन सदृशं नहि पवित्रमिह विद्यते' (ज्ञान जैसा कुछ भी पवित्र नही है)। हमारा देश दुनिया में ज्ञान की वजह से पूजनीय रहा है। वर्तमान में 21वीं सदी विज्ञान की सदी है। अतः ज्ञान को नवाचार में बदलकर आर्थिक रूप से आत्मनिर्भरता प्राप्त करना अति आवश्यक है। हमारे प्राचीनतम ज्ञान के भण्डार वेद, उपनिषद एवं पुराण है जो संस्कृत में है जबकि हमारे विज्ञान के संचार की भाषा अंग्रेजी है यही कारण है कि वैदिक व देशज ज्ञान को हम जनमानस तक नहीं पहुँचा पा रहे हैं। देश के संविधान के अनुच्छेद-51 ए (एच) में आधारभूत कर्तव्य के रूप में 'वैज्ञानिक चेतना के जागरण' का दायित्त्व समाहित किया गया है। जनमानस में वैज्ञानिक चेतना का जागरण जनभागीदारी एवं जन भाषा से ही संभव है। देश के प्रथम प्रधानमंत्री पण्डित जवाहर लाल नेहरू अपनी पुस्तक 'भारत की खोज' में वैज्ञानिक चेतना व जागरण को जीवन का अभिन्न अंग बताया है। विज्ञान व तकनीकी के प्रसार हेतु दोनों वैज्ञानिक व दार्शनिक दृष्टिकोणों को अपनाना होगा जिससे देश में अकाल, भूखमरी, गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा एवं अंधविश्वासों को दूर किया जा सके। 'विज्ञान सर्वत्र पूज्यते' एक अद्वितीय विज्ञान उत्सव के रूप में मनाया जा रहा है जिससे विज्ञान व तकनीकी ज्ञान को जनमानस तक प्रभावी रूप से पहुँचाया जा सके।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् (भा.कृ.अनु.प.), नई दिल्ली जो देश में शिक्षा, शोध एवं प्रसार कार्यों के लिये मरूधरती से लेकर पूर्वोत्तर तक कृत संकल्पित है, के 'गान' (जय-जय कृषि परिषद भारत की) को राजभाषा हिन्दी में रचा गया है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद हिन्दी में प्रचार प्रसार हेतु कई महत्वपूर्ण गतिविधियों एवं कार्यक्रमों को चला रहा है। परिषद् के सभी संस्थानों द्वारा कृषि शोध के वार्षिक प्रतिवेदन को द्विभाषी प्रकाशन किया जा रहा है। परिषद् के सभी संस्थानों ने अपने वेबसाइट को द्विभाषी बना दिया है जिससे सभी हितग्रहियों को आसानी से आवश्यक जानकारी मिल सके। कृषि, वानिकी, मत्स्यकी, पशुपालन, मधुमक्खी पालन, कुक्कुट पालन हेतु एवं अन्नदाता किसानों की समस्या के समाधान हेतु विस्तार साहित्यों का प्रकाशन भी हिन्दी में कर रहा है। हिन्दी में विज्ञान व कृषि विज्ञान के प्रसार के लिये विज्ञान प्रगति, खेती, फल-फूल, कृषि चयनिका, भारतीय वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान पत्रिका, आविष्कार आदि अनवरत रूप से प्रकाशित की जा रही हैं। हिन्दी भाषा में कृषि विज्ञान से संबन्धित आलेखों के प्रकाशन हेतु खेती (मासिक हिन्दी) एवं फल-फूल (द्विमासिक हिन्दी) नामक पत्रिकाओं एवं हिन्दी में कृषि शोध नामक जर्नल का अनवरत प्रकाशन किया जा रहा है। हिन्दी भाषा में लिखे गये कृषि शोध साहित्यों एवं पुस्तकों को पुरस्कृत करने के लिये कई प्रकार की योजनाएं चालायी जा रही हैं जिससे कृषि से संबंधित विषय वस्तु को वैज्ञानिकों द्वारा हिन्दी में प्रकाशित करने एवं सर्वश्रेष्ठ प्रकाशनों को पुरस्कृत कर लेखकों का मनोबल बढ़ाया जा सके। यदि हम जनमानस की भाषा में विज्ञान संचार को प्राथमिकता दें तो हम लोगों में वैज्ञानिक अवधारणा व वैज्ञानिक दृष्टिकोण को और अधिक प्रभावी बनाने में सफल होंगे। यदि लोकमंगल हेतु परम्परागत ज्ञान पद्धति को हिन्दी के साथ-साथ अन्य सभी स्थानीय भाषाओं में लेखन कर साहित्य के रूप में संकलित कर जनमानस को उपलब्ध कराये तो अपने 'ज्ञान-विज्ञान' की विरासत को आने वाली पीढ़ियों तक आसानी से पहुँचा पायेंगे। ऐसा करने से लोकमंगल की भावना प्रबल होगी ओर मानवता का कल्याण भी होगा। यहाँ पर 'बोस से बासमती'' की कहानी को जानना आवश्यक है सन् 1898 में आचार्य जगदीश चन्द्र बोस ने तार विहीन संचार प्रणाली (टेलीफोन/दूरभाष) की खोज की परन्तु इसका श्रेय मार्कोनी को मिला। दुनिया आज इस आविष्कार का श्रेय मार्कोनी को देती है बच्चे पुस्तकों में मार्कोनी का नाम पढ़ते हैं क्योंकि इस ज्ञान को आचार्य बोस ने 'पेटेण्ट' नही कराया था। इसी प्रकार वर्ष 1998, देश के सुगंधित चावल 'बासमती' का पेटेण्ट अमेरिका ने करा लिया जिसको वापस लाने का श्रेय डा. आर. एस. मशेलकर को जाता है क्योंकि इन्होने 'बासमती' की भारतीय वैज्ञानिकता का आधार संस्कृत साहित्य के माध्यम से सिद्ध किया।

हम नन्हे विज्ञानी है, हम नन्हे विज्ञानी है। पता लगायेंगे वे-सब बातें, जो अब तक अनजानी हैं।

हर रहस्य की जड़ तक जाकर, कारण पता लगायेंगे। क्यों कैसे होती घटनायें, उनकी तह तक जायेंगे।

खुद खोजेंगे, खुद जानेंगे, बस मन में यह ठानी है। हम नन्हे विज्ञानी हैं, हम नन्हे विज्ञानी हैं।

पता लगायेंगे वे सब बातें, जो अब तक अनजानी है। जीवन, वातावरण सभी के,

उनमें छिपे हुये वैज्ञानिक सिद्धान्तों को जानेंगे सभी जगह विज्ञान छिपा है, यह तो बात पुरानी है।

हम नन्हे विज्ञानी है, हम नन्हे विज्ञानी हैं। पता लगायेंगे वे सब बातें, जो अब तक अनजानी है।

(राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस)

देश में विज्ञान व तकनीकी की यात्रा में स्वामी विवेकानंद (सामाजिक कार्य), जमशेद जी टाटा (उद्योग), आचार्य चन्द्रशेख वेंकट रामन (भौतिक विज्ञान), आचार्य जगदीश चन्द्र बोस (भौतिक व पादप विज्ञान), आचार्य प्रफुल चन्द्र राय (रसायन विज्ञान एवं औषधि विज्ञान), गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर (शिक्षा), महामना पण्डित मदन मोहन मालवीय (शिक्षा), आचार्य मेघनाथ साहा (नाभिकीय भौतिक विज्ञान), आचार्य प्रशान्त चन्द्र माहलौबिनिस (सांख्यिकी), डा. शान्ति स्वरूप भटनायर (रसायन विज्ञान) आदि ने वैज्ञानिकता के संचार के लिये परतंत्र भारत में अग्रणी भूमिका निभाई थी। यहाँ पर वैज्ञानिकता से संबंधित एक घटना को उद्धृत कर रहा हूँ। एक बार स्वामी विवेकानंद (वर्ष 1863-1902) एवं जमशेद जी टाटा जहाज से यात्रा कर रहे थे तभी स्वामी जी ने टाटा जी से पूछा कि आप कहाँ जा रहे हैं आपका उद्देश्य क्या है। तब उत्तर देते हुये टाटा जी ने कहा कि मैं स्टील उद्योग जगत को भारत में लाने के लिये जा रहा हूँ यह सुनकर स्वामीजी ने कहा अति उत्तम, बहुत अच्छा आगे कहा कि देश में स्टील बनाने के विज्ञान (धात्विकी) के शिक्षण की आधारशिला भी रखें। इस बात से प्रभावित होकर टाटा जी ने 30 लाख रूपये (आज 2 मिलियन डालर) की धनराशि दान कर वर्ष 1898 में भारतीय विज्ञान संस्थान, बेंग्लुरू की स्थापना में सहयोग किया था। हिन्दी के विज्ञान संचार हेतु अन्य भाषाओं के उपलब्ध वैज्ञानिक ग्रंथों एवं शोध कार्यों को हिन्दी के उपलब्ध कराने की दिशा में कार्य करने की आवश्यकता है। विज्ञान संचार के लिये वैज्ञानिक स्वभाव (वैज्ञानिकता) का होना अति आवश्यक है। आचार्य रमन (वर्ष 1888-1970) ने केवल 250 रूपये के यंत्र से 'रमन प्रभाव' (प्रकाश के प्रकीर्णन पर द्वारा रंग बदलना) की खोज 28 फरवरी, 1928 को किया जिसके लिये उन्हें एशिया में पहले भारतीय के रूप में नोबेल पुरस्कार दिया गया। रामन ने पुरस्कार वितरण समारोह में भाग लिया परन्तु अपने देश का राष्ट्र ध्वज न होने के कारण यह पुरस्कार भारतीय स्वतंत्रता सेनानियों को समर्पित कर दिया था। देश में हरित क्रांति लाने वाले डॉ. एस. एस. स्वामीनाथन ने भी अपनी दृढ़ इच्छा शक्ति से ही वर्ष1968-1978 में किसानों में विज्ञान संचार के माध्यम से गेहूँ उत्पादन में क्रांति लाकर देश को भिक्षा पात्र से खाद्यन्न निर्यातक बनाकर खाद्यान्न सुरक्षा को मजबूत किया। आज जब 21वी. सदी के तकनीकी युग में दुनिया 'कोविड-19' की महामारी से जूझ रही है तब भी देश खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर है। 'वसुधैव कुटुम्बकम' की भावना हमारे ज्ञान का आधार है यही कारण है कि हमारा विज्ञान 'सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु विरामयाः' की अवधारण को सिद्ध करता है। हमारे देश में आचार्य रामन की याद में 28 फरवरी को प्रतिवर्ष राष्ट्रीय विज्ञान दिवस के रूप् में मनाया जाता है जिससे विज्ञान संचार एवं विज्ञान संचारकों को प्रोत्साहित किया जा सके और जनमानस में वैज्ञानिक स्वभाव (साइण्टिफिक टेम्पर) एवं वैज्ञानिकता को बढ़ाया जा सके। कहने का तात्पर्य यह है कि अपनी भाषा में ज्ञान व विज्ञान का संचार करें तो इसका लाभ देश को और अधिक मिलेगा। यहाँ पर परम्परागत ज्ञान पद्धति को हिंदी में संकलित करने का मुख्य उद्देश्य विज्ञान को नवाचार एवं नवाचार को तकनीकी में बदलकर देश को आत्मनिर्भर बनाते हुये 5 ट्रिलियन आर्थिकी वाले विकसित राष्ट्र को बनाने से है।

हमारी किस्मत को बनाना सितारों के बस की बात नही है,
बल्कि हमारे हाथों में है।

-विलियम शेक्सपियर

उपयोगी शब्द कोष

Acute	उग्र, तीव्र
Adaptability	अनुकूलनशीलता
Aestivation	पुष्पदलविन्यास, ग्रीष्मनिष्क्रियता
Agrarian	भूमि संबंधी, कृषि संबंधी
Agro processing	फसल प्रसंस्करण
Agrostology	घास विज्ञान
Antibiotic	प्रतिजैविक, एंटीबायोटिक
Agro type	सस्य प्रारूप
Antidote	प्रतिकारक
Air plant	अधिपादप
Antioxidants	प्रतिऑक्सीकारक
Appetizer	क्षुधावर्धक
Bed	क्यारी
Benefit-cost analysis	लाभ-लागत विश्लेषण
Bio energy	जैव ऊर्जा
Bio agent	जैवकारक
Bio climate	जीव जलवायु
Bionomics	जीव पारिस्थितिकी
Bioreactor	जैव-प्रक्रियापात्र, बायो रिएक्टर
Biosphere	जीव-मंडल
Biotic	जैविक
Biotype	जीव प्रारूप
Catabolism	अपचय
Catalysis	उत्प्रेरण
Caterpillar	इल्ली, सूंडी
Ceiling	सीमा
Cell	कोशिका, कोष्ठिका
Central leader system	केंद्रीय अग्रलेख प्रणाली
Crust	पपड़ी
Centrifugation	अपकेंद्रण
Centrifuge	अपकेंद्रित
Clump	पुंज (क्लंप, संपुंजन)
Create	सृजन करना
Complex	सम्मिश्र, जटिल
Days after flowering	पुष्पन के बाद के दिवस
Deblossoming	निष्पुष्पन
Decant	निथारना, निस्तारना
Dehiscence	स्फुटन
Decay	क्षय
Dehydration	निर्जलीकरण
Deciduous	पर्णपाती
Destining	नियति निर्धारण
Epicotyl grafting	दलपुंज कलमबंदी
Enzyme	प्रकिण्व, एन्जाइम
Essential nutrients	आवश्यक पोषक तत्व
Embanking	मेड़ बंदी, डौलबंदी
Eugenic	सुजननिक
Experiment	प्रयोग
Evapo-transpiration	वाष्पन-वाष्पोत्सर्जन
Evaluation	मूल्यांकन
Fecundation	बहुप्रजनन
Fibrous	रेशेदार
Field demonstration	प्रक्षेत्र प्रदर्शन
Fuzzy	रोएंदार
Germicide	रोगाणुनाशी
Germ plasm	जननद्रव्य, जर्मप्लाज्म
Glutinous	लसदार, ग्लूटिनी
Grading	श्रेणीकरण, वर्गीकरण
Heterosis	संकरओज, हेटेरोसिस
Heterotroph	परपोषित
Hive	करंड, छत्ता
Hybridization	संकरण
In vitro	पात्रे
In vivo	जीवे
Indiscriminate	अविवेकपूर्ण
Insect	कीट
Insect pest	कीट पीड़क
Insectary	कीटालय
Insecticide	कीटनाशी
Insectivorous	कीटाहारी
Insolation	सूर्यतापन, आतपन
Insoluble	अविलेय
Instar (insect)	इन्स्टार (कीट), अंतरानिर्मोकीय अवस्था
Insulator	रोधी
Integrated disease management	समेकित रोग प्रबंधन
Integrated nutrient management	समेकित पोषक तत्व प्रबंधन
Integrated pest management	समेकित पीड़क प्रबंधन
Intensification	सघनता, गहनता
Intensive	गहन, सघन
Inter-sterile	अंतर्बंध्य
Intercrop	बीच की फसल, अंतराफसल
Isolation distance	पृथक्करण दूरी

Jassid	जैसिड/हरा फुदका	Microbes	सूक्ष्म जीव
Jhum cultivation	झूम कृषि	Microbiology	सूक्ष्म जीव विज्ञान
Kernel	गिरी, दाना	Net return	कुल प्रतिफल
Khaira disease	खैरा रोग	Netting	जाली लगाना, जाली से पकड़ना
Lapse rate	ह्रास दर	Neuron	न्यूरॉन, तंत्रिकोशिका
Larva	लार्वा, डिंभक	Neutral	निष्प्रभावी, उदासीन
Lopping	कर्तन	Neutral soil	उदासीन मृदा
Lumber	कटि	Neutralism	उदासीनता
Mineral eyele	खनिज चक्र	Obligate aerobes	अविकल्पी वायुजीव
Moisture stress	नमी प्रतिबल	Obligate anaerobes	अविकल्पी अवायुजीव
Maturation	परिपक्व	Obligate parasite	अविकल्पी परजीवी
Moisture tension	नमी तनाव	Off-type plants	अवांछित पौधे
Mycotoxin	कवकीय विष	Photoreceptor	प्रकाशग्राही
Microscope	सूक्ष्मदर्शी	Phototropism	प्रकाशानुवर्तन
Mycelium	कवक तन्तु	Phyllotaxy	पर्ण विन्यास
Mechanical transmission	यांत्रिक संचरण	Physical weathering	भौतिक अपक्षय
Mite	मकड़ी	Physiological disorder	कार्यिकीय विकार
Multicellular	बहुकोशिकीय	Run-off	अप्रवाह जल
Miticide	मकड़ी नाशक	Runner	उपरी भूस्तारी
Manure	खाद	Rub	रगड़

संकलनकर्ता : **रामेश्वर सिंह**

अभिलाभा मनुष्य के सीने में बसा एक ऐसा शक्तिशाली आवेग है, कि हम चाहे कितने ही ऊँचे उठ जाएँ पर हम कभी भी संतुष्ट नहीं होते।

-हेनरी वर्डस्वर्थ लोंग्फेल्लो

संस्थान की गतिविधियाँ

उद्यमिता विकास कार्यक्रम (06.01.2025)

ए.एन.डी.यू.ए.टी., अयोध्या के छात्रों का संस्थान भ्रमण (07.01.2025)

पूर्वी चम्पारण के किसानों का संस्थान में प्रशिक्षण (08.01.2025)

सब्जियों के प्रसंस्करण एवं निर्यात हेतु आधुनिक प्रजनन प्रशिक्षण (04-13 फरवरी, 2025)

सी.डी.ए.ओ., सबरनापुर, ओडिशा के किसानों का प्रशिक्षण (10-14 फरवरी, 2025)

शीतकालीन स्कूल (18 फरवरी से 10 मार्च, 2025)

सी.डी.ए.ओ., जंगम, ओडिशा के किसानों का प्रशिक्षण (24-28 फरवरी, 2025)

कृषक संगोष्ठी में राजभाषा पत्रिका का विमोचन (28.02.2024)

एस.सी.एस.पी. कार्यक्रम के अंतर्गत प्लास्टिक तिरपाल का वितरण (10 मार्च 2025)

कृषक संगोष्ठी में किसानों का सम्मान (11.03.2025)

मधुमक्खी पालन : प्रशिक्षण (20 मार्च, 2025)

आइ.डी.ए., जयपुर के किसानों का संस्थान भ्रमण (21 मार्च, 2025)

संस्थान के नये निदेशक का स्वागत (07.04.2025)

महिला पोषण सुरक्षा दिवस (08.04.2025)

संस्थान तकनीकी प्रबन्धन समिति की बैठक (16.04.2024)

जेड.टी.एम.यू. बैठक (28.04.2025)

समाचार पत्रों से.....

एक ही पेड़ में टमाटर, बैंगन और आलू लोगों के लिए बने कौतूहल

आगरा के किसानों को काशी में मिला खेती का तकनीकी ज्ञान

मेटाबोलिक गुणों से संपन्न हैं टमाटर की ताप-रोधी किस्में

गुणवत्तायुक्त सब्जी बीज पर फोकस जरूरी

जक्खिनी। भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान शाहंशाहपुर की कृषि व्यापार उद्भवन इकाई की ओर से उद्यमिता विकास कार्यक्रम का आयोजन किया गया। एफपीओ, एफपीसी, स्वयं सहायता समूह आदि के सदस्यों ने इसमें भाग लिया। मुख्य अतिथि संस्थान के निदेशक डॉ. नागेंद्र राय ने कहा कि सब्जी उत्पादन के साथ हमें गुणवत्तायुक्त सब्जी बीज उत्पादन पर भी ध्यान देना जरूरी है। डॉ. अनंत बहादुर, डॉ. राजेश कुमार, डॉ. कौशलेन्द्र कुमार पांडेय, डॉ. नीरज सिंह, डॉ. सुदर्शन मौर्य सहित अन्य ने विचार रखे।

Dainik Jagran

कृषक विज्ञानियों के ज्ञान का लाभ उठाएं : डा. नागेंद्र

राजातालाब : शहंशाहपुर स्थित भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान की कृषि व्यापार उद्भवन इकाई के तत्वाधान में उद्यमिता विकास के लिए कार्यक्रम का आयोजन सोमवार को किया गया। मुख्य अतिथि डा. नागेंद्र राय, निदेशक भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान ने कृषकों से संस्थान के विज्ञानियों के ज्ञान का भरपूर लाभ उठाने का आह्वान किया। कार्यक्रम में काशीराज एग्रो प्रोड्यूसर कंपनी एवं स्वयं सहायता समूह आदि कृषि उद्यमियों ने भाग लिया। डा. अनंत बहादुर, डा. राजेश कुमार, डा. कौशलेंद्र पांडेय, डा. नीरज सिंह, डा. सुदर्शन मौर्य, यशपाल सिंह, प्रमोद सिंह आदि उपस्थित रहे। (संसू)

आत्मनिर्भर बनाने को दिव्यांग महिलाओं को दिया प्रशिक्षण

राजातालाब : आराजीलाइन ब्लाक मुख्यालय स्थित सभागार में सोमवार को खंड विकास अधिकारी सुरेंद्र सिंह यादव की अध्यक्षता में राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन के अंतर्गत दिव्यांग महिलाओं को समूह से जोड़ने के साथ उद्यमिता विकास के कार्यक्रमों का प्रशिक्षण दिया गया। जिससे ये महिलाएं भी उद्यम विकास की गतिविधियों को संचालित कर आत्मनिर्भर हो सकें और अपनी आय बढ़ाने के साथ ही राष्ट्र निर्माण में भी अपना सहयोग दे सकें। बैठक में डीसी एनआरएलएम पवन सिंह, डीएमएम श्रवण कुमार, एडीओ आइएसबी महेंद्र कुमार, डा. महेंद्र सिंह पटेल आदि उपस्थित रहे। (संसू)

भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान में पांच दिनी प्रशिक्षण सम्पन्न

कृषि के जरिए उद्यम विकास के बताए

रबी फसल की सुरक्षा की दी जानकारी

सब्जी की खेती के बारे में दी जानकारी

टमाटर, बैंगन की नवीन किस्मों का प्रदर्शन

भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान में मना तकनीकी प्रचार दिवस

अब एक ही पौधे से लीजिए बैंगन और टमाटर

श्रीअन्न की पर्यावरण व मानव स्वास्थ्य में अहम भूमिका

आइडियल इण्डिया

भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान में तीन दिवसीय वार्षिक समीक्षा बैठक का आयोजन

दलहनी सब्जियों पर टेक्नोलॉजी फील्ड दिवस का आईआईवीआर में आयोजन

वैज्ञानिक तरीके से सब्जी की करें खेती

कृषि संकल्प अभियान की महत्ता बताई

आईआईवीआर में 10 मजदूरों को किया गया सम्मानित

आईआईवीआर व आईसीआईसीआई सहयोग पर विमर्श

खेती के अत्याधुनिक तकनीक को किसानों के खेतों तक ले जाएं विज्ञानी

दैनिक निर्णायक, 16-05-2025, पेज-03

विकसित कृषि संकल्प अभियान - देशभर के 700 से ज्यादा जिलों में एक साथ

वैज्ञानिक खेती कर विकसित करें रोजगार

कृषि विवि बांदा के पूर्व कुलपति ने किसानों से गांव न छोड़ने का किया भावपूर्ण आग्रह

सब्जी फसलों के कीटों व रोगों के प्रबंधन की दी जानकारी

कम लागत में अधिक सब्जी उत्पादन संभव

सब्जी शोध में नवाचारों को लागू करने की हुई सिफारिश

आईआईवीआर में वैज्ञानिक प्रशिक्षण सम्पन्न

सब्जी फसलों में जैव तनाव प्रबंधन हेतु नवाचार पद्धतियाँ

मधुमक्खी पालन से उद्यमिता विकास पर एक दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम सम्पन्न

कीटनाशकों के उपयोग के बारे में किसानों को दी गई जानकारी

भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान में दलहनी सब्जियों के हाइब्रिड तकनीक से आनुवंशिक सुधार पर एकदिवसीय प्रशिक्षण

हरी खाद से बढ़ेगी खेतों की जीवांश

नौ गांवों में कृषि विज्ञानियों ने किसानों से किया सीधा संवाद

कम लागत, अधिक उत्पादन और आय दोगुना करने हेतु विशेषज्ञों ने दी किसानों को सलाह

पगरा प्रसाद गिरी व बरवाराजापाकड़ में हुआ गोष्ठी का आयोजन

खेती में आधुनिक तकनीक के उपयोग से बढ़ेगा उत्पादन

फसलों में कीटनाशकों के छिड़काव के समय सावधानी आवश्यक

खूब कमा...,सरकार इंतजाम कइले बा

अफसरों को किसानों से उनके खेत में ही उनकी भाषा में संपर्क करने का दिया निर्देश

कृषि के आधुनिकीकरण पर हो समेकित प्रयास

...र्वतन को ध्यान में रख कर वैज्ञानिक तरीके से करें खेती

किसानों को बांटे गए कई तरह के कृषि उपकरण

गोरखपुर, 10 अप्रैल, 2025 दैनिक जागरण

गोवि के छात्रों ने कृषि विज्ञान केंद्र का किया भ्रमण

केंद्रीय कृषि राज्य मंत्री पहुँचे वाराणसी

प्याज व सब्जी उत्पादन से आय बढ़ाएं किसान

आपातकाल के लिए माफी मांगे कांग्रेस

किसानों को लाभ पहुंचाने का प्रयास करें वैज्ञानिक

भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान में सब्जियों पर शोध में निजी क्षेत्र की कंपनियों की भागीदारी पर चर्चा

सब्जियों पर शोध में निजी क्षेत्र की कंपनियों की होगी भागीदारी

वाराणसी

फसलों की उन्नत किस्मों को अपनाएं किसान

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

Agrisearch with a human touch

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान

पोस्ट बैग नं. 01 जक्खिनी (शाहंशाहपुर)
वाराणसी– 221 305 (उ.प्र.)
फोन : 91-542-2635236, 2635237, 2635247 फैक्स : 91-5443-229007
ई–मेल : director.iivr@icar.gov.in वेबसाइट : https://iivr.icar.gov.in/

Graphic Arts : 9838106730